आदिकालीन हिंदी गद्य साहित्य पर मौलिक शोध

आदिकाल का हिन्दी गद्य साहित्य

(सं० १०००—१५००)

डॉ० हरीश
एम०ए०, डी०फिल्०





रामा प्रकाशन
नजीराबाद, लखनऊ

समर्पण—

विज्ञान-वेत्ता

शिक्षा-मनीषी, श्रद्धेय

डॉ० डी० एस० कोठारी

अध्यक्ष,

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग

को सादर—

Adikal ka Hindi Gadya Sahitya

by

Dr HARISH

A Book of Research on Ancient Hindi Gadya Literature

Price Rs 8-00

समर्पण—

विज्ञान-वेत्ता

शिक्षा-मनीषी, श्रद्धेय

डॉ० डी० एस० कोठारी

अध्यक्ष,

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग

को सादर—

दो शब्दों से कुछ अधिक

'आदिकाल के अज्ञात हिन्दी रास काव्य' के प्रकाशन के बाद विद्वद् गुरुजनों, स्नेही साथियों और शोध अनुसंधित्सु पाठकों ने यह साधिकार सुझाव दिया कि हिन्दी साहित्य के आदिकाल में गद्य की स्थिति के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार का कार्य कर्तृत्व सामने आये तो इस क्षेत्र में बहुत बड़े अभाव की पूर्ति होगी। आदिकाल में गद्य साहित्य की स्थिति स्पष्ट नहीं है, विद्वानों में इस सम्बन्ध में बहुधा मतभेद रहे हैं। साथ ही गद्य की परम्परा की प्राचीनता को भी लोगों ने स्थिर बुद्धि से स्वीकार नहीं किया है। इन सब तथ्यों को पृष्ठभूमि की प्रेरणास्वरूप स्वीकार किया और इस ओर प्रवृत्त हुआ। सन् १९६९ से ही आदिकाल के हिन्दी गद्य के सम्बन्ध में कार्य करने की जिज्ञासा सुदृढ़ होती गई। आदिकाल का हिन्दी साहित्य' विषय पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अपना शोध कार्य करते हुए गद्य साहित्य की ओर बराबर सचेष्ट रहा और गद्य की सामग्री संकलन का कार्य साथ ही करता गया और इस ओर अनेक नई उपलब्धियाँ हुई। गद्य की विधा की प्राचीनता उधर १० वीं शताब्दी तक बढ़ गई, जबकि अद्यावधि विद्वानों की धारणा १४वीं तथा १५ वीं शताब्दी की ही बनी थी। चौरासी वैष्णवों की वार्ता और दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता ही गद्य की प्राचीनता में आदर्श रूप कहे जाते थे। आज स्थिति ऐसी नहीं है। गद्य के अनेक प्राचीन उदाहरण हस्तलिखित प्रतियों और प्राचीन ग्रन्थों में अज्ञात रहे तथा दबे पड़े रहे।

'आदिकाल का हिन्दी गद्य साहित्य" इसी शोध का एक प्रयास है, ताकि सन् ९८० से १४८० ई० तक गद्य में शोध कार्य करने वाले स्नातकों की सहायता हो सके। गद्य की प्राचीनता, उसके स्वरूप विकास और गद्य की भाषा पर कार्य करने वाले जिज्ञासु स्नातकों के लिए इस पुस्तक में मैंने थोड़ी सी सामग्री जुटाकर उसका मूल्यांकन किया है। इन नई उपलब्धियों का यह मूल्यांकन एवं विश्लेषण कैसा बन पड़ा है इसके लिए तो निर्णायक पाठक ही हैं, परन्तु इन रचनाओं की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में मैं एकदम आश्वस्त हूँ। हस्तलिखित प्रतियों और पौराणिक कृतियों की उपलब्धियों से इन

जैन कृतियाँ और उनका गद्य) (४) आदिकाल का जैनेतर (लौकिक) हिन्दी गद्य साहित्य तथा अन्तिम अध्याय (५) विविध विषयक उपलब्ध हिन्दी गद्य रचनाओं का है। इन अध्यायों में विविध वर्गीकरण से आदि कालीन हिन्दी गद्य रचनाओं का केवल प्रवृत्ति-मूलक मूल्यांकन ही प्रस्तुत किया गया है। यथा साध्य। यथा शक्य। मेरा दावा नहीं है कि अन्त इस कृति म सम्मिलित गद्य रचनाओं के अतिरिक्त आदिकाल में कोई नई गद्य रचना मिल ही नहीं सकती। यह तो मेरे शोधक का एक विनम्र प्रयास है, उसे मंजिल कैसे कहूँ ? यदि सुधी अनुसंधित्सु स्नातकों और विद्वानों ने और शोधकर इन कृतियों की संख्या में, (और प्रामाणिक कृतियों को प्रकाश में लाकर) वृद्धि की, तो उनका कृतज्ञ रहूँगा।

कृति म अनेक रचनाओं स गद्यांश लिए गए हैं। उन सबके सम्पादकों एवं लेखकों का हृदय से कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मुझ एतदर्थ स्वीकृतियाँ प्रदान की हैं। इस दौरान में बहुत बड़ी सहायता करने वाले हैं—माननीय श्री अगरचंद नाहटा। उनकी कृपा से शोध द्वारा मैंने कई महत्वपूर्ण नई कृतियों को हिन्दी जगत के समक्ष रखा है। उनके आशीर्वादों का सदैव अधिकारी रहा और रहूँगा। प्रस्तुत कृति के लिए अनेक नई रचनाओं के सुझाव उन्होंने दिये। धन्यवाद के साथ मेरी उनको हार्दिक शुभकामनायें अर्पित हैं।

प्रस्तुत कृति की प्रतिलिपि मेरी हर तरह से योग्य पत्नी डॉ० करुणा शर्मा, एम० ए०, डी० फिल्० ने की है। अत्यन्त व्यस्तता के होते हुए भी उनकी सेवा और सोजन्यता का कायल हूँ। प्रतिलिपि को टाइप करने वाले अपने प्रिय विद्यार्थी श्री बी० एन० वर्मा, बी० कॉम० को भी नहीं भूल सकता, जिसका अथक श्रम इसके साथ है उसका आभार व्यक्त करना चाहूँगा

"आदिकाल का हिन्दी गद्य साहित्य' आपके सामने है। इसको आपके समक्ष प्रस्तुत करने का सारा श्रेय रामा प्रकाशन को है और और इस कृति को इस रूप में प्रस्तुत करने के लिए सारे श्रेय के अधिकारी हैं—आदरणीय बाबू बनारसी दास मेहरोत्रा। प्रिय हरिबाबू की आलोचना इसके पन्ने पन्ने के साथ है ऐसा मानना हूँ। मेरी सेवाएँ एम०बी० कॉलेज उदयपुर (राजस्थान) के हिन्दी विभाग के साथ हैं अतः मेरी अनुपस्थिति में प्रूफ संशोधन का सारा कार्य मेरे परम मित्र श्री ठाकुर शिवमूरत सिंह, व्यवस्थापक रामाप्रेस ने किया। उनका

कृतियो की प्रमाणिकता को सदह की दृष्टि से नही देखा जा सकता, ऐसा मेरा अपना दृढ विश्वास है।

प्रस्तुत कृति को पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दो भागो म विभक्त कर दिया गया है। पूर्वार्द्ध में गद्य की नई उपलब्धियो के अश (गद्याश) दिए गए हैं, जिनसे गद्य का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत हो सके, साथ ही उसके उद्गम और विकास पर भी इतिहास बने। इन रचनाओ को क्रमबद्ध जुटाया गया है। यह सारा सकलन स १००० से १५०० वि० तक के उपलब्ध गद्य साहित्य का है, जिसमें गद्य की *प्राचीनतम शलियो का पर्य्यवेक्षण किया जा सकता है। 'गद्य कवीना* निकष वद*न्ति* क अनुसार गद्य विधा की प्राचीनतम निधि का स्वरूप विश्लेषण इन कृतियो के आधार पर सरलता स किया जा सकता है। इन गद्य रचनाओ का सपूर्ण रूप से जुटाना मेर लिए सहज सभव नही था। इसलिये कुछ रचनाओ को छोडकर शष सभी रचनाओ के उत्कृष्ट उद्धरण (Extracts) मात्र ही दिये गए हैं। अन्यथा ये रचनाएँ सपूर्ण की सपूर्ण हा प्रकाशित की जाती। एक महत्वपूर्ण बात इन रचनाओ क सकलन क लिए यह भी समझ म आई कि एम०ए० जैसी स्नातकोत्तर कक्षाओ क पाठ्यक्रम में जिस प्रकार आदिकाल की अज्ञात कृतियो क काव्य का अद्यावधि कोई स्वीकृत पाठ सग्रह नही है, उसी प्रकार आदिकाल क हिन्दी गद्य का भी आज तक कोई सग्रह तैयार नही किया गया। अत यह सोचकर भी इसका पूर्वार्द्ध प्रस्तुत करने का विचार दृढतम होता गया। इन्ही सभी बातो को ध्यान म रखकर इसका पूर्वार्द्ध प्रारम्भ में इसी रूप में रखा गया है। कुल मिलाकर सोलह रचनाओ का सकलन प्रस्तुत किया गया है।

अब रही कृति क उत्तरार्द्ध का बात। इसमें है—हिन्दी साहित्य के आदिकाल में उपलब्ध गद्य रचनाओ का विशुद्ध साहित्यिक मूल्यांकन। भाषा विषयक वैज्ञानिक विवचन स मैं बहुत दूर रहा हूँ। भाषा विवचन मेरा विषय नही। इस मैंने भाषा विशेषज्ञ शोध मस्तिष्कों के लिए छोड दिया है। कुछ शब्द अवश्य दिये गए हैं व कवल उदाहरण मात्र है तथा उनको कवल तुलनात्मक जानकारी के लिए रखा *गया है।*

उत्तरार्द्ध म मूल्यांकन अनेक रचनाओ का है। यह भाग कुल पाँच अध्यायो म बाँटा गया है। (१) विषय प्रवश (२) हिन्दी गद्य की परम्परा (३) उपलब्धियाँ उनका मूल्यांकन (आदिकालीन हिन्दी

जैन कृतियां और रचना गद्य) (४) आदिकाल का जैनेतर (लौकिक) हिन्दी गद्य साहित्य तथा अन्तिम अध्याय (५) विविध विषयक उपलब्ध हिन्दी गद्य रचनाओं का है। इन अध्यायों में विविध वर्गीकरण से आदि कालीन हिन्दी गद्य रचनाओं का केवल प्रवृत्ति-मूलक मूल्यांकन ही प्रस्तुत किया गया है। *यथा साध्य। यथा शक्य।* मेरा दावा नहीं है कि केवल इस कृति में संकलित गद्य रचनाओं के अतिरिक्त आदिकाल में कोई नई गद्य रचना मिल ही नहीं सकती। यह तो मेरे शोधक का एक विनम्र प्रयास है, उसे मंजिल कैसे कहूँ? यदि सुधी अनुसंधित्सु स्नातकों और विद्वानों ने और शोधकर इन कृतियों की संख्या में, (और प्रामाणिक कृतियों को प्रकाश में लाकर) वृद्धि की, तो उनका कृतज्ञ रहूँगा।

कृति में अनेक रचनाओं से गद्यांश लिए गए हैं। उन सबके सम्पादकों एवं लेखकों का हृदय से कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मुझे एतदर्थ स्वीकृतियाँ प्रदान की हैं। इस दौरान में बहुत बड़ी सहायता करने वाले हैं—माननीय श्री अगरचंद नाहटा। उनकी कृपा से शोध द्वारा मैंने कई महत्वपूर्ण नई कृतियों को हिन्दी जगत के समक्ष रखा है। उनके आशीर्वादों का सदैव अधिकारी रहा और रहूँगा। प्रस्तुत कृति के लिए अनेक नई रचनाओं के सुझाव उन्होंने दिये। धन्यवाद के साथ मेरी उनको हार्दिक शुभकामनायें अर्पित हैं।

प्रस्तुत कृति की प्रतिलिपि मेरी हर तरह से योग्य पत्नी डॉ० करुणा शर्मा, एम० ए०, डी० फिल० ने की है। अत्यन्त व्यस्तता के होते हुए भी उनकी सेवा और सौजन्यता का कायल हूँ। प्रतिलिपि को टाइप करने वाले अपने प्रिय विद्यार्थी श्री बी० एल० वम्व, बी० कॉम० को भी नहीं भूल सकता, जिनका अथक श्रम इसके साथ है उनका आभार व्यक्त करना चाहूँगा

'आदिकाल का हिन्दी गद्य साहित्य' आपके सामने है। इसको आपके समक्ष प्रस्तुत करने का सारा श्रेय रामा प्रकाशन को है और और इस कृति को इस रूप में प्रस्तुत करने के लिए सारे श्रेय के अधिकारी हैं—आदरणीय बाबू बनारसी दास मेहरोत्रा। प्रिय हरिबाबू की आत्मीयता इसके पन्ने पन्ने के साथ है ऐसा मानता हूँ। मेरी सेवायें एम०बी० कॉलेज उदयपुर (राजस्थान) के हिंदी विभाग के साथ हैं अतः मेरी अनुपस्थिति में प्रूफ संशोधन का सारा कार्य मेरे परम मित्र श्री ठाकुर शिवभूषण सिंह, व्याख्याता रामायेस ने किया। उनका

(उत्तरार्द्ध)

मूल्यांकन

पूर्वार्द्ध -पाठांश

(उत्तरार्द्ध)

मूल्यांकन पृष्ठ

पूर्वार्द्ध -पाठांश

१

राउल वेल [1] और उसका गद्य

गउड तुहु एहु कोपनु अउह व—" व—।
को लइ मह्र भइ वानइ ।।८५।।
ज पुणु मालवोउ वेमु हिआवतु।
काम्वन्वेउ जाउ आपणइ हथिआरह भूनइ ।।८६।।
दहा मम्हार ।"९। इ दुभगो वाम्प करिउ वा (?) क्षइ' ।८७।
तहि सारिखउ कहाइउ आधि एउ कि सो (म) इ। ।८८।
सापहि कारि मा लम्हूउ दानउ वानु तें किमउ भावइ ।८९।
जिमउ सिंदूरिअउ रजायमु काम्व देवह करउ नावइ ।९०।
नि ।1०। लाहु र तु करउ मुपवाणु न माहउ न ऊचउ ।९१।
मो देखिउ आठम्बिहि करउ चा (डु) अइमउ भाव इ केर एहु ।

सगदसा ७ अतगन्दसा ८ अणुत्तरोववाइयदसा ९ पणहवागरणु १० विपाक श्रुतु ११ दृष्टिवादु १२, ए बारह आग जि पढ़इ पढावइ ति उपाध्याय भणियइ। तीह उपाध्या माहरउ नमस्कारू हुउ ।।४।।

नमो लोए सव्वसाहूण ।।५।। ईणि लोकि जि केई अछइ साधु। यउ लोकु च किसउ भणियइ। अढाई द्वीप समुद्र पनर कम्मभूमि। जि किसी पाच भरत पांच ऐरवत पाच महाविदेह क्षेत्र ईह पनर कर्मभूमिमाहि साधइ। किसउ रत्नत्रउ ज्ञानु दर्शनु चारित्रु यउ रत्नत्रउ जि साधइ ति साधु भणियइ। तीह साधु पचमहाव्रत परिपालक पचमहाव्रत किसा भणियइ। प्राणातिपातु १, मृषावादु २ अदत्तादानु ३ मथुनु ४, परिग्रहु ५ रात्रिभोजनु। जि विवर्ज्जइ ति साधु भणियइ। नहि साधु सवही माहरउ नमस्कारु हुउ ।।५।।

एसो पच नमोक्कारो ।।६।। एउ पच परमेष्ठिनमस्कारू पचपरमेष्ठि किसा। जि पूर्वोक्तभणिया अरिहत १ सिद्ध २ आचार्य ३ उपाध्याय ४ साधु ५ इह पचपरमेष्ठि नमस्कारू भावि क्रियमाणु हुतउ किसउ करइ ।।६।।

सव्वपावपणासणो ।।७।। सर्वपाप प्रणासकारियउ। ईणिजीवि चतुर्गतिकि ससारि भवभ्रमणु करतइ हुतइ जि असुभलग्या उपायी पापु सु ईणि पचपरमेष्ठिनमस्कारि महामत्री सुमरीतइ हुतइ यउ हुयउ ।।७।।

मगलाण च सव्वेसिं पढम हवेइ मगल ।।८।। ईणि ससारि दधि चदन दूर्वादिक मगलिक भणियइ। तीह मगलवि सवही माहि प्रथमु मगलु एहु। ईणि कारणि शुभकाय आदि पहिलउ सुमरेवउ जिव ति काय एहतणइ प्रभावइ वद्धिमना हुयई। यउ नमस्कार अतीत अनागतवर्तमानचउवीसीआदिजिनोक्त सारू सु तुम्ह विसेपइह हिवडा तणइ प्रस्तावि अययुक्तु ध्येयु ध्यातव्य गुणवउ पढेवउ। जु विसउ।

जिणसासणस्स सारो चउद्दस पुव्वाण जो समुद्धारो।
जस्स मण नवकारो ससारो किं कुणइ ।।
अनइ एहु नमस्कारू स्मरता इहलोक्तणा भय नासइ।
यदुक्त—अउविगिरिरनमज्ज भय पणासेइ चिंतिओ सतो ।।
रसइ भवियसयाइ माया जह पुत्तभडाइ।
वाहिजलजलणतक्करहरिकरि सगामविसहरभएहिं ।।
नासन्ति तक्खणेण जिणनवकारप्पभावेण।
त्रियइ गुहाए नवकार केसरी जाण सण्णिओ निच्च
कम्मट्टगठिदोघट्टघट्टय ताण परिनट्ठ ।।

नमस्कारस्य स्वरूप भण्यते। इणि नवकारि नवपद पाँच अधिका रमसतसठि अक्षर तीहमाहि छ भारी इकसठि लघु। इसउ नमस्कार तणउ माहात्म्य।

एसो मगलनिलओ भयविलओ सलयसंतिसुहजणओ ।
नवकारपरममतो चतियमित्तो सुह देइ ॥
अप्पुव्वो कप्पतरु एसो चिंतामणि य अप्पुव्वो ।
जो झाइ सयलकाल सो पावइ सिवसुह विउल ॥

नवकार व्याख्यान समाप्तम

———

५

अतिचार

(संवत् १३६९मां लखेला ताडपत्र मांथी)

सउ तुम्हि ज्ञानाचार दरिसणा चार, चरियाचार, तपाचार वीर्याचार पचविध आचार विषइया अतीचार आलोउ। ज्ञानाचारि कालवेला पढिउ गुणिउ वितमहीनु बहुमानहीनु उपधानहीनु गुरूनि ह्वु अनेरीकहइ पढिउ अनरउ कहिउ। व्यंजनकूट अक्षरकूट कानइमात्रआगलउ ओछउ देववदणइ डिक्क मणइ सज्झाओ करता पढता गुणता हुओ हुई अथकूट तदुमयकूट ज्ञानोपकरणि पाटी पोथी ठवणी कमली सापडी सापडी पति आसातन ना पगु लागउ थुकु लागउ पढता गुणता प्रद्वेपु मच्छरू अतराइ हुउ कीधइ हुइ भावसगलाहइमाहि तेह मिच्छामि दुक्कड। मु मृषावादि सहसात करि आलु अभ्याख्यातु दीधउ, रहस मन्त्रभेदु कीधइ, मृषोपदेगु दीधउ, कूडउ लेखु लेखिउ कूडी साखि थापणि मोसउ कुणहइसउ राडि भेडि कलहु—विढाविढि जु कोट अतिचारू मृषावादि व्रति भवसगलाइ माहि हुउ त्रिविध त्रिविध मिच्छामि दुक्कडम्। अदत्तादानि विराइउ छानउ पीटउ लीधउ दीधउ वावरिउ घरि वाहिरी खेत्रि खलइ पाडइ पाडोसि अणमोकलाविउ चोरीच्छाइ चोर प्रति प्रयोगु कीधउ नवउ पुराणउ रसु विरसु सजीवु निजीवु मेनिउ, कूडी तूलकूडइ याणि कूडउ कहिउ हुइ अती चारु अदत्तादानि व्रति भवसगलाइमाहि हुउ तह सवहइ मिच्छामि दुक्कड। मधुनव्रति लुहुउपणि आपणा विरायासील गडया सिउणइ मिउणातरि, दृष्टि विपर्यासु आठामि चउन्मितणा नीमभगु अनगक्रीडा परविवाहकरणु तीव्र भिलापु धरिउ हुइ अनेरा जु कोइ अतिचारू मैथुनव्रति भवसगलामाहि हुअउ तेह सव हइ त्रिविध त्रिविध मिच्छामि दुक्कड। इव हिया माहि सम्यक्त्व धरउ। अरिहृत देवना सुसाधु गुरु गुरु जिणप्रणीतु धमु सम्यक्त्वदन्क ऊचरउ। हिव अढार पापस्थानक वोसिरावउ। सवू प्राणातिपात सवू मृषावाद सवू अन्तादान सवू मैथुनु सर्वू लोमु रागु द्वेपु कलहु अभ्याख्यानु पैशुन्य,

रति, अरति परपरिवादु मायामृषावादु, मिथ्यात्वशल्यु सल्यु ए अढार पाप स्थान साश्रमाण समग विघन समान त्रिविध त्रिविध वोसिरावउ, अतीतु निदउ, अनागतु पच्चक्खउ, वर्तमान संवरू । सागार प्रत्याख्यानुउ ।

खमिउ खमाविउ मइ खमिउ छव्विह जीवनि काय ।
सिद्धह दिना सायणा नइ मह मइरु न पावु ॥

हिव दुष्कृतगर्हा करउ । जु अनादि संसारमाहि होडल्द हूतइ ईणि जीवि मिथ्यात्वु प्रवर्तविउ । कुनिमु संस्थापिउ, कुमार्ग प्ररूपिउ, सन्मार्ग अपलपिउ । हिवु ऊपाजि मेल्हि शरीर कुटुम्बु जु पापि प्रवर्तिउ, जि अधिकरण हलउखल घरट घरटी खाडा कटारी अरहट्ट पावटा कुप तलाव कीध्या कराव्या, अनुमोद्या त सर्वं त्रिविधि त्रिविधि वासिरावउ देवस्थानी द्रवि देवी पूजा महिमा प्रभावना की थी, तीर्थजात्रा रथजात्रा कीधी, पुस्तक लिखाव्या, साधर्मिकवात्सल्य कीया तपनीयम देववंदन वाम्णाइ समुदाइ अनेराइ धर्मानुष्ठानतणइ विषइ जु उजमु कीधउ सु अम्हारउ मवन्न हुआ ।

इति भावना पूर्वक अनुमोदउ ।



६

धनपाल कथा

उज्जयनी नामि नगरी । तहिठे१ भोजन्वु राजा । तीयहि-तणइ२ पचह सयह३ पडितह माहि मुख्यु धनपाल नामि पडितु । तीयहि तणइ घरि अन्यदा४ कदाचित साधु विहरण निमित्त पइठा५ । बीजतु पडितह एणी६ भार्यात्रीजा दिवसह णी दधि लेउ ऊठी । बीजतु७ काई८ तिणि प्रस्तावि९ व्रतिया१० विहरवण सारी खेउ ११ नहूत१२ व्रतिया भणियउ१३ । केता दिवसह णी दधि । तिणी ब्राह्मणी भणियउ त्रीजा दिवसह णी दधि । महामुनिहि भणियउ त्रीजा दिवसह णी न दधि न उपगरी१४ व्रतिया ठाला१५ नीसरता१६ पडिति धनपालि गवाक्षि उपविष्टि१७ हूतइ१८ दीठा १९ । विण विपउ २० किसइकारणि २१ ठाला नीसरिया, पडियाणी दधि दियइ छइ । तदनतरू गवाक्ष हूतउ ऊठिउ महामुनि समीपि आवियउ । महामुनि व्रतिया । भगवतहु ! किसइ कारणि दधि न विहरू २२ ? महामुनिहि भणियउ । त्रीजा दिवसह णी दधि न उपगरी पडितु भणइ, किसउ दधि माहि—पुण२३ पूयरा२४ छइ ? तउ महामुनि भणइ, फूलिणि हुयइ । तीयहि प्रतिबोधायु२५ महामुनिहि रातउ२६ रू अणावियउ२७ दधि ऊपरि घरावियउ । दधि ऊपरि चडी छइ २८ फूलिणि २९ । तीयहि माहउ कुयुय३० नीसरितु रानइ रूइ चडिया । तहि वार धनपाल पडित प्रतिबोध हुयउ । परम श्रावक हुयउ । तउ तिणी श्रावकविधि कीधी अनइ३१ इसउ३२ अभिग्रह३३ कीयउ तीयगरू देवु मुकिउ३४ अनेरउ३५ इणि जीभ स्तरिउ३६ स्तवउ नही । अ यदा परमेस्वर ऋषभनाह णउचरितु कीयउ । ब्राह्मण जाइउ भोजदव राजा आगइ कहियउ । भोजदव३७ पुस्तकु अणाविउ । वाचियउ । भणियउ पडित राज चरितु भरउ३८ विशिद्धाओ३९ । पुणु जहिठे४०

१यहाँ, २तिसरे, ३पांचमो ४एक दिन ५प्रवेश किया, आये । ६की ७दूसरा तो ।

रयभनाथु धानियउ४१ छइ निणि स्यानकि४२ महन्वरू धनपाल पडिनु भणइ, तीयकर४३ दनु मूरिउ अनरउ न स्नव् । भाजन्वु राउ अति आग्रहि सागउ । धनपाल पडिन रीस चडी । सायालउ४४ हूनउ४५ मगडी वनती हुनी यहि माहि धानियउ भाजदेव गजा वाना पुम्नकु वालियउ । बइठा ऊठिया रानिकहिठे पडियाणी४६ पूछियउ, किमइकारणि भमाविलि४७ वरउ ? धन पालि पडिनि भणियउ परमन्वरह णाउ चरियु कीयउ अनइ वालायउ । तउ वप्टु । निणी भणियउ तुम्ह कन्ना मा कनाहि एकि न्नाक आवियां४८ । पन्तु भणइ वहि । पडियाणी जेनरा४९ पन आविउ तेना कहिया । पडिनि वेमउ-एकु५० करितु रयभनाहणउ कीयउ ।

८ कोई ९ उस प्रसग पर १० व्रनी साधु ११ सरीसा, सदृश । १२ न थी १३ यहा १४ उपकारिणी नहा उपयाग म आने याग्य नहा १५ खाली हाथ १६ निकलन हुए १७ बठ हुए १८ म १९ न्हा २० विनती की २१ रिसलिए २२अगीकार नही करते हैं २३ पुन २४ सुम्म जनु २५ पान देने के लिए २६ रक्तवर्ण २७ मगवाया २८ है २९ मडाय स उठने वाला जाला, फूलन ३० धुद्र कीट ३१ और ३२ एमा ३३ प्रनिमा ३४ छाडकर ३५ दूसरा ३६ द्वारा, ते ३७ राजा ३८ सच्चा ३९ विशुद्ध ४० जिस स्यान पर ४१ डाला है (लिखा है) ४२ उस स्यान म ४३ तीयकर ४४ क्षीनकृतु ४५ पा ४६ पडि ताइन ४७ चिन्ता कर रह हैं ४८ यान (आम) ४९ जिनने ५० विननव ।

———

७

सम्यकत्व

कर्त्ता—तरूणप्रभसूरि, सवत् १४११

समकत्व गुणरहइ आविर्भावकु श्रीनरवम महाराज कथानकु लिखियइ। ईही जि जम्बू द्वीप माहि भरत क्षेत्र माहि मगध नामि जनपदु छइ। तिहा विजयवती नामि नगरी तिहा नरवमु नामि राजा रतिसुन्दरी नामि पट्ट महादेवी हूती। हरिदत्तु नामि पुत्तु हूतउ। मतिसागरादिक अनेकि महामात्य हूता। अनेरइ दिवसि राजेन्द्र आगइ सभामाहि धर्मविचार विषइ आलापु अनि नीपनउ। तन एकि कहिउ धम्मु दाक्षिण्यौन्दार्यादिकह गुणह करी हुयइ। तथा परापकारहइतउ लोक विरुद्ध त्यागइतउ पुणि धमु हुयइ। बीजइ कहिउ वेदोक्तु अग्नि होत्रादिकु धमु। त्रीजइ कहिउ कुल क्रमागतु धमु। चउथइ कहिउ धर्म्माधम प्रत्यक्ष प्रमाणि करी गगनारविंद जिम दीसइ नही, इणि कारणि नथी। इसी परि सम्य धम विषादु करता दसी करी विवेकवतु नरवमु राजा मनमाहि चीतवइ। दाक्षिण्यादिकह गुणह करी ता धमु न होई। ति दाक्षिण्यादिक गुण पुन्यप्रतु। वेदोक्तु पुणि धमु नही। हिंसा दोष दूषित्वइतउ। क्रमागतु पुणि धमु नही। इसी परि गुणरहइ धमु न हुयइ। नास्तिक वचनु जगज्जतु सुख दुःखादि दशन भावइतउ घटइ नहीं। सव दोष रहितु शुद्ध कनक जिम किसउ धमु हुयइ। इसउ मनमाहि जेतलइ नरवमु राजा चीतवइ, तेतलइ पाडिहार राजा रहइ वीनवइ देव! महाराज! तुम्हारउ बालमित्तु मदनदत्तु चिरा गतु द्वारदेसि वतइ।" राजादेसइतउ मदनदत्तु माहि मेल्हिउ। राजेंद्रि समालिगन सन्मान बहुमान दान पूवकु पूछिउ—'मित्र! एतउउ काल किहा तावउ वित्तउ उपार्जिउ? सु पुणि राजारहइ प्रणामु करी वीनवइ—'महाराज! अनेकि २ देश अनकि २ आश्रय दीठा। प्रभुतु धनु उपार्जिउ। एउ नक्षत्र-श्रेणी-सहोदरू एकावली हारू महाराज मइ लाधउ। राजा भणइ मित्र? एह हारनउ लाभु मू आगइ आमूल चूल कहि। अस सु कहइ महाराज! तउ कालि हउ धुम्हूंततउ नीसरिउ प्रभूत देशातर भमतउ हूंतउ द्रपदिवासटवी माहि गयउ। तृषाकातु तेह माहि ओरहउ परहउ घणउ भमिउ तिहां फिरतइ हूंतइ गुणधर सूरि नामि आचायु भेटिउ। तेह महात्मा आगइ

एकावली हार सारालंकार धारतु देवु एकु देवी सहितु, महात्मा तणा मुख हूंतउ धर्म्मु जिनप्रणीतु सांभलतउ मइ दीसउ । हउ पुणि वान्दी करी तिहां बइठउ । मू रहइ पुणि धमु सांभलतां दुख सर्वथा नाठो । आपणा बांधव जिम मू देखतां हूवो तेइ देवरहइ मू ऊपरि महांत प्रीति उल्लसी । तउ पाछइ तिणि देवि महात्मा पूछिउ—"भगवन् । मूरहइ एह ऊपरि किसा कारण सनी स्नेह घणउ अतिशउ । महात्मा भणइ—" एह भवतउ पूव भवि कौशांबी नगरी माहि जयराजेंद्र तणा तुम्हें विजय वजयन नामइ करी प्रसिद्ध पुत्र हूता । तुम्हारी माता दव जोगइनउ परलोकि गई । धात्री प्रतिपालिता हूता तुम्हें यौवन प्राप्त हुया । जयराजेंद्र तुम्हरहइ यौवराज्य पदु दणेहारू जाणी करी उद्यान वनि क्रीडा करिवा गया हूता मातानी अरुवी दिवाकरिउ । तदा कालि तिहां अगाहवत्सलि दिवाकर मुनि सदक्षापपाताध्ययन गुणतउ हूतउ । तेह-नइ प्रभावि तिहां गरुडेंद्र आविउ । महामुनि तहरहई सवा परायणु हूयउ गरुड तणा प्रभावहतए तुम्हरहई विषमु विषु प्रभविउ नहा । गरुडु राजु तेह मुनिरहइ प्रणमी करी आगइ आवी बइठा । गरुडेंद्रि कहिउ जइ दिवाकरू मुनिवरू इहां न होइ तइ तुम्हें मूया हउन । तिणि कारणि एउ महात्मा तुम्ह रहइ जीवित प्रदाता माता पिता समानु । एह महात्मा तणी भली परि सेव करिजिउ । इसउ भणी करी गरुडेंद्र आपणइ थानकि पहुतउ । तुम्हें पुणि भात वत्य तइ मुनि कन्हइ संजमु ले करी दुष्कर तप नियम पर हूया । तुम्ह माहि ज्येष्ठु मरीकरी प्रथम देवलोकि विद्युत्प्रभाभिधानु देवु हूयउ । तउ लहुडउ विपुनु दक्ष नामि तिहांई जि देवु हूयउ । तिहां हूंतउ चउउ भाइ चवी करी विजयवती नगरी माहि मन्नन्तु नामि नरवम राजेंद्रनउ मित्रु वाणियानउ पुत्रु हूयउ । सु पुणि इउ धन कारणि फिरत उ हूंतउ हवडा तइ दीठउ । तिणि कारणि पूर्वभवाभ्यास वसइनउ तुम्हरहइ एह विषइ स्नेहातिशउ । इसउ सांभली करी तिणि देवि एउ एकावली हारू मूरहइ दीधउ । महात्मा पूछिउ मूरहइ निदानि प्रसन्नाण किसइ कारणि महात्मा कहिउ तुम्हरहइ मरणु टूकडउ वरतइ । तिणि पुणि । भणिउं तिहां मूरहइ उत्पत्ति, किसी परि आयुलाभु । महात्मा भणिउ तउ नरवम राजेंद्र तणउ पुत्रु हरिदत्तु नामि होइसि । एउ एकावली हारू देखि प्रतिबूतिसि । इसी परि छिन्न संशय हूतउ सूरि नमी करी स्वर्गि गयउ । तउ भइं गुरू पूछिउं भगवन् । एउ हारू किसउ सूरि भणिउ भणिउ पूर्विहि नवालसु चमरेंद्र इणि स्थानि गयउ । इंद्रि हाकिउ नाठउ । भयाकुल नासता हूता एउ हारू मना हूतउ सस्नान इ ढीलि पडिउ । इणि देवि लाधउ । इसउ सांभला गुरू बोली पचवीस वरिस सीम देशान्तरि परिभ्रमी धनु अर्जनु उपार्जी करी हवडा इ उं स्वामिन् । आविउ । स्वामिन् । सु देवु तुम्हारू पुत्रु हूयउ कि नहीं । राजेंद्रि कहिउ मित्र । हरिदत्तरहइ हारू दिखालउ । हरिदत्तु वली हारू निहालिउ

हारू दशनइनउ तेहरहइ जाति समरणु ऊपनउ। राजेंद्रि पूछिइ हूतइ हरिदत्ति कुमारिं तिमहिं जि पूर्वभव सवधु कहिउ। जिम पूर्विहिं मन्नदत्ति कहिउ। राजा चित्तमाहि चीतवइ जु आगइ धम्म विपइ विवादु हूयउ सु विवादु एह पुत्रनइ चरित्रि करी उच्छेदिउ। एह विश्वामाहि धम्मु जिनप्रणीतु जु छइ भव्यरहइ भवभवछेन्कु मोभसुख-दायकु। एतलइ प्रस्तावि उद्यानपालकि राजेंद्रु वानविउ देव। अ जु पुष्पावतसकि उद्यानि बहु शिष्य परिवृतु चतुर्ज्ञानी सुरासुरल रेखरसमस्कृतु श्री गुणचन्द्र नामि सुगुरु समोसरिउ छइ। जिम मेघ तणउ गर्जितु साभली करी मयूरू नाचइ तिम तेहलउ वचनु साभली करी राउ हरपिउ। हस्तिस्कध समारूढ पुत्रमित्रादि परिवार परिवृतु महाल ऋति समुदय करी गुरुपाद वादिवा पुहतउ। विधिवन् वादी करी यथा स्थानि बइठउ। अमृतरस सारणिसमान धम्म दशना साभनइ। यथा 'भो भव्या! सव धम्म मूल निवपुरद्वारू सम्यक्त्वु वत्तइ। सु सम्यक्त्वु देव-गुरु धम्म विपइ देवगुरु धम्म बुद्धि स्वरूपु कहियइ। अदेव-अगुरु अधम्म विपइ देवे गुरु धम्म बुद्धिस्वरूपु सम्यक्त्व विपरीतु मिथ्यात्वु कहियइ। तत्र जित राग द्वेष मोहु देवु जिनु। महाव्रत धरू गुरू। स्यामूल्ल धम्म इति। इणि सम्यक्त्वि लाभइ नरकगति तिर्यगति गमनु न हुयइ। मनुष्य देव मोक्ष सुख जीवरहइ स्वाधीन हुयइ। तथा च भणित।

सम्मत्तंमि उलद्धे ठइयाइ नरय तिरिय-दाराइ।
दिव्वाणि माणुसाणि य मुक्ख-सुहाइ सहीणाइ॥

इसउ साभली करी राजा पुत्रिसहितु सम्यक्त्व-पूर्वु गहि धम्मु ले करी सतुष्ट हूतउ अपणइ घरि गयउ। अनेरइ दिवसि सुधर्म्मा सभामाहि बइठउ सौधर्मेन्द्र नरवम्म राजेंद्र तणउ सम्यक्त्व देवहीरहइ अवालनीउ कहइ। तउ पाछइ सुवेगु देवु इद्र-वचन विपइ सदहु धरतउ हूतउ वक्रिय ऋद्धि विस्तार सहितु पराभा निमित्तु आविउ। तिणि देवि दिव्य शक्ति कलिमायामउ साधु समूहु भक्त्र य करतउ राजद्ररहइ तिम दिखालिउ जिमजउ अनरउ दखइतउधम्म हूतउ निश्चइसउ पन्वडइ। नरवम्मु राजेंद पुणि तिम साघुवदु देखी मनमाहि चीतवइकपाल्किह करी इसु जिम शुद्ध जिनधमु एकु छइ किंतु ए पुण मुनि गुरू-कम भार भावि करा विन स्या। हूता जिनधमरहइ लाघवु करइ। ए पाधवु जि मनिमत हुयइ तेह नाशि हूती अवश्यु राखिवउ। इसउ चीतवी करी समभाविहिं जि करा अन्यायहूना मुनि निवारिया। देवु सम्यक्त्व विपइ निश्चल जाणी करी नरवम्म रायरहइ प्रणमी करी साक्षात्कारि होई कहइ महाराय। धयु तउं जेट्ठ तूरहइ सभामाहि बइठउ इद्र महाराजु सम्यक्त्व

तणी स्तुति करइ। इसउ भणी आपणउ सउहु व पी करी आपणइ थानकि गयउ। नरवम्मु महाराजु सम्यक्त्व मूल्ल गृहि धम्मु चिरकाल प्रतिपाली करी पुत्र निश्रान्नि सहितु दीक्षा ले करी सुगति पहुतउ।

नरवम्मनरेंद्रस्य दृष्ट्वा सम्यक्त्वज फलम्।
स्वर्गापवर्गद भव्या सम्यक्त्वे सन्तु निश्चला ॥

८

जिनदत्त कथा

(कर्ता—तरूणप्रभसूरि, सनत् १४११)

समाधिगुण प्रकटीकारकु जिनदत्त श्रेष्टि कथानकु लिखियइ—वशाली नामि नगरी। तिहाँ छद्मस्थु श्रीमहावीरू एक वार उद्यानवनि वर्षाकालि देवकुलमाहि काउसग्गि रहिउ। तिणि नगरी परम श्रावकु जिनदत्तु नामि हूतउ। श्रेष्टिपद भ्रष्ट हूँतउ जीणश्रेष्टि इसइ नामि सु विख्यातु हूयउ। भिक्षा भ्रमण तणइ अभावि करी श्रीवीरू उपोषितु जाणी करी वादी करी घरि आविउ। इसी परि नितु नितु करतइ चरसालउ तिणि लाधिउ। आपणा मनमाहि चीतवेवा लागउ—जइ किमइ आनु माहरइ घरि श्रीमहावीरू पाउ धारउं करइ तउ हउ तारिउ हूयउ। इसउ ध्यायतउ हूतउ विशुद्ध भावि हर्षित चितु घर बारि रही करी चीतवइ। जइ। इहाँ श्रीमहावीरू आवइ जगम कल्पद्रुम जिम तउ हउ मस्तकि बद्धाजलि हूतउ भगवतरहइ सम्मुखु जाउ, त्रिहि प्रदक्षिणा दे करी सपरिवाए थकउ वादउ। तउ पाछइ घर माहि पाउधारावउ। जगम निधानु जिम (जिन) प्रधानह प्रासुकेपणीयह पा ना नह करी भक्तिवसइतउ भवक्षिधु तारणउ पारणउ करावउ। पुनरपि नमस्करी करी वेसलाइएवि पग भगवतरहइ अनुगमनु करउ। पाछइ आपणपउ धन्यु मानतउ हूतउ आपणापइरोपु उगरिउ धायु हर्षितु तिवउ जीमिसु। इसी परि मनोरथमाला जिनदत्तरहइ मनमाहि करता हूँता अभिनव श्रेष्टिनइ घरि भिक्षानिमित्तु श्रीमहावीरू आविउ। अभिनव श्रेष्टि चेडी हस्तगत कोमासहु करी पाराविउ। सुपात्र दान प्रभावि पच दिव्य ताहा हूया। तिहाँ राजा दिक लोक मिलिया। अभिनवु श्रेष्टि प्रणमिउ। भगवतु श्रीममहावीरू पारणउ करी अनेरइ थानकि विहरिउ। जिनदत्तु देवदुदुभि निनादु साभली करी चित विवा लागउ धिग् मूरहइ। अधन्यु हउ जु माहरइ घरि भगवतु न आविउ। इसी परि महा विषादु करत उ जिनदत्तु साकि जाणिउ। किं बहुजा, राजेंद्रियुणि जाणिउ।

घरु जिनदत्तु जु इसीपरि भावना भावइ । तदातिणि नगरी केवली आविउ । राजादिके लोक वान्दी पूछिउ भगवान् जिनदत्तु पुण्यवन्तु, किवा अभिनवु पुण्यवन्तु । केवली कहइ जिनदत्तु पुण्यवन्तु । ताकु कहइ भगवान् । भगवतु अभिनवि पाराविउ जिनदत्ति न पाराविउ । केवली कहनी भावना मूल लगी कही करी कहई-भावइन उ जिनदत्ति पाराविउ, द्रव्यतउ पुणि अभिनवु, अच्युत देवलोक-योग्यु पुण्यु उपार्जिउ । जइ देवदुंदुभि निनादु सामलत नहीं तउ तेतींहो जि वार केवलज्ञानु ऊपाडत । भावरहितु अभिनवि पुणि सुपात्रदान प्रभावि सुवर्णवृष्टि-यान्दि फलु पामिउ । समाधि रहितु जीवु ईहिकु जु फलु लहइ । समाधिसहितु पुणि स्वर्ग मोक्षादिकु फलु लहइ । तउ पाछइ जिनदत्तनी प्रशंसा करी राजा-दिक लोक घरे गया ।

६

बाहुबली कथा

(कर्त्ता—सोमसुन्दर सूरि, समय विक्रम संवत् १४५७ १४९९)

हिवइ धर्मानुष्ठानकरता शुभ ज भाव करिवउ, क्रोध अहंकारादि दूषित अशुभ भाविइ काज न सरइ, तेह ऊपरि बाहुबलिनु दृष्टान्त कहइ छइ मूलगाथा धम्मो मएण हुंतो न वि सीउ-हवाय विज्झडिउ।

संवच्छरमणसिओ बाहुबली [illegible] किलिस्संतो ॥ २५ ॥

विवरण —धम्मो—जइ अहंकरिइ कीधउ धर्म हुइ तो न वि सीओ तउ बाहुबलि राजर्षि सीउ०—एतला सीत टाढि उष्ण लूय वाय करी विज्झडिउ—आहणिउ, संवच्छर-वरस दीस अणसिअउ-आहारपाणी रहित उप वासी काउस्सग्गि रहिउ। कलि क्लेश दुःख न पामत तत्काल जि केवलज्ञान उपार्जित बाहुबलिनइ मनि दीक्षा लीधी पूठिइ इसु अभिमान हूउ जउ हवडां श्री आदिनाथ कन्हलि जाइसु तो माहरि लघु ९८ भाईए दीक्षा लाधी छइ ते वांदवा थासिं तेह भणी केवलज्ञान ऊपना पाखइ नहीं। जाउ। केवलज्ञान ऊपना पूठिइ केवली को केहनइ वांदइ नहीं इसी व्यवस्था छइ। ईणइ अभिमानि बाहूबलिनइ वरस दीस केवलज्ञान न ऊपनु। जेती वारइ श्री आदि नाथनइ आदेसिइ ब्राह्मी सुंदरी महासती ए बिहूँ बहिने आवी कहिउ बांधव। हाथीथिकु ऊतरि। तिहारेइ तीणइ चीतविउ-अभिमान ज हाथीउ। ते मूंकी जेतलइ पग ऊपाडिउ तेतलइ केवेलज्ञान ऊपनूं।

१०

बे भाई

(कर्ता—सोमसुन्दर सूरि)

आगइ एकइ गामि बि भाई हुता। पहिली मधनी वष्टिइ एक भाई नदीनइ तीरी काष्टानि काढिवा गिउ। इणिइ पूर वही गिउ घाइ नदीनइ तटि एक सानीया भरा कडाहि दीठी। ते लई कादम सरडिया भणी निवरइ इहमाहि धोवा लागउ। तेननइ त हाथ हुनी विछूट। इहमाहि पडी तेहनी मूर्छाइ करी पेलउ गहिलउ थिउ। इमइ जि बहइ 'आहा धोवा गई २। पाछउ घरि आविउ। जि का बोलावइ तह हइ धाता गइ २ (धोता गई)' इम जि कहइ। पछइ सग त आरडो माहि पाती बेननाइ दीहाग भूंयिउ रांधिउ। भूयइ करी ते गहिलपणउ गिउं। धण भाई अ गलि धोनइआ भरी कडाहिलउ वतान कहिउ। तह हइ ते वात सांभलती माहइ करी गहिलपणउ पिउ। इम जि गइलनई बाइ थाई जि को बोलावइ तेह आगलि ईम जि कहइ तइ बाइ थाई। पछइ सग त इ आरडा माहि पानी भूयइ मूर्छविउ। तेरहनउ गहिलपणउ। इम गमिउ। इम जीव अणघ्तोइ वस्तइ मोहइ करी गहिला थाइ। पछइ मरी दुर्गतिइ जाइ॥

———

११

शोकाधिकार

(१)

यदा कालि जगन्नाथु माय तणी
अनुकम्पा करी थिउ सलोन तनु
तत्कालि दुविद पूरीवा लागु राग्नी
त्रिशला-तणु मनु १
अहो ! आ किसिउ अकालि उत्पात
हुसिइ किसिउ वज्रपात । २
अहो सखी ! माहरइ गर्भि पामिउ विलयु
हुसिइ किसिउ हिवडा जि विश्व प्रलय । ३
हिव एउ माहरइ मस्तकि जे अछइ मउड
एउ प्रत्यक्ष इउड । ४
एउ हार
साक्षात सहार । ५
बाहु-वल्लरी-तण जे अछइ वलय
ते दुःख-तणा दीसइ निलय । ६
एउ अपूव पट्ट दकूलु
ते देखता सताप-तणू मूलु । ७
एउ अछइ सर्वांगीण श्रगार
ते देखता सपूर्णु अगार । ८
दव ! मइ किसिउ कीधउ पाछिलइ भवि
कुणइ तणा छोरू न विछोह
कइ नीपजाविउ कुणइ सत रहइ वच द्रोह
जेह कारण निष्फल हुइ छ-हरू मोह । ९
मइ किसिउ कीधउ पापु
जेह कारण दैविइ पाडिउ एवउ सतापु । १०

मइ जाणिउ हतू हतिइ सुलखण कमारू
पालिइ विरव रइ मापार ।
जाणिउं हतू मावितिह जिवारइ मातरइ परि
निवारइ हूं पागि पुत्र वनी नइ पुरि । ११
जाणिउ हतू पुत्र माडिगिइ आहउ
मनलिइ पाहु (पत्र १ ब) १२
माहरउ जायु पालिइ मोटउ राउ
देति वयर तणि मस्तकि पाउ । १३
तउ पापी दविइ भाग सवे आस
पडिउ गम काल दु मन्नणउ पास । १४
मागी सपती इ म्नी
समाप थलि कंदती ।
आघ वलि जइ बली १५
माहरइ मनि सुग तणीवात जि टली ॥
माला-नम्यर मुसुहीउ जाम पनेवा सग
विहि-डुमरि उन्मूलीउ एय कुलधिइ मग । १६
वम गरोवर पाली
वमनु मइ जि टाली १७
जि गिउ वव जाली
जोवटा कोडि बामा।
रय मनि शापी गामी
आस भीमउं गुरु बामी
वइ लहीय विबामा।
वाम मीवउ ठम्मी ।
गति । म गमइ गानु
पिय गोविंद वमानु
न्वइ म हि निवासु १८
तन्न निइ पन लाम
मगुन गिहरि गानु
हीन हमइ हीव मानु
विगिनं मन वमनुं
लीविव इग मीनानु ।
इतिनुं ममा-नम्नु रवमन
गामंनिउ निद्रानं गइ विमन १९

२०

दासी ना वचन तु तत्काल ऊपनु मस्तनि चाटक
विर्सजिउ विश्रीस बद्ध नाटक २१
जे हूता बडूया
ते थया फडूया २२
जे गीत गान (पत्र १ ख) करता गंधर्व
तेह तणा गल्या गर्व २३
राज भवतनि जोणइ रजीइ चीत
ते एकू न सांभलीइ गीत २४
जीणइ ऊपजइ मन रहइ चित्र
ते ज वाजइ वादित्र २५
जे हूता पंडित
ते थिया दुःख मंडित २६
जे राय रहइ अवस्य कृत्य
ते न दीसइ नर्तकी नृत्य २७
जेहे विद्वामे धूणीइ मस्तक
ते न वाचइ पुस्तक २८
ज साभलता थईइ हराण
ते न वाचइ पुराण २९
जे जाणइ कव्य-नु अवसर
तेहे क्वीश्वरे मूकिउ महाकाव्य नु प्रसर ३०
जे साभलता फीटइ व्यथा
ते एकू न साभलइ कथा । ३१
जीहणे बोल मोतीरिया दीजइ सुवर्णमइ त्राट
ते कालिग्न न करइ भाट ३२
जे हूता चाचरिया
ते थया लासरीया ३३
जे लोक रइ करावइ जुहार
न हूया निसचना प्रतीहार ३४
जेहे निरंतर जीभ वावरी
ते मौन करी रहिया दावरी ३५
जे करता नगर नी करणवार
ते बइसी रहिया तसार ३६
जेहि मनि ऊपजइ प्रमोद
ते एकू न दीसइ विनोद ३७

जे उनगइ आव्या राय
ते सवे दीसइ विच्छाय ३८
जे सभा बइसता राणा
ते सवे मनि उन्हाणा ३९
जे राज धुरंधर प्रधान
ते दीसइ दुःख-तणा निधान ४०
जे निहां बइठा छइ सेठि
ते जाइवा लागा नीची द्रठि ४१
जे भला भडारी
तेह नी मुख-छाया (पत्र २ क) अपारी ४२
जे राय नइ अंगरक्ख
ते थिया दुमक्ख ४३
आवास छनइ भूरि
भेदीवा लागउ दुःखाकार-तणइ पूरि ४४

(३)

तउ अनाथ तणु नाथ
जायइ जगनाथ ४५
ज्ञान-तणी द्रिष्टिइ
देखइ राज भवनि सपूर्ण दुःखोन्धि-तणि वृष्टि ४६
"अरे ! आ चांतिचरणो ऊठिउ वेताल
पडिउ सान्तरउ साहमू समाप-तणउ जाल" ४७
[illegible] जगनाथि आगुनि-तणइ स्वदि करी
माता तणी अगसाधिहरी ४८
गिउ अनल्प
दुःख तणउ सकल्प ४९
पीटी मन-तणी आधि
ऊतना समाधि ५०
थाक्रिया मा (ता) मांतरिय तणो मुन्न
राज सवा मांहि मधूउ आनंद ५१

—इति —

———

१२

काहडदे प्रबन्ध

(कवि पद्मनाभ—विरचित)

भडाउली

(१)

राजा कान्हडदे तणइ कटकि पाखरी लइ पुहरि कडाहि चडइ। बाज पडइ। सिहुपि घोडा। प्रवहि घोडा पडपना न सहइ। धामातरि वहिला सुखासण चाल्या।

कठालिया किरया। भडार भरीया। आलाथि आत्मनइ आ या। मन मुहाभि हुई। शाल्मय सीधामण हूइ। गीत्र दे धानइ नवेद्य नीपना।

सूरा सुभट पिना तण घरे घाटा पाठ या। छत्रीम वण तणा घोडा। किस्या किस्या घोडा। उजगरा। महरा। कारणा तोरका। भारिजा। सीधूया। अहियाणा। पहिठाणा। उत्तरदेसना। मध्यदेसना मरूयडा। देवगिरा। देवगरा देवाऊ। खरा। वेश्राणा। सप्राणी। पाणीपथा। ऊराहा। गेराहा। काली कठा। रिहाडा। करडा। करडागर। नीलडा। मल्हडा। हरीयला। नरेपडा। दूकवना। पञ्च पुरामाणी। बाहुडदेसना। बोरीया। लहिटूया। गगटीया। हुमजादर। ऊडणभमर। ऊघस्या फोरण। चपल चरण विम्नोण। शालिहोत्रि प्रतिष्टा सिद्धा। विनेष गतिकरइ मनस्यू चालइ। पवन स्यू तरइ। पाटीए पग दइ ऊनरइ। लक्षण मनि धरइ। समुद्र माहि वस्या। कसवटी कस्या। ते घोडा पृथ्वी पुरतातालइ।

बापवालीया च्यारि च्यारि विलगा छइ। किरि जाणीइ आकाशि तणां गमन करनि। अथवा पाताल तणा पाणी प्रगटावनि।

ते घोडा गगोदकि स्नान कराव्या। तेह तणि मिषि श्रीकमलि पूजा कीधी तह तणी पूठि वाधना चदन तणा हाथा दीधा।

तेह तणी पूठि पचवण पाखर ढाली। किसी किसी पाखर। रणपखर। खीणवखर। गुहिपखर। माहुपखर। कानतामाणा पाखर।

तेह तणी पाहा तणी पूठि पचवण पड्या। किस्या किस्या पल्हाण। कुली कुदूराल। ढाढीया नागवणा। वाजनी वज्जाउली। अमरा बांहरया। घरपतारा गहां। माहा रंगा ऊंचा पूठ्या पानती पराग। हलकती खूणम। धीनसहर धागडा।

तेह पाद किस्या किस्या पिया चडाया। पचवीस वरस ऊपहरा। पचास वरस माहि। सुपलधानीक बाणधिजीर। आवरणाल मुद्ध। नाभि प्रमाण कूप। उदार भतार। हईड गुविचार। पाडउ वालइ। मनशिउ तिरइ पवन गित्र चालइ। कीर्ति विस्तरइ। परनारी सहोदर। सर्वाणि सधर। आणाव्यो मारइ। मारी मरइ। आपणा स्वामी तणूं काज करइ। छत्रीसइ दण्डायुध धरइ। हथीयार वावरइ। पश्चात्‌ राव भणी नमस्कार करइ।

इसइ राउत चालन चालन हुआ। हस्ती गुडाया। तुरी पाखरीया। रथ जूता।

राउत चडाया। सनाह लीधा। किस्या किस्या सनाह। जरह जीण। आवणदाल। जीवरणी। अणपा। कटोगा। कजांवो। लाह बहुलुडि। गमहल सनाह लोधा उजबाभून हूंआ। मुगट तणा शृंगार पहिरीया। रतनाउली मनवसी। मांमा वडा वणवसी। राण रमउली। वाघ वज्रावली बांधी। पाहुण पहइना। पैनवारणी। पणावली। अर्गलि ऊरी। रत्न रमी। सबकार प्रवर्त्तउ रूप हारव्यउ। सव पेहि करी आछायउ।

महाराजाधिराज श्री का हइदे पूरी वइठउ छइ। सिंहासनि पाउ पर ठिउ छइ। मेघधना उलच बाध्या छइ। परीयछ ढली छइ। केनकीना गध गहगहीया छइ। सोरभना मोड साचरिडा छइ। सभा माहि मेरी मेल्‌ाणि छइ। जाइ वेलि वालउ पाडलना परिमल पमवण पुष्पजातिना प्रकार पाथरिया छइ। *गुल्लालनागध गहगहीया छइ। पढीया कपूर पाए वपाइ छइ।* घोडा, वही आलइ पालीया छइ। हाथीयानी सारसी आगलि कानि पडिउकाइ नथी सभलातु। पचशब्द वाजिन्न वाजइ छइ। गल्या पीतल रताजणा तणा पपावज धोकार करइ छइ। नत्यकी पात्र नत्य करइ छइ। चामार विजन बिहु पपि हुइ छइ। अमात्य प्रधान सामत मडलीक मुकुटवद्धन श्री गरण। वइगरणा धर्मादिकरणा मसाहणी टावरी बारहाया पुरुष वइठा छइ ॥२॥



१३

वचनिका अचलदास खीची-री

(वात भाग)

गाडण सिवदास री कही

इसी तार देवी । घन साहण पूत परिवार उदउ उछाह देवणहार । तास गुण नमो चलणाइ ।

वर पुस्तक धारिणी कासमीर मन्दिर वसति, गीत नाद गुण गाह निपण देनि वदियण दिवनि ।

अर सीह नइ पाखरवउ, सूर सिहासनि आवरयउ, पयामृत अमी परग रयउ । महादान आछा घडइ, दूध माहि साकर पडइ । सोनउ नइ सुगन्धु अेर अथल वधइ सिवगास ॥१॥

अब चारण कहइ मैं बडो बडाई तउ आपणपाहइ, पूछइ न हुइ । अतरइ हिनु कारणइ, आगिमउ राजा सभा सहित सु विन हुइ सुणाइ तउ सुकवि कुकवि की पारिखा जणाइ ॥२॥

तइ कटक-बंध रउ आरम्भ पारम्भ मलातन गढावरउ । तइ कटक बंध माहि तउ वहइ विसामउ । मडुधर तउ कवण कवण ? उगमाणान पकतेखान गजनीखान उमरखान हुइवनिखान । खान तउ मुगोम मारिवा ।

हींदू राजा कवण ? सरस हूँ गुरु-बाची छत्रस कला सपूण, राजा नरसिंघ गरीबा । तइ नरसिंघ दास नइ कटक बंध जानिनां मारादि धाम्मइ वनि पाणी पाढिवइ दवि कारम । तइ काम्य-वइ टाहि सोह उडती जाइ । दूगरउ विकमाईत ॥३॥

ते राजा नरसिंघ दास गारोला । वमोंग साहण दिल-वाति मेरिह पाखरउ । मडोवम हस्ती हस्ती मा हु पाखरउ । आसन आइ ममन्ह पाखरउ । मर्द-भार लीडउ पमाणिवउ । अनेक राइ मन्नलिउ करि महादान ।

तै राजा नरसिंघ दास सारीखा त राजा नरसिंघ दास का कुंवर तउ चाद की खमजी सारीखा। मातगपुरो का चक्रवती लखमराव सारीखा। देवसीह सारीखा। बूंदी का चक्रवनी अवर देवडा हीदू राद व दि थोड दूसरा मान्न दे समर सीह सारिखा।

देम तउ कउण कउण ? सतियासी न मियाड जुग मानघाता आसेरि दूगउर मिलार पुर लागइ का कटक बंध बघ। मझ देस तउ माडव धार उजीण सीह खड खड का नगर नगर का खान मीर अमराव व चतुरग दल चढि चाल्या पातसाह आपुणपउ पलाण घाल्या।

इसउ हिंदू राजा उत्तठि कउण छइ जिकइ मनि पातिसाह की रीस घसी कउण का माथा सइ सिसो ? कउण हइ दई रूठउ ? कउण की माई वियाणी, जू सामउ रहइ अणी पाणी ? आगु तउ सोम सातल का हुइदे नहीं तिलक छपरि तउ गहिन उतु नही, सीहउरि रउतु नहो, हठ कउ राउ हमीर आथमउ।

अउर पातिसाह हुवा आगिनरा, अर भला भलेरा। त्यौ तउ चउरासी दुग लिया था दिहाडइ पाडइ। तउ सुरताण दूसरउ अलाउदीन, जिणी चउरासी दुग लिया था। अेकइ दिहाडइ।

तणि पातिसाहि आया सातरि कुण सहइ ? कुण सहिजइ ? कुण की जुबिन कुण की प्राप्ती ? कुणका माइ वियाणी, जू सामउ रहइ अणी पाणी ?

यउ सउ पातिसाह उत्तर दक्खिण पूरब पच्छिम कउ जइतवार, इका पुरूखारथ प्रवाहा नाहि पार। धन धन हो राजा अचलेसर। थारउ जियउ जिणि पातिसाहसउ खाडउ लियउ।

तेणि पातिसाहि आयाँ सातरि सत छाडय नहीं खत्र खाँडइ नहीं, बीण ॥ भाखइ, पागार सधित न होयइ। तेराजा अचलेसर सारिखाअचल नइ अच लेस ही होयइ।

अचलेसर तउ किसउ ? उत्तर दक्खिन पूरब पच्छिम कउ भड किवाड, आइ‍या अजइपाला अहंकारि रावण। दूसरउ धारू। तीसरउ सिंघण। यइ हरसण छयाणवइ पाखड कउ अधार। वालउ चकरवति। धन धन हो राजा अचलेसर ! थारउ जियउ, जिणी हइ पातिसाह सउ खाँडउ लियउ। इसा अेक तइ पातसाह रा कटक बध अचलेसर ऊपरि छूटा, वाट का सड इधसा खूटा, द्रह का पाणी तूटा। परवता सिरि पय लागा, दुघट घट भाया, सूर सूझ नहीं सह आगा ॥४॥

इसा अेक पातिसाह का कटय बध आइ पुहुइ कास नहिं सप्राप्त हूवा मुकाम मुकाम का तास वागा, तब जाइ अे गूढरवइ धवलहार दीसिवा लागा।

तिणइ वेला तिणइ तालि राव राणा सुहड-सावत सहूको राजा अचलेसर-हुइ परा धावइ छइ। राजा परादायउ परोछइ नहीं। सू काहउ कहइ ॥६॥

तिणइ वला तिणय तालि राणा सुहड सावन सहू-को राजा अचलेसर सब रहइ मेग्य छइ ॥१॥

पञ्चो भेट तउ त्यागी राइ-कउ जति निमक अग्य गढा राइ राजान कउ परनार पाइ₂णमी बाना कउ। अवर ते पामा महिराज भीमा भोजन्यो का सूर वीर आनल पुरिन्न परमार पानमउ सोम पातन धारा वाहइ कल्याणि सोह जवन सी कउन मीन्मा माहि उरजन सुरजन महर महवन महिराज ॥२॥

गउडा का माहि तउ राजा राजधर। सानिकया माहि वउ सवसल। हाडा माहि तउ— तर मन। कछवाहा तउ रिणमल हुरा। डाड माहि तउ नाथउ नाम पउ। वामडा मउ डूगर वाहड सातन विरहरा। सूयावत———तउ हामा ऊना नोधा। इमा-हेच त वेता हवा का नाव लीजइ ? छतीस ही वस छतीस। छतीस वन छतीस राजकुली। ३।

वाह्मणा माही तउ कवन कवण ? रिसि सारण, गुरु नराइण। वाण्या माहि तउ हरपति, लाखउ, धंवउ वालउ। भाट माहि तउ गणगउ तिलावती रउ। चारण माहि मावउ खाम्उ नाग्उ। बारहट तउ साऊ मऊ। इ इसाहुइ स कता हेवा वा नाम लीजइ। कनेम्ट वस गूप छतीस ही वस छतीस ही राजकुलि अन-अन हुवइ साहिवइ मिली। ४।

तिवरइ तउ वात कहता बार लागइ। मस्ती वन सहुस चालीस कउ सपाट आइ मशाणि हुवउ। किमा एक ? बाला नालो अवना प्रउढा, सोडस वरस की। राना पटराणी। आपणा आपणा दवर जउ भरतार-का पुरसारथ देसती फिर इ छइ। ५।

वर-महलि तउ बाई गवना भोज की कांता अचल की बनता। कुल वहू तउ बाइ पुहगाई राना मोकल रा धार पू। गोत सबाघणी तउ बाई ऊमी। ६।

अइ मइ रे मदरायण गउ गागुरण ती चेनाव किमउ-भेद नीछउ दलियइ छइ। न वाइ कहाउ। अम्पन मजाम तोरम्मया पत्ता-पतासा। रावत मइ कमम मावास पुहि-महर पवनरि आवम्मउ। ७।

तइ छत्र पाट सिंहासण कउ राजा अचलेस्वर षवर कुनउउ किघउ भेद मीकउ देखियइ, किरि मानुष साम हुमार विसमियइ। ८।

कहइ रि माइ साइ म हि विमाट वनिता गाहि कवि कुहान, सुदर माहि मान मरम्न, निवन माहि मारनाणारज, सग्राम माहि——किन

भाजणा साहि जद्तखम, असुरिताण दूसरउ अलावदीन। किसइ अेक आरभि पारभि आइ टिक्यउ छइ। १।

पगि पगि पउलि पउलि हस्ती की गज घटा। तो ऊपरि सात-सात सइ घनक घर सावठा। सात सात औलि पाइक की बइठी, सात सात आलि पाइक की उठी। खेडा उडण मुद फर फरी चहू चकि ठाइ ठाइ ठठरी। इसी अैक त्या पट उडि चत्र दिसि पडी तिण वाजित कइ निनादि घर आकाश घड़हड़ी। २।

बाप बाप हो। थारा आरभ पारभ लागि गढ लेयणहार विना बाप बाप हो। थारा सत तज अहकार राइ दुग रायणहोर। ३।

इसी परित्या लडता लागता मरता मारता महा अस्टमी भारथ जुध मातउ थउ, त्या दूसरी अस्टमी आइ सप्राप्ती हुही। जत्र तत्र ग्रिद्ध मसाण करक की बाहि। अरधो अरधी दुगइ दल आवटया। अक घायल घुल घूम लड लडयडै जाणक मतवाल मिल। जाणक्यसत रित केसू फूल्या। रात दिवस दीस समान। महूरत दिया गढि ढोव वाकिया। तीन लाख भड आया। इसा, मीरी आख मुख माकड जिसा। कर धातक डालै पारसी, बगतर तवा झिल जाणे आरसी। अबाणा हुआ जिम भुखरिया बीलख मेहा जिम आस रियच। नाली निहाव, गोला वहाव। गढ सिखर उडी कायरा का जी तुडी। सूरा उछरग, जोध चो जग। महडिमल भुरज गगाहिड, चतुरगणि बका पगा चाहड। आडा अचल तणा अणियाला, पनर सहस जोध पौचाला। सौहू सग्राम का समरा, अणी-का भमरा। गाहडि का गाडा फौजा का लाडा। पाचरली का बीर, नरा का नरीद। चौईस आखडी चालण सु तौ राव ताल्हण। महाराज माणिया सो पायो, वाचा बधो सुरताण पातसाह आयो। रावजी खत्री धरम री किनारथ कीध लखा प्रमाण गढि गासुराण लीज। मीर मुगल साके आण धम धमी उठायो गढि प्रमाण मोरचो बणायो। थारा पनडा वखडा, उजडा पमाय तेल ते हाय पड्या। इग्यारै हजार नर खलहाण, हिंदू मुसममाण राव ताल्हण हू गढ मोरचा लड, तो सूरा सोहडा समवड। जो हू गढ पोलया मरू तौ चार जुगा लग उवरू। उबर सो उबरो मरै सो मरौ। गढ रखव अधारो राव ताल्हण पधारो।

१ वचनका

तिण तालपुगाराव तल्हण। पौहर दूज, गढ़ि घडच घूव का धडहड भूजै।

२ वचनका

रण बका राव बौनिमो मो निग्याहौ, असक सिर उग्च वाह्यो। राजा

क माहत रहै पडगाहियो रावत अहमद उठ तरवार तौल, तरकस तबक चठ । दिन तीसरा वरस जायै । साम आण साम्हा सेलार, सपूता-को माण साठा की धार । परमत पम पोहराव, घण दलां दिपण घाव । रग-रूप दासाया इद्राणिया रथ आया । सुरामुहाया, मन माया रग राग सुणाया । ८ ११
वर जाय बालासा राव रयण उरम नरवर नरेस, पीलो बागड पहवंस ।

खिति बाग राल खत्रो सडाधार, सूरमा प्यार । राजा को यशो विचारो, आ तो तरग की दारो, सुणो बात हमारी ।

कुप-वन वस वधार, साप सुधारे, तीन पततारे । महाराज, सतिया पर मोह कोज, आपणो कर सोज महाराजा गड रिणथभरि अनावदो पातसाह महया, राव हमीर बारह बरस विग्रह लडया । पातसाह परदल सूरा, दिनमान तूट गड तूटा ।

चौथियो बगडी सूर साह, दूसरै विजराव, घण दला न्यिण धाव । बद्दना आपणो त्यागै, ओढिया तन अणी आग । जप जुड़े कुलण जोगै, राव दाल्हण बरध लाग ।

— ४ —

भग आन जाण कगो क भाण । सुख प पमाण, महिराण मान । साला गु न्नि करनाव करन । अभिमान राण, दूजण माण, अरजन बाण । सूरा हमीम, मारय माम, नरपति भीम । सेनापिपन हमीर मत, सातसह बिन । पाउल है पाण, पोहप खास पति राव चहुवाण ।

— ५ —

सुरताण का समारो, तड-को जुध मारय निवारो, पातसाह पोल पधारो मान रजपूत कर मारो ।

— ६ —

माई सूर आर जाग निडि मोपाह महमसाह पतसाह पतसाह मगा, सातहेन मगा । सोम्रो उठाये, मार पाए और पाए, सोह जु आय ।

— ७ —

राजा अचलदास राज कासो प्रति कहै छ-अम्ह धां बाला मोला राज धो सब बन्न ममाणा सब बात पधाना, सब बात समरथोक ।

घणा माहा राजा अचलदो राजा अचलेसर प्रति कहै छै-अम्हे धां सवै बार नमाणा, सबै बात सधाणा, सबै बात सामरथाक । सा तुम्हारा ही घर का रजपूत कर तुम्हारा ही घर का मानगाना तुम्हारा ही घर का चाह चाक । दो तो अनरथ अनरथ हुवा नाणो ॥६॥

अेकि घायल ही भीना राति दिवसि न भीना । रूधिर का प्रवाह नदी माहि मिल्या । अवरत अनिवध होवण लागउ ॥२॥

तितरई बोलतउ हुवउ छइ पाल्हणसी बाला रूउ । राजा अचलसर प्रति कहइ छइ इसउ कायउ किन ही रहिवउ, मरण तउ छइ अेक वार, नाउ इसउ प्रब पाइयउ वार वार । इवइ यउ कीजइ, साहण वाहण अरथ भंडार सभालिजइ, जलइ सू जउहार जालिजइ, जहा त्यउ खाइइ निहरवालिजइ, अवधू पुरषारथ कीजइ । अवधू पुरषारथ करता मरता रिजइ रुधिर का पिंड, इणि विधि हुइजइ खड विहड ॥३॥

इतरइ आसउदे नउ गागोरणउ कहि छइ सो नाहि हो ठाकुर । इसउ कीजइ, अब धाराला कथार खिर छइ ते पुनरपि धराबजइ, घाउ पाटा बाधिजइ दूरुपि उठिजइ मूल उडइ चालिजइ, मजदल माजिइइ, विगुण आलम साह सारिखउ चाहिजइ, नाहू आपुणपउ निरका ही सूडाविजइ ॥४॥

तितरइ नाथू डाइ डूगर वामडी कहइ छइ इसउ नहा हो ठाकुरे ! इसउ कीजइ गलइ सात सइ सालिग्राम तुलसी की माला घातिजइ, अचलेसर का आवाहयइ लोहडउ करता-करता गोरी राजा रा मड रहइ जाइजइ, जितरा जितरा पग दीजइ तितरा तितरा अस्वमध ज्याग का फल लीजइ । इणि विधि जीवण वढिजइ तउ सूरज मडल भदिजइ ॥५॥

तितरइ बोलतउ ही हुवउ छइ राजा अचलेसवर कहइ छइ भाई हा ! या तउ वात तम्हे कही छइ चालती चड वडा अम्हारइ मनि न हुई छइ अब ही घडी । या तौ छइ भावना आस ज्यउ जाणउ त्यउ मरउ आस पास ॥६॥

तितरइ वात कहता वार लागइ । अस्त्री जन सहस चालीस कउ सघाट आइ सप्राप्ती हुइ छइ । बाली भाली अबला प्रउढा साडस वारखी राणी खलाणी बहदा-बहदी ही आपणा स्वर जठ भरतार रा सत देखती फिरइ छइ ॥७॥

वड महिलो तउ बाईस सफलादे भोज री काता अचल-री जनता । कुल वहू तउ बाई पहपाई राणा मोकल की सार घू । गोत सवसाणी तउ बाई उम्म । अे तउ रहीजइ दादुना आप-कारिजोआप सवारयो । बोल आपणपउ ही ज कियउकिन आणइ आपणपउ ही ज वाल आगा आणइ । पिण वचीर न जीवइ काव हइ म तउ न जीवइ हम हइ । सिव पागली सम जुगती । सिव हास्यउ जीरयउ सपति । अ वडो वडाइ हइ ववण गति । जू अम्हे मुवा की गल मरा

१—प्रमन बडो प्रति का सहट सलान

माइ-बाप बीसरा, जाति पख ऊपरा अबइ यउ अभिमान करउ-मउ करां। इन कउ सउ तेतरसइ हार देवता निहालइ दस अवरू बीस हुवा छइ। न ये हमारउ सुतमेन सहकार लेवइ, न हम हू ममारइ ॥८॥

(राजा कहता है) मानवी-बी कहा रे बावनी हो। तेतीस कोडि देवता तहिन जिरमाहार रयउ तुहारइ करनिए लेपनहार। हउ तउ छउ चिंता बडा, नमे काइ पावउ आपणा मन माहि अहिन। अवइ नान्हा यउ करउ ज्यउ जोगइ जागइन कइ घरि जउहर हुवा, गीगउरि रोलू-कइ घरि जउहर हुवा, कालिह नइ निहालइ रिणथम उरि राजा हमरदयउ-कइ घरि जउहर हुवा। तिहु जउहरो जिका बात जणी हुइ। हुवइ त्या तम्हइ पूरि करि दिखालउ पूरी हुयी हुवइ त्या पुनरपि त्या पुनरपि कानि उचारउ। हउ तउ छउ चिंता-मगन, निणि कारणइ छउ दुखित, काइ पावउ आपणा मन माहि अहितु ॥९॥

इणइ काल राजा अचलदास कउ राज लोग कहयउ, हे माइ! मरण चाहीजू

निसरइ भागाला पारण-कउ दुहडव थई
जिव आवइ मन जाइ पून न हुइ पाछ।
जिण तासी हुर ताइ आलिमउ आइलइ रथणा ॥१०॥

अवइव नाइ मायण बन घर, अजिइ नागुरणि सारासव मीठिहर। त्या अेक पुरुप का पछोरा काहिरउ आण्यइ बीचइ हुवइ छइ ताणीहर ॥११॥

राजा अचलेसर कहइ छइ यउ तउ कालियज करि विचारिजइ, अेक पुरुष तउ पुरिष कइ पछोरइ उचारिजइ। मू मुउ नउ गीसरउ न दीसउ मीनउ। काम्ह त गज रहा न छूट। पामा पातल तउ पइ भारी। धारउ कहां राजा माकरमी पाखि मरउ ध्वउ सउ न आणउ कहां हो रहमउ न आणउ मावनउ जिही बाप हा महाल रानपउ नपउ हो। कहां धीरउ ऊवर, इणा पाहुणा परादाणउ पराणइ तउ, राजा अचलेसर कहइ मारं हो। मकरा मया हुमारा ॥१२॥

पाटण माहि पराद्यावइ रंगाग अवर साइ उदास। पाइ सागइ घा काई मरता भाव की कोई अवर का अनेता, कुल-कइ तउ आयो काई परआई राजा मीठर हां मार पू। गुवर हो परिवार इलाणिदइ अपार, घा हुवना परीद दउ पराणइ नही मकार ॥१३॥

पटराणया हे! कण तउ मुकम माचिजइ, बीच तउ मुखीच ई जिजइ। पाइ उवइ रयउ रयाणिजइ जा य ऊपरली आणिजइ ॥१४॥

मू नउ कण्ण का पुरिस मुकण तइ दउ गा कउउ दिय। घारउ जिवउ साद जाण तउ नय नानइ न आमइ ॥१५॥

पाल्हणसी भला भला लोकां का कह्या करण चार साभलया। आंसू पूछि अकमाल लियउ। वीजइ थम वागडी-की आई सबल ही प्रीथमी प्रतपिज्यउ, यउ गढ लीजउ, हमारउ वइर सुरिताण गोरी राजा सउ कीज्यउ।१६। ९

पाल्हणसी उठता ही सर्यां का गजभार अवहरया पाखरया था तठै लह्री परया। अेकि मारया अेकि मोडया, आणि करि जडया। १०

पाल्हणसी नीसरयउ निललउ नीमाणि घाव घलयउ। पाछिली चिता भागी, आगिली चिता आगी। ११

वर्ण रत्नाकर और उसका गद्य

(ज्योतिरीश्वर ठाकुर)

अथ सखीवर्णना

पूर्णिमाक चान्द अमृत पूरल अइसन मुह। स्वत पङ्कजका दल भमर बयिसल अइसन आधि काजरक कल्लोल अइसन भ ह चपल भूने नम्मदाक शलाका पूरल अइसन घोण्टा परवाक पल्लव अइसन अधर कनिअरार कद अइसन नाक सोडुर मो ति सोनाएल अइसन दा त। वेत्रक साट अइसन बाह पारिजातक पल्लव अइसन हाथ द्रोणक छालल अइसन पयाधर काचिवरली अइसन आगर (=आगर) बान उदुमरू (=डमरू ?)। १८ स। क माझा अइसन देवक काहरक का अइसन जाँघ विकसित स्थलपद्म अइसन चरण सम्पूर्ण सपूर्ण उपासन्न विनोद सम्न समभिना सौराम्यास छओ ये गम्भीर मर्म त कुसार। नायिकाक नागर शरीर अइसन। श्यामाआदि सखी ॥ अवर प्रकार ॥ सहजन्या चित्रलेखा घताची उर्वशी मनका रम्भा ति लोतमा दसवानी इ म आटआ नायिका अधिकह छेहओ मन्दि होयि अकरे कर। पुनु बयिसनि नायिका। कामदेवक नगर अइसन शरीर निरखक चान्द अइसन मुह चन्दन लवरीउ अइसन लोचन। यमुनाक तरग अइसन मइ ओरक तनारा अइसन नाक मानाक सा प अइसन कान अवकारलता अइसनि त्रिवली पाअम वि। थ अइसन अधर मद्दर्भे दालिब कुन्न अइसन दान्त कामदेवक पाप अइसन बाहु निताहि (? नाहित) पदुम अ।[1]

(द्वितीय कल्लोल)

—अथ शयनवर्णना—

मयूर। रक्तानी पर स्वरायगृह तनमान ठकरा भीतर हाथिक

1—देखिए—वर्णरत्नाकरे द्वितीय कल्लोल, पृष्ठ ६

दातव पया मानिक्क पासि मर । २९ क । मतक निरवा सोनाक पटा स्फटिक दण्डा पग्मरागक दण्डिया अहुठ हाथ दीघ अढाय हाथ फाण्ड सेजओट एव पालु तवा उपर कम्बल चारि सक्लात पाच सरल दश पली कोली स्निग्ध स्वटक घुयाव आह अइसन मझआर्तरि उनच एव पालु नतक माण्डल गण्डुआ एक सफुर विराल एक चारिह् कोन वा घल चदोआ माडल ऊपर देल अछ कप्परगुण्डी त घालल अछ करक मुसरी एक ता चालइतें अछ तक्रें खेहें भरइ अछ क्षपइ एक छूरी एक चतु समक सीप एव बाजीकरण सम्मति लइ उपनीत कइलि अछ नायक योग्य पचफल सयुक्त सुरभि शीतल श्वेत मोट विचित्रित ताम्बूल पात्र एक पानी भ गार एक सोनाक सूमध्य रत्ने पचित जलमहिति झारी एक सेजको समीप उपगति कइलि अछ मालती मनोदा सेवारि । २९ ख । करुण सूवणकेतकी चम्पक प्रमति अनेक सुरभि पुष्प से उपगत कएल अछ प्रतिष्ठित आप्त परम्परीण विश्वासयोग्य ये गोआर कोइरि कुलुवि रजक प्रमति जनदश नभो वति नियुक्त भेल अछ नाउ जनदुइ पएर सम्हाहन करइतें अछ परिचारिका दुइ पान कप्पुर लए हाथ देहते अछ योगनिद्रा शयन भेल अछ ॥[1]

— अथ प्रभातवर्णना —

देवक आयतन पचन = बाजु बाज दण्ड पल धनी प्र(भा) तशान क राशील गजराजें शब्द कह वायसहि कोलाहल कह नभन तिराहित भेज चाद म्लान भेलाह पूव दीश अम्लित भेल भमर पुष्पाइयों चलल वेदज्ञजने वेद ध्वनि आरहल कुलस्त्री सलज्ज भेलि घट वाहि जलाशय आरहल व दीजनहि जयशब्द कह ओहदयितें ओहना अवलाक । ३० क । ल पथिकजने मार्गानुसधान कएल नायकें इष्टदेवतास्मरण कह सुभास्थान कह ॥[2]

— अथ मध्याह्नवर्णना —

ग्रीष्मस्य विशेषत ॥ दशओ दिश भगतृष्णा कबिलित भए गेलि छ पिडाएल नियोगी अइसन आदित्य भए गेल छथि वसक अग्नि अइसनी उष्ण भुनि घरनी भए गेलि अछ दरिद्री क हृदय अइसनि सतप्ति पृथ्वी भेलि अछ उमसल विपन्न अ (इ) सन जलाशये भए गेल छ पथिकहि पयसचार त्यचि हल् श्वापद हि छाया अश्रये कह युवतिनि हि जलकेलि आरहू ब्राह्मण मध्याह्न आरह् दिनक दोघता रात्रिक सकोच पृथ्वी (क) क्वस्नता रौद्रक तीक्ष्णता वातकक तृषा जलाशयक दारिद्रता दावानलक प्रचण्डता पश्वतक सकोच अस

१—देखिय—वर्णरत्नाकरे, तृतीय कल्लोल, पृष्ठ १४
२—देखिये—वर्णरत्नाकरे, तृतीय कल्लोल, पृष्ठ १४

तुष्टि तृषा ऊष्मा बाहुल्य पवनक बाधा शीतक उत्कण्ठा । ३० स । एवम्विध ग्रीष्मसमयक मध्याह्न देषु ।[1]

—अथ सन्ध्यावर्णना—

आन्हिक अवसान तिमिराकाट अस्ताचल गइ अरुणमण्डल भइसह भ्रमरन्हि पद्म रसभण जनि आकाश अधकार श्यामा भउ आन्हिक मुराएल अथ कार अद्य ए मिलिन भउ अन्तन्तर भउ कउन पुनक सन्धार गोक सधार घटक बालाहल नगरक उद्गम दीपक उद्योत धानियाहि प्रणायाम नवोढाक विरति प्रोज्ञाक हरण पकज(क) सहोव भ्रमरर उत्तम पथिक विश्राम तपास्विहि तरण श्रीनिरक सधार गामायुक वान युवतिन्हि उत्कण्ठा यु वक नक अभिलाष मागोजनक द्वितीय भाजनक उत्तम गामायुक धनक नमास्कि सम्पूर्ण प्रभृति सन्ध्या देषु ॥[2]

—अथ चन्द्रमावर्णना—

निशाक नाहनाक दाम्पत्य अइसन अन्धकार शान्तिक (?) रमणक अइसन चन्द्रमाउक प्रभा अइसन तारकाक नायकाह अइसन दण्डक गमनक कल्याण अइसन कुमुदवनक प्राण अइसन पतिसमागमक तिमक अइसन अन्धकार क मुक्ति अइसन कल्पतरुक यश अइसन लोक लोचनक रसायन अइसन एवम्विध चन्द्र उदित भउअह ॥ पुनु कइसन ॥ दिन हृदयक हर्षे कुमु दाकर विकसनहर्षे मानीनीक मानपरिपूर्णहर्षे अन्धकार निर्भासिनें विरहिणी तापहर्षे कामिनी प्रकाशहर्षे अभिसारिका निर्वाप्ति । ३२ स । हर्षे यामिनी प्रकाशित एवम्विध चन्द्रमा उदित भउअह ॥ पुनु कइसन ॥ हरवल्लभा मनोहरा प्रकाशवती मोहिता माहिता मालिता नलिता मद्दा मद्दरा हरिणा हद मालिना तरलिता सम्पुर्णा प्रतिमा स्वच्छा एवम्विध चाहणामा सम्पूर्ण चन्द्र उदित भउ ॥[3]

—अथ धन्यानगरी वर्णना— (तृतीय कल्लोल)

चउरम्भा पुर बनारामारामसन्निविष्ट चतुरस्र अनेक प्रासाद सौं मण्डित

१—देखिये—वर्णरत्नाकरे, तृतीय कल्लोल, पृष्ठ १५

२—देखिये—वर्णरत्नाकरे, तृतीय कल्लोल पृष्ठ १५

३—देखिये—वर्णरत्नाकरे, तृतीय कल्लोल पृष्ठ १७

पाननायिका प्रतिनायिका सखी सैरन्ध्री परिचारिका दास दासी बन्धुल निल्लज्ज आचारहीन निगति निराश्रय कामुकादि ये लोक तें सकुल सुगन्ध सौरभ कुसुमकइ ग्रथना वस्तुक धूप शरीरकइ परिष्कार केशकइ समार्ज्जन अलङ्कारक उपनय दूतीक गतायत भञ्जनक आलाप चित्रशालोकइ रचना शइयाक विन्यास ताम्बुलक सञ्चय अङ्गरागक पेषण नायिकाक अलङ्कार अर्पक ग्रहण एव व्यापस्त अनेक लम्पाक दे । ४०ख । पुनु अह पुष् कइसन क्रित्रिम लज्जा कपट तारूण्य घनार्थे प्रेम लोभार्थे विनय कारणें सौभाग्य निम्मूक्त स्वाभिसिद्धूर एव शीलवन्ति विलासवन्ति बलवन्ति करुणावन्ति हृदयहारिणी यौवनश्री लाव ण्यातना सर्व्वाङ्गसुन्दरी मुखमण्डने वेद्दी विपष्ठनी परिहासपेमली सुन्दरी म सा य जबे नागरजन देखथि तबे चारि पुरुषार्थ जाति लज्जा धन प्रतिष्ठा उपेखथि यौवनावलोकम कन्दर्पक आयतन प्राय सन्तक लासम्पूण पुष्पमोदित केशपाश सम्भोगदेवता प्राय अनेक वेश्यान्हिका मध्य उत्तमा वसन्तसेना नामे वेश्या देषु ।[1]

(चतुर्थ कल्लोल)

अथ घेतकवर्णना

राजाका सन्धाविसर भेला बनस सारज लावि हुकार अ इसि उपस्थित भउ ककारी कार सुधावल कहल लढइ अत पकइ गल छारि म रमनिसेवा करूअन सारज लावल गोधम्भक राजा उत्साह भउ अहेलाक साजन करण रजाएस भउ तदनन्तर कइसन भउ भद्र भद्र मगमिश्र दविनदण्ड मनिकदण्ड षपल दीपवाल-आठओ जाति ये हा थि अधिकह से नद मुखकइ पलिवमसाधि मुसरा समधि सारि सज्जु कइ महाउतन्हि आनि थोधके उपगत करूअह तद नन्तर कामोज बाणाउज वाल्हि । ४८ । क गान्धार सैंधर तित्तिल कुलज उपकुलज मेचक शृंगल यवन आवाल साचिन्द्र मान्दवेय बान्मतेय काश्मीर धसायन पर्व्वतीय भिलज वैकय अवनाक्ष तोपार करस पउवीशओ जाति जे घोल से सर्व्वमाजनसमुक्त कइ पनानि पनानि असवारन्हिके विलहल तदनन्तर भयान जालन्ध (घ)र मध्यदेश वदम सौराष्ट आठओ जाति मन्हिस साज बान्हिसि बन्हिम ओट लइ अगसरूअह तदनन्तर कइसन भउ वास्तिर ताहाल बालदुघट अन्धज वनवाल दिगर्मनील पाम्पिवाल एवम्विध दशओ जाति । कुकुर अनुग्रह से कइसनाह सिहक अइसने आगा रे दुज्जन अइअ (ग) ने व्यापारे मुसर अइसन ग्रहे दीघरे आगे भिणे वेकस्लेप्टे ? माम्बे काने नन्हि मागुले एव

१—देखिये—[illegible]

निष कुकुर कूकरवाह । ४८ ख । डोरिआएविलह से कइसनाह पाटपति एक हाथ मथा बधन हाण्डु उपर आओ परिहने कुकुर सोर धवने टाकार लिखिकार घुघुकार घुघुकार दिय बार प्रभृति अनेक कुकुर परिचित शब्द करइतेआह अनेक कुकुरवाह चलुहह तदनन्तर पाखि मारिम नगल बसर बधरि डगल आर गस जुराटा दुरिकार दुरिकारी जाआन टुनि मुरधनी विचुकार प्रभति अनेक शरधान वा टोरर परिहआल हाथक पला परिहन सटकनो सल विपोहरार यागबान सौ पा टौं ह शब्द करइतँ आह अनेक पावक चलत मउअह पालत पाविर असवार चलन मउअह दालसु हथवा ल महवान मण्डलीक सामन्त महासामन्त परिला पतिराज बाहपनि सनापनि ठट्टापनि देशपनि प्रभनि अनेक नाम धारक सैन्य चलन मउअह तदनन्तर म । ४९क । उ कहमन सैन्य क भरे पथ्वी काथि गउ मऋ टरि गउ सानआ समुद्र उल्लसित भइ गउ सत्य चरण प्रहा दे उधलित धुलि से आकाशाच्छन्न मइउ गगा पाँक भइ गउ दिन विहिन भइ गउ धकवार विदलविन भइ गउ आकाश धुलि कइसन दपु जनि गइप क भरे पृथ्वी आकाश भइ गउ गजघण्टाक मदबल अवतर इ लाला पल्लविक पम्प एहि घाट बान्ध भइ गउ मयार निर्वास भरें मांसल पवन भइ गउ रथक पाप हाथिक मंब हित अरबक हिंसारव कटक कोलकार बाधक शब्द कर्णो अनेक जयगाम त सनावन वणयुगल भइ गउ छत्र चामर चिर छत्र टग आगार प्रभति अनेक सामानकार तेँ अकाश छन्न भइ गउ बन्धुक रक्तिमा अल काश्क तम आन्दिनक किरण तीनु मिलितु भइ गउ तेँ स्वच्छासार दशा न्नि मन गउ पुनु कइसन देपु ॥ जनि प्रजाप त । ४९ ख । कक पालक जयगीक पथाका आमा जनगन विजयक बनक धूमकेतु आओ अदमर कइसन सैन्य गमि राजा चलन मउअह ॥[1]

अथ पन्यनवर्णना

म नौ वन निन्दर पन्चर तरुओ सरावर पल्लवन ते शिशिविन । पद्मल डोलन निगर बहुनिगर निवासप न धुनी बल्लव पात कुहर दरा निकुञ्जक कोटराणि तेँ गगन्धित पल्लव पल्लव पुन वाद्य करत करत करहि आदआर कर्णेनि करत बल्गादि बकरा कुल करना निम्ब सोमसु माह माहिमन शमि निरिनि नान गहाम बाकुर बड़ र बान बन आदि कानि वेर वमन पाल्नरि पान्न निगु र न द बट रिमार प्रमति अनेक बस तेँ उपशामित । निह मार न समर ल्ब ग ताल्न । ५४ क । लवर लवन लवपुन निवपुन चमरा मृग हरिण

1—देखिए—वर्णरत्नाकर पद कल्लोल, पृष्ठ १५

अनेक श्वापद तेँ सेव्यमान। कएव मयूर चकोर तित्तिर कुटुम्बिनी कठहरिचा पीआ पेर सड़चान सारिका शुक महो फनिआर फेचा कपोत काकिला प्रभति अनेक पटक तेँ आकीर्ण। पुनु कइसन देव यक्ष विद्याधर गन्धर्व सिद्ध चामर किंपुरुष किन्नर अपसर राक्षस दैत्य भूत वेताल वनचर वनदेवता प्रभृति अनेकक विश्रामभूत। गोण्ड पतगोण्ड शबर किरात बब्बर भिल्ल पुक्कस पचारि मेद मगर प्रभति अनेक म्लेच्छ जातिक निवासस्थान पुनु कइसन वृप सरवर गहन पविश्वधनार कमनीय अन्धकारमय प्रकाशमय यक अभ्यन्तर सिंहक नाद श्वापदक शब्द च तकक ध्वनि किन्नरक गीत विद्याधरक आलाप सबरक सन्धान याधक माया विषधर (श) व्यामोह औपधिक प्रभाव एवंविध भीषणता रमणीयता दुइ दशा दए ॥[1]

(पचम कल्लोल)

— अथ मल्लद्धयुवर्णना —

ओड़निकइ बाहनाद घालि दह सुधाल भउअह व ध पइसुअह एक कर। ४५ स। कि धाओ घालु अओहेँ पइसि वाह डाकि कनाक मरेल भूमि भउ अत के मन्ते याके भरे विदान राधि मेलिन डाड उभरिलह अवधा भउअह फणाकेँ उठे भूमितृक लागि डोकवालावि भू (मि) भउ अआकेँ माण्डकेँ भरे विदान राधि पाटि सलिह ओक भूमि पानि राधि उभरि एक ठार भउअह तदनन्तर एक भूमि भउ अआके पयिसि फना टागि छनको लाह अआके छलकी राधि पानि सलिह अआके पानि राखि उभरि ठाट भउअह फणाके भूमितृक लागि डोकरनारि भूमि भउअह तदनन्तर सगुम पालि घालतृक जाध तोलि पच्छी घालु ॥[2]

— अथ प्रेरणनत्यवर्णना —

तरुण प्रौढ़ सम्पुष्ट गायन साम्यास वादी तालन मानकुशल सुवेश प्रगल्भ विभति लवले घाघर बछने कछनी परिहने पुष्पादि भूपित ये प्रेरण तेँ प्रवेश दिह तथा पछा आउरोप दुइ डाडवार दुइ पाठि पूरण पइसुअह से पुनु धइसन प्रेरण चतुरस्त्र रत्न। = यस्त्र। मिश्र पहक चारूह प्रकारक ताल तर विचक्षण। नृ रागवर्तिक चित्र चित्रतर अतिचित्रतर छह राग कुशल चच्चपुटचचपुट जटणिणा पुनक तनुट सम्पान कक्काल कोकिला रव राजनाहन

१—देखिए—वर्णरत्नाकरे, पचम कल्लोल, पृष्ठ ४१।
२—देखिए—वर्णरत्नाकरे, षष्ठ कल्लोल, पृष्ठ ४५।

पाम्बर्होसाचन सचाप्रिय रंग विद्याधर श्रीरंग अगपति दप्पण रति नील सिंहविक्रम मल्लिकामोद गाण्डिव सरस्वतीकण्ठाभरणादि य अनेक तालक नृत्ताभ्यास ठमन परिठगि ताण्डावनाचा उपमम कराइति नाचनाचु तन्नन्तर लयविलास पावन कुम्पचास दरगराट त्रिविहिरा तारणि सिद्धिपिटि लण्डमार । ६१ क । णि थाग्गीत बेराव नरयविमम पावर पाघह अगे अपना उपर्गनि गनि पद्मु मयाष्टी पिठिडपन्नी (पिचिहपन्नी ?) अमग सिहाधी मञ्जुरी अमगमउरी सूचि समसूचि अचित गकम दुना कपकरक प्रमति अनेक गति कइइता पुर विश्राम भउ ॥[1]

(षष्ठम् कल्लोल)

— अथ मरुस्थलवर्णना —

काष्ठ कष्ठाय कुण कटार काल कएक गवीर बाबुर बिमार बसवति बहुहुलिन बेनु बरिआर घोरकट तन्तुया प्रभति अनेक वस तें आवीण करह कएर सन छही पीपोलि मडर हुन्डार मूषक प्रभति जन्तु तें सेवित । पुनु कइसन देषु अ मरुस्थल उ नष्ति पृथ्वी उत्पत्तावय निर्ज्जीव वण । ६२ क । मुमुषु तृण विलुप्त बाट ककर्कश रेणु विस्तर देन निउअल सास गढ्मा नगो । पुनु कइसन । अघम्मक फन अइसन(न) अलौकिक विषाम अइसन आनरक मित्र अइसन परिश्रमक बन्धु अइसन तपाक अनर अइसन उद्गार बान्धव अइसन एवम्विध दुरुह दुरलोतीत निर्म्मानुष निषण सम्बदु मशा एक मरुस्थल देषु ॥[2]

— अथ समुद्रवर्णना —

वेला कल्लोल तरंग लहरी आवर्त्त आस्वार तें सर्मा वन । मगन गाह गाह मक्र कुम्भार तिमि तिमिंगिल प्रमु सांत सार वसहूरतो अमनाग अगमानुपालि अनेक जलजन्तु तें भयावह । मुक्ता प्रवाल बाबट मग महिलान्त ग । ६२ ख । शिला उ गुपकान्त समार स्नावर बन्धु स्फटिक टोकपण्डि अनेक रत्न तवर आकरस्थान दाणा वेगी वाहिन जाग तवर व मवार तें रम्य भासमान गम्भीर अवयन्त विस्तर सुरम्य विमूल पवित्रहीर मर्यादाक दिवनि सर्व्वगुणयुक्त समुद्र देषु ॥[3]

(सप्तम कल्लोल)

१—देखिए—वर्णरत्नाकरे, षष्ट कल्लोल, पृष्ठ ५१

२—देखिये—वर्णरत्नाकरे, सप्तम कल्लोल, पृष्ठ ५५

३—देखिये—वर्णरत्नाकरे, सप्तम कल्लोल, पृष्ठ ५५

अथ विवाहवर्णना

गोत्र मेलापक भउ पूगयज्ञोपवीतदान विव्वह द्वादशक नवपचक ततीयेकादशक चतुद्दशक समसप्तक । ७३ क । षडष्टक प्रीतिषडष्टक इथि आठहुका योनमध्य उत्तम योन निव्वह तदनन्तर अर्घ पाद्य विष्टर आचमनीय मधुपवक निव्वह । तदनन्तर गोत्र प्रव (र) क अनुगति अग्निसन्धा नै स दक्षिण क याहान निव्वह तदनन्तर समाञ्जन सेषन उपलेपन उल्लेखण इ पचभूसस्कार अग्नि स्थापन कए आज्य वहि ब्रह्मासन समिध स्थाली । सस्रव पद्ता प्रणीता प्रोक्षणी स्नुव दपद लाज समी सूप्प प्रभति ये द्र य से आसादि हुलुअह आधार आज्यभाग प्रजापत्य स्विष्टिकृत प्रायश्चित्त राष्टभतादि होम निर्वाहि इष्टागना लाज दिहु करग्रहण अश्मारोहण प्रदक्षिण सप्तपदाक न निर्वाहिका मध्य सज्जनसाधारण यथोचित परिप्राप्त प्राजापत्य विवाह निव्वह सन दास सोन लइ सिंदुरदान करू अलकार परिच्छद निवह ।।[१]

— अथ पुनर्भोजनवर्णना —

प्रहर रात्री भितर विआ । ७६ ख । रीज अवसर भेल चोरगाहि ठा निपल तदनन्तर अपूमव पीन्ही एकठाम घरल सेवकें पटा देल वधा रत्नमण्डित नायके देल वाणवर समारू सुवणघटित रत्नरचित वीरा तदनन्तर अठ पहरि पानि कप्पूरक वासल सुन्दरी देल नायक पएर पखालल शुची भए बैस साह तदनन्तर कपूरमजरी क्षिरोदक लोहुरी प्रभृति ओगर हैमन्तक पीदल वटइच महनह छो सुगपापितह मोट तैंतरिक पत्रप्राम अइसन सुग घे अधिक उर गल कह दविक अइसन देव तेरिआमहिसि पाडो कम सात हाथ पागल आरा एपा स्नि एक लाग स्नि द्वि लागए नहि तीनिकाण्ठे वरहुरखुरि महिसि बढगोपक दुहुलि अवर्तेरह वषक वेटिआ में औटल चलाओल लेवारी पाक ज्वाला अडी ढोठी वाका पीठी धने लाले मधुरें ज्वार्ले दू । ७७ क । घ औग्ल जाहि सुन्दरीक पाछु भए क दप्प टोकार पालल अच्छ गए भावाभाव विवर्जित य सुन्दरी ते उप वीचलि दुघ पोरल हृदयक सरिक्ण तिनि हाथ चाकर निमुठ हाथ ठाव गगाफणप्राय पोरइतें मात्र एगारह आगुर वरलो पललि वाचे कप्पूरे सेलल देल तसन दघि घार(त)क चन्द्रमा पूर्णिमा प्राय अमतहु जिन सादे दर्नने पवित्र दधि उपगन करू सुवणक चौरा दूधे तेआल चिउला उपर सुन्दरी दधि देल वटइते कान्ति टुटइते कपति पात्र देयिते वमति सुन्दरीक करकमल पल्लवप्राय सोनाक छीपें छेजोल शसप्राय दधि प्राय देल नायके पचग्रास कएल

१—देखिये—वर्णरत्नाकरे, अष्टम कल्लोल, पृष्ठ ६५

कारी चमकि चमकोक विश्रमताहु जिह्वाहि वोवाइ ताहु छाविम जिह्वा न छाड़ए जिह्वा छाविम ताहु न छाड़ए देवयोनि साण्डर । ७७ स । तयोगें नायका विवाद रयमल सदन तर मुगवा सहिवी मरुआरो मधुकुरी माठ फेना तिलवा प्रभृति पक्वान्न दल दुग्धपान नायके कएल धूरू से म साण्डे हाथ कपाओल मवोआल पालिका तन्नधावन कएल नवे हाथ एपाआल छेरह गुनै सयुक्त पचकपरसहित दवकपाक सराजि कए पान देल नायकें पान लल मुलगुद्धि उपयप ॥[1]

(अष्टम कल्लोल)

(वर्ण रत्नाकर से साभार उद्धृत स्फुट गद्यांश)

१—देखिये—वर्णरत्नाकरे, अष्टम कल्लोल, पृष्ठ ६८

अथ विवाहवर्णना

गोत्र मेलापक भव्र पूगयज्ञोपवीतदान निवह द्वादशक नवपचक तत्तीयेकादशक चतुर्दशक समसप्तक । ७३ क । षडष्टक प्रीतिषडष्टक इथि आठहवा योनमध्य उत्तम योन निवह तदनन्तर अघ पाद्य विष्टर आचमनीय मधुपर्क निवह । तदनन्तर गोत्र प्रव (र) क अनुगति अग्निसन्धा ने म दक्षिण क यादान निव्वह तदनन्तर समाज्जन सेचन उपलेपन उल्लेखन इ पचभूसस्कार अग्नि स्थापन कए आज्य वर्हि ब्रह्मासन समिध स्याली । सत्रव पद्दता प्रणीता प्रोक्षणी स्त्रुव दपद लाज समो सूप्प प्रभति ये द्रव्य से आसादि ह्लुअह आधार आज्यभाग प्राजापत्य स्विष्टिकृत प्रायश्चित्य राष्ट्रभृता होम नि र्वाहि इष्टागमना लाज दिह करग्रहण अश्मारोहण प्रश्निण सप्तपदाक न निर्वाहका मध्य सर्वजनसाधारण यथोचित परिप्राप्त प्राजापत्य विवाह निव्वह सन हास सोन लइ सिंदुरदान करू अलकार परिच्छद निव्वह ॥[१]

— अथ पुनर्भोजनवर्णना —

प्रहर रात्री भितर विभा । ७६ ख । रीक अवसर भेल चोरगाहि ठा निपल तदनन्तर अपूर्व्व पीढी एकठाम धम्ल सेवकें पटा देल वधा रत्नमण्डित नायके देल वाणस्वर तमाकू सुवर्णघटित रत्नरचित चौरा तदनन्तर अठ पहरि पानि कर्प्पूरक वासल सुन्दरी देल नायके पएर पखालल छुची भए बस लाह तदनन्तर कपूरमजरी क्षिरोदक लोहरी प्रभति आगर हैमन्तक पीटल वटइक नहुतहु छा सुगधापितहु मोट तैंतरिक पत्रप्राय अइसन सुगन्धे अधिक उप गत कए दविक अइसन देख तेरिआमहिसि पाडी कम सात हाथ पागल आरा एघा दिन एक लाग न्नि द्वि लागए नहि तीनिकाण्ठे वरहुरवुदि महिसि वढगोपक दुहलि अघर्तेरह वपक वेटिआ नें औटल चलाओल लेवारी पडक ज्वाला अडी डोठी वाना पाठी घने लाले मधुरें उबालें दू । ७७ क । घ औटल जाहि सुन्दरीक पाछु भए व दप्प टोकार पालल अछ गए भावाभाव विवर्ज्जित य सुन्दरी ते उप सीचलि दुघ पोरल हृदयक संरिकण तिनि हाथ चाकर निमुठ हाथ ठाग मणाफणप्राय पोरइतें मात्र एगारह आगुर वरखो पललि काचे कप्पूरे लेसन दल तैंसन दघि सर(ल)क चन्द्रमा पूर्णिमा प्राय अमतहु जिन स्वादे दगने पवित्र दधि उपगत करू ..णक चौरा दुधे तेओल चिउला उपर सुन्दरी दघि देल कटइते कान्ति टुटइते कपति पात्र देयिते थमति सुन्दरीक करकमल पल्लवप्राय सोनाक छार्पे छेजोल हासप्राय दधि प्राय देल नायके पचग्रास कएल

१—देखिये—वर्णरत्नाकरे, अष्टम कल्लोल, पष्ठ ६५

भारी चलहि चलचीर विधिचतुराह त्रिशूलहि चौथाह ताहि दृष्टाविम त्रिपुर न छाड़ए त्रिपुरा दृष्टाविम ताहि न छाड़ए देवयोनि भाण्डर । ७३ क । संयोगे मायका विवाह रचल तदनन्तर सुगवा सहिते महमाता मधुपुरी माड कैना तिमका प्रवृत्ति पवरातृन देख दुरभ्यास माथे धएल धूम ले म लाण्डे हाथ रूपामोन मचाशान पलिवा तत्पावन धएल नव हाथ एपामोन तँरहु गुने वयुक्त पचकनग्रहित देवरुपार सराजि कए पान दन मायर्ष पान लेल पुनपुलि उपमल ॥[१]

(अष्टम कल्लोल)

(वर्ण रत्नाकर से साभार उद्धृत स्फुट गद्यांश)

१—देखिये—वर्णरत्नाकर, अष्टम कल्लोल, पृष्ठ १८

पृथ्वीचन्द्र चरित्र

या

वाग्विलास

कर्ता—श्री माणिक्यचन्द्र सूरि
वि० संवत् १४७८

— पृथ्वी चन्द्र चरित्र या वाग्विलास —

(माणिक्य चन्द्र सूरि सं० १४७८)

(चुने हुए उत्कृष्ट अंश)

— प्रथमोल्लास —

पुण्यलगइ पृथवीपीठि प्रसिद्धि पुण्यलगइ मनवांछित सिद्धि । पुण्यलगइ निमल बुद्धि । पुण्यलगइ घरि ऋद्धि वद्धि । पुण्यलगइ शरीर नीरोग, पुण्यलगइ अभंगुर भोग, पुण्यलगइ कुटुम्ब परिवारतणा संयोग । पुण्यलगइ पलाणीयइ तुरग, पुण्यलगइ नवनवारंग । पुण्यलगइ घरि गज घटा चालतां दीजइ चदन छटा । पुण्यलगइ निरूपम रूप अलक्ष्य स्वरूप । पुण्यलगइ आनंददायिनी मूर्ति अद्‌भुत स्फूर्ति । पुण्यलगइ भला आहार । पुण्यलगइ सवत्र बाहुमान, घणु किस्यु कहीयइ पामीयइ केवलज्ञान ।

एह पुण्य उपरि राजाधिराज पृथवीचद्रतणऊ कथासबंध भणीयई, ता ईणइ राजप्रमाणि रत्नप्रभा पृथवीपीठि असख्याता द्वीप समुद्र वतइ । तीह माहि पहिलउ जबू द्वीप लक्ष योजन प्रमाण जाणिवउ । तेह पापलि लवण समुद्र द्विलक्षयोजन प्रमाण जाणिवउ । तेह परइ धातकीखंड द्वीप च्यारि लक्षयोजन प्रमाण जाणिवउ । तेह पापलि कालोदधि समुद्र आठ लक्ष योजन प्रमाण जाणि वउ । तेह परइ पुष्करवर द्वीप सोल लक्ष योजन प्रमाण जाणिवउ । तेह पापलि पुष्करवर समुद्र बत्रीस लक्षयोजन प्रमाण जाणिवउ । आगलि वारूणिद्वीप चौसठ लक्षयोजन प्रमाण जाणिवउ । तेह पापलि वारूणि समुद्र एक कोडि २८ लक्षयोजन प्रमाण जाणिवउ । ईणि परि ठाण बिमणा द्वीप समुद्र जाणिवउ । कवण कवण क्षार द्वीप क्षीर समुद्र, घृत द्वीप, घृत समुद्र, इक्षु द्वीप, इक्ष समुद्र, नदीसर द्वीप, नदीसर समुद्र अरूण द्वीप अरूण समुद्र अरूणवरावभास द्वीप, अरूणवरावभास समुद्र, ईत्यादिक द्वीप समुद्र असख्यात । तेहमाहि पहिलु जे जबू द्वीप तेहनी नाभिइ मेरूपवतजिसिउ प्रदीप । तेहनइ दक्षिण उत्तरइ सात क्षेत्र, चउद महानदी, छ वर्षधर प्रवत, वतइ ।

तीह माहि वपणीयइ मरहठठ देस । जीणइ देसि ग्राम । अत्यन्त अभिराम । भलां नगर, जिहां न मागीयइ करा । दुग जिस्या हुई स्वग । धान्य न नीपजई सामान्य । आगर, सोननरूपातणा सागर । जेह देसमाहि नदी वहइ, लोकसुपइ निवहइ । इसिउ देश, पुण्यतणउ निवश, गरूअड प्रवेश । तीणि देसि पइठाणपुर पाटण वनइ, जिहा अ याय न वतइ । जीणइ नगरि चउसीस करी सदाकार पायलि पोढउ प्राकार, उदार प्रतोली द्वार । पातालमणि घरई, महाकायपाई समुद्र जेहनुभाई । जे लिइ कैलास पवत सिठउ वाद इस्या सवन्न देव तणा प्रासाद । करइ उल्लास, लक्षस्वरी कोटिध्वजतणा आवास । आनन्दइ मन, गरुउ राजभवन । उपरि अखंड सुवणमय दण्ड, ध्वजपट लहलहइ प्रचण्ड । जेह पाटणमाहि अनेक आश्चय वापरइ, चउरासी चउहटा कलकलाट करइ । किस्या ते चउरासी चउहटा एव चउरासी चउहटा जाणिवा ।

जीणइ नगरि अनक पामीयइ रत्न, जीहतणा कीजइ रत्न । किस्या ते रत्न अश्वरत्न, गजेरत्न, पुरुषरत्न, स्त्रीरत्न, अनइ पद्मराग, पुष्पराग, माणिक सिंहलीया, गरूडोदगार मणि मरकत, कर्केतन, वज्र, वडूय, चन्द्रकान्त, सूयकान्त, जलकान्त, शिवकान्त, चन्द्रप्रभ, सारकरप्रभ, प्रभानाथ, अशोक, वीतशोक, अपराजित गगोदक मसारगल्ल हसगब्भ पुलिंग, सौगधिक, सुभग, सौभाग्यकर, विषहर धतिकर, पुष्टिकर शत्रुहर अजन, ज्योतिरस, धुमरुचि, शूलमणि, अंशुमालि, देवानंद, रिष्टरत्न । कीटपखि, कसाउला, धूमराइ, गोमूत्र, गोमेय, लसणीया, नीला तणचर, खडगइ, अजधार, पटकोण, कणी, चापडी पिराजा, प्रवाला, मौक्तिक रत्न करी दीसइ भरिया हाट, अनेक सुवणमय घाट, पिहुली घाट, चालइ घोडा तणा थाट, लोकनइनही किसिउ उचाट । जिहा पुण्य विशाल तीसी पोसाल, जिहा छात्र पढइ चउसाल, तिसी ने सालि जिहा अध्यात्मतणी वात दढ, तिसा अनेक मढ । जिहा लोक जिमई अपार, तिसा सूत्रकार । जिहा पाणी पियइ सव, तिसी पव । जिहा रमलि कीजइ स्वभावि, तिसी वावि । जिहा आनन्द हूआ तिसा कूआ । पद्मवन खडमंडित प्रवर, महाकाय सरोवर । जिहा रगि कीजइ रावाढी, तिसी वाडी । जिहा सीतल फुरकइ पावन, तिसा पापलिया वन । इसु अन्याय रहइ दाटण पृथ्वीपीठि प्रसिद्ध पइठाणपुर पाटण ।

तीणि पाटणि राजाधिराज पृथ्वीचन्द्र इसिइ नामिइ राज्य प्रतिपालइ भुजबलि करी वइरी वग टालइ । जीणि राजा गौडदेसनउराउ गाजिउ भोटनउ भाजिउ । पचालन राउ पालउ पुलइ, कानडादेशनउ कोठारि रलइ । द्वार समुन्तउ ढोयण ढायइ, वावरउवारि बइठउ टगमग जोयइ । चोडनउ दडि चापिउ, कास्मीर नउ कापिउ । सोरठीयउ सेवइ, तुटि नकरउ देवइ । अग देसनउ अगि ओलगइ, जालधरनउ जीवितव्यकारणि रिगइ । घणु किस्यु

धितणा परिमरा महमहइ छइ मातीतणी सिरि लहलहइ छइ, फूलपगर भरिया छइ कटीप्रमाण पायपीढ सयुक्त पुरुष प्रमाण सुवणमय सिंहासन माडिउ छइ। तीणि सिंहासणि राजा बइठा। किसिउ राजा दीसइ छइ मस्तकि श्वेताल पत्र छइ, पासइ, ढलइ चामर पवित्र, वाजइ विचित्र वादित्र, मस्तकि मुगुट कानि कुण्डल, हृदयि हाराद्धहार, महाउदार, धनदत्तणउ अवतार, रूपतणु भण्डार,। धाराउ किसिउ कहीयइ जिसउ पृथ्वीलोकतणउ इन्द्र, जिसउ सोलकलासम्पूण चन्द्र, इसउ दीसइ छइ पथ्वी चन्द्र, नरेन्द्र। तिसिइ अवसरि प्रतीहार आविउ, प्रणाम नीपजाविउ। राजा साह्मी दष्टि दीधी, पुणि वीनतीकीधी। जो अयोध्यानगरी हूतउ, दूत तुम्हारइ द्वारातरि आविउ। मनितणइ उत्साहि जइ हुइ आदेश। मेल्हउ माहि। हुउ राजा तणउ आदेश, इति कीधउ सभामाहि प्रवेश। राम रहइ कीयउ जुहार, अलंकरिउ योग्य आसण उदार। राजादूत रहइ बहुमान दीधउ, कुशल प्रश्न कीधउँ। आनन्द उपनउ अत्यन्त, हिवडूत वीनवइ काय विशेषवन्त। जिहा लोकरहइ नही किसीउ क्लेश, जिहा नही वइरीतणउ प्रवेश, पुण्यतणउ निवेश। अनेक ग्राम नगर सोनारूपातणा आगर, मनोहर छइँ कोसलादेस।

तिहां छइ नगरी अयोध्या। किसी ते नगरी धनकनक समृद्ध, पृथवी पीठि प्रसिद्ध। अत्यन्त रमणीय, सकललोक स्पृहणीय। पृथवीरूपिणी कामिनी रहइ तिलकायमान सव सौन्दय निधान। लक्ष्मीलीलानिवास, सरस्वतीतणउ आवास। अतुलदेव कुलि मडित। परचक्रि अखडित। सदासुठाकरि पालित, रमणीय राजमार्गि शोधित उत्तग प्रकार वेष्ठित। सदाआश्चर्यतणउ निलय, वसुधावनितावलय। निरूपमनागरिकतणउ ठाम। मनोभिराम। जनित दुजन क्षोभ, सज्जनोत्पादित शोभ। पुरूपरत्नोत्पत्तिरोहिणाचल, कुलवधू कल्प लतारत्नाचल। जीणइ नगरीदेवगह, मेरूशिषरोपमात, धवलगह स्वर्गविमान समान। अनेक गवाक्ष, वेदिका, चउकी चित्रसाली, जाली, त्रिलसा, तोरण, धवलगह, भूमि गह, भाडागार, कोष्टागार, सत्रागार, गढ, मढ, मदिर, पढवा, पटसाल, अयहटा, फडहटा, दहकलस, आमलसार, आवली वदरवाल, पक्खण, पताका दीपइ। सर्वोसर मत्रामर, माजणहरा, सप्तद्वारातर, प्रतोली, रायगण, घोडाहडि क्रपाडउ, गुणणी रगमडप सभामडप समूहि करी मनोहर एवंविध आवास। जेह नगरिमाहि दोसी, नस्ती, साह वसाह पटउलीआ, पटसूत्रिया, पजूरीआ बीजउरीआ कणसारा, मणसारा, मणारा, नवकार, भोजकर, भला सामा अनेक लोकवसइ। पर्णीचसइ व्यवसाईया व्यवसाय वियइ उल्लसइ। जेह नगर पालयोया अनेकि कूया वावि सरोवर नई नीक निरूपम उद्यान आव नींब, जांबू जबीर, बीजपूर प्रमुख वक्षावली करी प्रधान च्यारि पोलि, प्रधान [illegible]तणीआसि। प्रभात समइ सूयतणे किरणेकरी प्रासादतणे शिषिषि

भरिउ सरोवर, ऊपनउ आनन्दभउ। जोसी तेडी महोत्सवतणु मुहूत लीधउ, अभीष्ट जनरहइ तहउ कीधउ। इसिउ करता आविउ आसो मास, दिसि सप्रकाश, कमलवन उल्लास, हंसतणु विलास। कादव सूकइ नई निरमल पण मूकइ। विक्सइ कुसुमकली, परमेस्वर सवन पूजतां पूरइ मन तणी रली। तिसिइ आसोसुदि पंचमी तणइ दिवसि, मोटइ आडम्बरि नरेश्वर सरोवरतणी पालि पुहुता, धजपट दीसइ लहलहता।

तिसिइ रत्नमंजरी कुमरि राजारहइ वीनती करखी तिहां कुतिग जोइवा आवी। जेहतणइ परिवारि, सघी अनेक प्रकारि कस्तूरिका कपूरिका, लीलावती, पद्मावती, चन्द्रावती चन्द्रउली, चम्पू हंसी सारसी, बगुलीअनेक सघी वतइ। सीह सहित तिहां आवी पितारहइ प्रणाम नीपाजावी। उत्संगि बइठी, दिव्य रूप देखी रायतणइ मनि चिंता पइठी। एह योग्य स्वण्वर, किं नर, किं विद्याधर इसिउ चीतवतइ नरेस्वर, सरोवरमणी दृष्टि दीधी। तु निमल जलि, बइठा कमलि, हंस करइ रमलि च्यारइ दिसि वासीइ परिमलि। कारंड कुरल ,कल हंस कलगलइ, तापललइ। मोर वासइ, सपनासइ। आडि पपीआ तरइ ब्राह्मण स्नान करइ। माहि शतपत्र सहस्त्रपत्र कमलवन, दीसता प्रीति पमाडइ मन। गेहुरी दडकलस झलहलइ, लहरि ऊछलइ। ज्य मोता राजहंस एक सरोवर हूतउ ऊडी बइठउ राजातणइ हाथि निहालिउ नर नाथि। हूकउ रूपवन्त, रूलीयामणउ, सोहामणउ, वेतलावण्योपेत। जिसिउ लक्ष्मी देवता तणउचमर, जीणइ मोहीयइ अमर। कुंदकुसुमस्तबकसमान, प्रधान। पक्षिकुलावतंस इसिउ हंस। कुतिग करी कुमारी लीधउ, राजा दीधउ। जतलइ जोअइ कुमरि तेतलइ हंसि जिमणी पाय विस्तारी। कुमरि पायमाहि घाती, मलीपरि साती। ऊपडिउ हंसु तत्काल पडिउ ध्रसु। घमघसतउ ऊठिउ राउ, कहइ घाउ घाउ वलिउ निसाणि घाउ। राउपायक पल भलिया। वीर सवि मिलिया। धाइ राणा, ब्राह्मण घर ऊभाणा। हुवे माठा, सर्वेत्रिवाडी माठा। बुब पडी राउ धायउ हम पूठिइ जेतलइ हम धाई पइठउ कमलमाहि तेतलइ। जे नारू, ते पइठा सरोवर माहितारू। समग्र सरोवर गाहिउ, पणि हंस न साहिउ। निस्वास मेल्हि राउ पाछउ वलिउ परिघउ परिवार मिलिउ। राणी ते वात जाणी, मूर्च्छा पामी सप्रणी, सचेत कीधी छाटी छाटी पाणी। राजा आवासी आया, कन्यातणु दुख धरता छ मास अति क्रमाया।

तिमिइ आविउ वसन्त, हूउ शीततणउ अन्त। दक्षिणदिसीतणउ शीतल बाउ वाइ विनसइ वणराइ।

"साव्ये मल्ला मासडा पण वइसाह न तुल्ल।
जे दवि दाधा रूपडा तीह मायइ फूल्ल॥'

आदेशदीधउ । जु को पृथ्वीपीठि राय मइ राणउ, तुम्हे जाणउ, ते समग्र ईणि स्थानकि आणउ । तिवार पूठिइ स्वयवर मडप सूत्र धारपाहि करिविवा मडाविउ हु तुम्हक दइ आविउ । हिव तुम्हे तिहा पउधारउ, ए वीतती अवधारउ, राजा सामदेवनणइ मनि आनद वधारउ ।

इसो वार्ता शोभना दूतम्हइ बहुमान देनु कटक लेइ राजा पृथ्वीचन्द्र स्वयवरमणी चलिउ, कटकमारि पातालि शेषनाग हालिउ । हाथ मा घोडा नही मोडा । जिस्या ते हाथीया छइ सिहलद्वीपतणा, जअनगरतणा, भद्रजातीक प्रचड, दल्ललित मुडादड, पर्वत समान, जलधरवान, चपलकान, मदजल झरता, आलि करता अनुनबल उछ्छल गलगजित करता गजेन्द्र साचरिया सरल तेजी सरवरिया । जिस्या ते हयाण, भयणा, कूरणा, कास्मीरा, हयठाणा पहठाणा, सरसइया, सीधउरा, केकाहला, जाइला, उतरपथा, ताजा, तेजी, तोरका काच्छूला, कांबोजा, भाडेजा आरट्ट वाल्हीकज गांधार, वापेय, तैतिल, वगत, आजनेय, काम्बेय, दरद सौवीर, क्षत्रशुद्ध, प्रमाणशुद्ध चपल सरल, सरव उमासणा, परीक्षणा जायउ सहइ, बपूकारिया र८ह वाको ऊठो समर पूठि, छोटे कोने सूधइ वानि, सइरनो ललवनाई मीछम्भी कलाई पूछतणी आभर्ण सूबल, हमणी, सूमनुाई, वाकी तूदवापलि, बहुलि पेटवाली, मुहिस्या, कालूआ, किरडिया सिहाडा, नीलडा सेराहा, कवि धूमरा, माकडा, दोरीया, बोरिया द्वादनावतव्यजन गुणि शोभित । शालि होत्र शास्त्र प्रणीतलक्षण लक्षित । ससइ घमइ साटि पइनइ, जुडइ दउडइ जिस्या सूयतणा रथ छूटा हुई तिस्या अनेक तुरगम साचरिया । तउ पायक पहरिया । किस्या ते पायक सूरवीर विक्रान्त दुर्गत पगपद लोपश्रमइ वयरीरहइ आक्रमइ । पवन वेगि पुलइ योधस्यु जुडइ । सेल्लकुत तोमर ताकइ, वयरीरहइ हाकइ । वेलासामी, न मेल्हइ स्वामी । नवनवा आयुध लिइ एक वार आकाश पडता घाव दिइ । किहाई न वासइ पाका, ओहलगइ हुइ जयपताका । ज धाइ पुलइ, ऊच्छलइ । इस्या पायकनी मिली कोडि ओह माहि नही पाडि । हिव रथ विस्तरिया । किस्या ते रथचपल तुरग मजूता, सुखिइ सुभट चालइ माहि बठा सूता । छत्री से दहायुध भरिया, वायु वेग सांचरिया । धडहडाटि धरामडल घघोलइ, रज माहि रवि बिब रोलइ । ऊपरि धज लहलहइ जाणे देव सर्व्व घया विमान गहगहइ । घाटवाजइ वयरा भाजइ । मूर्तिवता जिस्या मनोरथ, इस्या अनेक साचरिया रथ । इणिपरि चतुरग दल चालतां हूवां नरेश्वररहइ वाटइ अनेक ग्राम नगर आवइ लोक नवनवा भेटणा नीपनजावइ ।

मार्गि जाता आवी एक अटवी, हिवते किसी परि वर्णविवि । जेह अटवी माहि तमाल ताल हताल मालूर, खर्जूर अर्जुन चदन चपक बकुल बकुल,

चौर दुर्दांत अपार। ए विविध वेसि हैंडइ बोलाविउ बोल फेरइ। चडइ मालि अटालि, पइसइ परनालि पालि। कमाड उघाडइ, पुणि सुत कोई न जगाडइ। अघोर निद्रा दिइ नारि नाहना आभरण लिइ। कमारी पायबधन बाढइ पवत प्राय केकाण काढइ। चडिउ चार पचाडइ, राउना भंडार फाडइ। दामइ दिरमि, पुणि रात्रिइ साक्षात् कृता त। वीणासोतउ न मानइ चोरी बांधइ याही जाइ दोरी। लो सांकल चाडही घडीन रहइ पोडहि। हाकिउ ऊजाइ, हणिउ धाइ। करि कोधइ कसालि, जाइ लाक लक्ष विचालि। गढ मंदिर फाडइ धाजि अडइ। इम्यु ए चोर गढनड परनालि पइसतउ लाधउ, पाछी बांधउ। दाते चोर छोडि नाठउ, तुम्हनइ शरणइ पइठउ। पुणि ए पापी जीणि प्रजा सतापी। ए तुम्ह मयापउ अम्हनइ आवउ। नहीं तु घाय प्रहार दीजिउ, प्राणिहिं लेसिउ। अम्हारउ ठाकुर सपराण, तेह आगलि न कोई राय नइ राणउ। सांभलउ ए नगर त आगलि दीसइ पद्मपुर नगर महाविख्यात। तिहां छइ राजा समरकेतु अति सचेतु, बयरी प्रति साक्षात केतु। जेतलइ तेउ ए वात जाणिसिइ तेतलइ नाहरा अहंकारतणउ अंत आणिसिइ। एह कारणि चोर आपी निर्दोष थाउ, पछइ तुम्हे भावइ तिहां जाउ। इसी वार्ता सांभली —— —— —— —— —— हइया, तउ ते सुभट उल्हस्या ऊठिया नीठ ते जई नगरमाहि पइठा तु नाभिइ सास वइठा। जइ वीनविउ समरकेतु राउ दीपाडइ आपणउ धाउ। समरकेतु राजा कीधउ कोप, हुउ दलवइ निरोप। तत्काल सामाहुउ दल, मिनइ सुभट सबल। वाजइ प्रयाण भेरी बीहइ बयरी। पाट हस्ति मुंडिउ तह ऊपरि राजा चडिउ। रथ हथियारे भरिया, तुरगम पाखरिया पायक सांचरिया। चतुरंग दल निरमिउ, बाहिरि एकठउ मिलिउ। दीसइ छत्र ध्वज ऊडनइ रज। तउ तेह दूत मोकलिउ तिहां रही तीणें पृथ्वी चन्द्र प्रतिइ इसी बात कही। तु विचारइ दसि पइस, अन्याय करी इहां वयस। तउ तु अजाण, अजी मानि स्वामी समरकेतु तणी आण नहीं तु प्रकटि प्राण। चार दस तुझनइ होसिइ, लाभ न अतिग जो लिइ। इणइ वातइ दूत अप मानी बाहिरी काढी राजा पृथ्वीचन्द्रि दल सामहिउ, ए आपणइ सब आविउ। चालतां बड दल ऊपडइ धूलि पडल। कोइ आर पर विभाग बूझवइ नहीं, पिता पुत्र सूझइ नहीं। न जाणिइ आपणं दल न जाणिइ पराया दल। न जाणीयइ भूतल न जाणीय नभो मंडल। न जाणीइ पूर्व न जाणीइ पश्चिम, एकाकार हुउ। बिहु दल मिलते मान्नल वाजी जयढक्क वाजी रणचडण काहली वाजी रणतूर वाजिया। सुयवतनण भइ पहाटि नाण भिडइ त्रिभुवन टलव लिया सागा, मरानणे भूभुयाटि भूहि मिलिहि फाटी काहलनण बालाहले कायर कमकम्या नीसाण तण निघाति उत्तर भवा कंपविउ, ऐरावण ऊमडिउ दिग्गज

भलइ दिवसि प्रवहण पूरिउ। त्रि न सइ साठि क्रियाणो चडाव्या, सप्तविध पकवान चडाव्या, सप्तविध पकवान चडाव्या, सप्तविध करबालिया, पोता सपाणि भरिया, देव समुद्र वायस पूजाव्या। पभिल्ल मादल वाजिवा लागा, बाथरि कालणि भा चेला लागि, गलेलाहेलाहेल करवा लागा। कूअथभउ ऊभउ कीधउ नागर ऊपाडिउ, सिढ ताडिउ, घामतीउ घामत। उलीचइवा लागु वाऊरीऊ तलि पइठउ, नीजामउ नालि बइठउ। आडला पडइ, सूकाणी सूवाण घालवइ, मालिम वाहण जालवइ, सुरवर लहलय, वादित्रनादि समुद्र गाजी ह्या। हिव आगलि जाता हूता चिलीशाय वाया, आकाशि हुई मेघच्छाया। ऊडिउ पवन प्रबल, समुद्र हूउ उच्छहल। कल्लोल आकाशि ऊपडइ, बीहना लोक रहइ डीया चडइ। वेला लामी, वस्तु वामी। एक हा देव। करइ, एक देवध्यान धरइ। वाहण पवति आपललो मागउ, श्री पनिइ हाथि पाटीउ लागउ। तेहनइ आधारि तरतउ तरतउ, त्रिहु दिवसि पारि आविउ। नव माहि सरोवरि जल पीउ, फलभक्षण नीपजाविउ। आगलि जाता दीठउ योगी एक, मइ मायविउ नमस्कारतणउ विवेक। जोगी कहिउ तूरहिइ एक देसु बीजउ तेइसु। मइ कहिउ दिइ, पछइ मुज निढन न हइ ज देवइ त लेहिइ। जोगी — — — — — — — — — — — — नड नीतवइउ कुलीपुवमवपातक आवी रात्रिइ गढनणइ पालि पइसुरहिउ, तलारे ग्रहिउ। तइ राखिउ, मोटउ उपगार दीधिउ।

छासिइ केरउ आफरू, वासिइ केरुनेह।
नवलकेरू मोलीउ, बिसत न लागइ बेव॥

माहरी लक्ष्मी इहसरीषी हुई। तउ कहीइ आमतणी छाह, कपुरिसतणी बाह आडनउ सूर नदीनू पूर, ठाकरनउ प्रसाद, माकडनउ विषद बहीनउम पखीगणउ, सूपडानउ उठीगणउ दीवानु तेज, मात्रेईनु हेज, दासीनु स्नेह, बारहकाल मेह, थोडा मेहनउ त्रेह वहिसु आवइ छेह। लक्ष्मी तणउ त याप मीपनउ, हिव वैराग्य उपनउ। तापसदीक्षा लेसु हिव, जिम हुइ सवा सिव।

हिव समरकेतु राजा ते वार्ता सांभली, मनि वैराग्य पामिउ, राजा पृथ्वी प द्र प्रतिइ शिर नामिउ। अनइ इसी वात कही, ताहरू पुण्य अद्‌भुत सही। सु रहिइ कोइ अदृष्ट देवता सांनिध्य करइ, सव विघ्न रहइ। ताहरू अदभुत भाग्य, मुझनइ उपनु वैराग्य। विमासी जोयु तउ असार संसार। जिशिउ गजइनु मान, जिसिउ संध्यानुराग, जिशिउ भमरीनु पाग, जिसिउ माकडनु स्वरउ, जिसिउ समुद्रनु कल्लोल जिसिउ धजनु अचल, तिसिउ संसार चपल,

सीडेविणसइ निपुन दोत्र, चोभडा विणसइ कणकनुवाक, विषद प्रयोगि विणसइ रसवती तपक्कपाक वर सालइ विणसइ शस्त्र, पयरी विणसइ वस्त्र, जिम कुश्य सनि विणसइ सत्कर्म तिम जीवहिंसा विणसइ धम, राजा पृथ्वीचन्द्र समरकेतु धीपतिप्रतिइ कहिइ छइ सांभलु परमाथ हेव, टालिउ मिथ्यात्वतणी टेव म दक्ष्याधम नइ श्री अरिहंत देव, करउ सद्गुरुनी सेव, जिमटलइ पापकमतणा लेव ।

ए वार्ता साभली तहि बिहरहिइ मिथ्यात्वतणी भ्रांति टली, जैन दीक्षा लवा हुइ मनि रूलि । तेतलइ भाग्ययोगि दवसयोगिइ चारण श्रमण माहत्मा एक तिह आविउ, नेह सविहु तेहरहर प्रणाम नीपजाविउ । पगि लागी, दीक्षा मागी । तीणि दीधी, वाछित वार्ता सीधी । तिवार पूठिइ तेहे ऋषीश्वरे राजा माकलावी विहार क्रम कीधु, नरश्वरि आघउ पीयाणउ दीधउ । पहिलु पहुतु पदमपुरि, लोक हुप पमाडिया भलीपरि । तिहा परमहंस प्रधान स्थापिउ, कणवारतु भार आपिउ । हिव राजा पृथ्वीचन्द्र तेहनगर हूता सात पीयाण अयोध्या नगरि पहुता, स्वयवरि आविया दीठा राय सवै गहगहता । राजा सामन्तेवि साम्हइ आवी महोत्सवि करी माहिलिया भला उतारा दिया । तत हइ कपूर [illegible] कस्तूरी महम घभ कुभीतणा मनोहर घाट, पठइ भाट । रत्नमई तोरण नइ मोतीसरि, अल कारिउ कुसुमतण प्रकरि । वादित्र वाजइ मागलिक्य गीत घावइ । आरीसा झलकइ चालता स्त्रीना नेउर वलकइ । इसीइ मडपि राययोग्य माडया नामाकित सिंहासण मट मागण हारनइ पगि दीजइ वासण । तु राजा सोमन्तेव दूत साचरिया, ऊतारे फिरिया । राय सविहु योग्य आकारण नीपजा या, मोटे आडबरि समग्र नरेश्वर म० डपमाहि आव्या । जस्या देवलोक समपीया हुइ देव, तिस्या दिसइ सवि नरेश्वर सिंहासणि बइठा हेव । तिसिइ अवसरि राजा पृथ्वीचन्द्र जिसिउ साक्षात हुइ इन्द्र । इसिउ आवी स्वयवरि सभामाहि बइठउ, सविहु रायतण मनि इसिउ धकाभाव हुइठउ । ज एउ सही कन्या वरिसिइ, अम्हाउ आविवउ किसिइ करिसिइ । राजा तणइ मस्तकि छत्र, अनइ चमर ढलइ चित्र । राजा पृथ्वीचन्द्र देषी सकल लोक इसिउ विमासइ जिम अक्षर माहि ओंकार मत्र माहि ह्रींकार, गधर्व माहि तुंबरू, वक्षमाहि सुरतरू, सुगधवस्तुमाहि कपूर वस्त्रमाहि पाटण नउ चीर वीरमाहि शुद्रक वीर, गउ माहि कालिजक धाणि माहि वइरागुरू, द्वीपमाहि जबुद्वीप, प्रदीपमाहि रत्न प्रदीप, पवतमाहि मरुभूधर, जीवन हेतुमाहि जलधर जिम हस्ति माहि ऐरावण मन्मदतरमाहि रावण तुरगमाहि उच्च श्रवा तुरग, हरिण माहि कस्तूरीउ कुरग, धवल माहि वृषभ, प्रशस्यन्निमिमाहि उत्तरद्रुम अचनमाहि भूमडल,

तणइ कृपाणि राज्यलक्ष्मी वसइ मुखि सरस्वती उल्लसइ। तूठउ दारिद्र हरइ, दीठउ आनंद करइ। रणांगणि गयवरतणी गुडि गाजइ, शत्रुभट भाजइ। इस्तु भूपाल, एह तणइ कंठि घालि वरमाल। अथवा ए जोइ वाणारसीतणउ राउ, भजइ वयरीतणउ मडिवाउ। ए सराग दृष्टि अवलोकि, जेहनणउ प्रताप प्रसिद्धउ त्रिहु लोकि। जहनणइ गजन्दि चालतइ हुनइ इन्द्रन्हइ सपक्षपर्वत तणी शंका नीपजइ। जेहतणइ तरल तुरंगमि प्रसरतइ हुनइ वइरीरहइ प्रलय कालाढ्य समुद्र कल्लोलतणी शंका नीपजइ। इसिउ प्रचंडवल अपहमुजबल अकल सकल, कमल झनामा नरेश्वर वरि, माहरु कहिउ करि। अथवा विदर्भ देस कुडिन पुर नगरितणउ नरपति निहालि जे त्रिपमकांति, वहइ कर्णगाने इवरतणउ अवतार धनुधरपणइ हरइ अर्जुनतणउ कांतिप्राग्भार, जेहतणइ अतुल भंडार, प्रबल कोठार, सूनार तणउ नहो पार करइ शत्रु सहार, करइ भटट वइवार, मनाइवार, महाउदार, कंठिवरमाल घालीए मकरध्वज राजा अंगीकरि भर्तार अथवा गौडदेश हंसपुरपाटणनुस्वामी सिहरथराजा जोइ, जीणि दीठइ भाणइ होइ। जेह राजा सवधीयइ कुन्दचकुन्द कुमुन्द केतकी-कर्पूरधवलि कीर्ति मडलि प्रसरतइ हुनइ नवो सष्टि स्यापी, त अजना पल पवठ रहइ ... आणी। यमुना तणइ स्थान किकीधउ गंगाप्रवाह, नइ काग। ईश्वरन्हइ नीलकंठ पणउ टालिउ, विष्णु हइ कृष्णपणउ पखालिउ, बलदेव बाधव, पणउ उजुआलिउ। ईणिपरि जीणि महातणि सुष्टि फरी, तेहनी किसी वात वखाणीयइ अनेरी। इसिउ अलवेश्वर, सिंह रथ नरेश्वर, करि तु आपणउ जीवितश्वर। ईणि परि तीणइ प्रतीहारियइ राजाहरिकेतु सिहकेतु मकरकेतु धूमकेतु पदमरथ वीय बाहु सुवर्णबाहु शखध्वज पद्मदेव पद्मानंद क्षमकर पृथ्वीधर सुबाहु रत्नागद, हेमागद हेमरथ मणिरथ मणिशेखर रत्नशेखर, चन्द्रसोम सामप्रभ सूरतप्रभ प्रमुख नरेश्वर वर्णव्या वखाण्या, पणि रत्नमजरी कुमरि मनमाहि न आण्या।

हिव आगली दीठउ राजा पद्मोत्तर निहालिउ तेह तणउ मुखचन्द्र। ऊमटिउ आनन्द सागर मनि चीतवइ एउ मही गुणतणउ आगरे। निवारइ प्रती हारीयइ कहिउ हे कुमरि साभलो पुरा-पूर्वइ सगर चक्रवर्ति हुउ विख्यात वसुधातलि। जेह सगर चक्रवर्तितणइ चउरासी लाख हस्त जीहतणि गति महाप्रशस्त। चउरासी लाख तुरग उतलना जिस्या हुइ तुरग, चउरासी लाख रथ सहिजिइ सुरग। चउरासी लाख नीशाण वाजइ वयरीना भडवाद भाजइ। अत्यन्त अभिराम छन्नूकोडि ग्राम। गाम घाडइ काढना छन्नू कोडि साहण मिलइ छन्नकोडि पायक कलकलइ। चऊन्न सहस्र सबाध, चऊन्न सहस्र अमात्य

भक्त देव अठयासी ग्रहमाहिसउ जाणियउ। इह अठयासी ग्रहमाहि धूपकेतु जाणियउ।

जिवारइ पृथ्वीचन्द्रराजातणइ कठि वरमाला पडी तेतलइ धूपकेतु राजान्हइ रोस चडो। रोस हूउ विकराल, धूपकेतु देवतणातणउ मन्त्र स्मरीनइ अच्छालिउ करवाल। ते खग फीटो हूउ बेताल, जे उचउ नवताल, कठावल खितरूडमाल, करतलि कपाल बुभुक्षाभिभूत, जिसिउ यमदूत, कानटापरा, पग छापरा, आघि अडो पेटि कुडि, आघी रातिं, हाथि काती विकराल केश, मोकला केश, हडहडाटि हमइ, धरामडल धसइ। मस्तकि अगोठउ बलई भरव जिम वलकलइ। इसिउ रूद्र रूप वेतुल बपाणीयइ तेहनू स्वरूप। इसिउ बेताल देपी सहू भयभ्रात हूउ। तेतलइ धूमकेतु राजा उठी कन्या उपाडि रथि घातिवा लागउ। तेतलइ रायराणा धसमसिवा लागा। ततलइ तेह जि वेतालहूतउ अधकार प्रसरिउ। जीणइ अधकारि प्रसरतइ हुतइ अवर कवण लखइ, काई आपणी छाह न देवइ। गजेन्द्र गल गलारवि जाणीयहैं रथचक्र चात्कारपणइ जाणीयइ, विजयपताका किंकिणीक्वाणि करी जाणीयइ सूर्य शब्दि करी जाणीयइ, नीसाणा ढहढहाटि जाणीयइ इसि अधकार विपहुर दिवसतणा राक्षसाम्र प्रदीप प्रवर्तिउ। अधकारवात, अद्दश्यन क्षश पटल गगन उज्जवल निशान्द घूक कुल, निमल दिगमडल आश्रितपूर्वा चल, हूउ रविमडल, विहसइ कमल विस्तरइ परिपल वायु वाइ शीतल प्रसन्न महीतल जिस्या राता पारेवातणा चरण तिस्या विस्तरइ सूयतणा किरण। इसिइ प्रभाति हुतइं, दीसइ घोडा हाथिया, दीसइ पूरीया साथीया। दीसइ राय राणापरिवार पुणि न दीसइ रत्नमजरि कुमरि सार। तिवारइ सोमदेव राजा हूउ सचित परिवार हूउ शोकवन, पृथ्वी चन्द्र राय हूउ विछाय। स्वजन वग सबन्धीया राइराणा तिसिइ अवसरि [आपइ] उल्हाणा। ते मडप रत्नमजरीपाषइ निश्रीक दीसिवा लागउ। जियलवण हीन रसवती दया करणहीन सरस्वती गधरहित चन्दन घत रहित भोजन खाड रहित पकवान मानरहित दान छन्दरहित कवि शक्तरहित पवि विवेक रहित मण, वेद रहित ब्रह्मण स्वगरहित एरावण, लकारहित रावण शस्त्ररहित पायक, न्यायरहित नायक, फलरहित वक्षु तपारहित भिक्ष वेगरहित तुरगम, प्रमरहित सगम, नासिकारहित मुखमण्डल, कणपलि रहित कणकुण्डल वस्त्र रहित शृगार, सुवर्ण रहित अलकार तावुल रहित भचग प्रसिद्धिरहित प्रयाग ककणरहित बाहुदण्ड पणिछ रहित का दण्ड चरणरहित वाल राज्यरहित भूपाल, स्तभ रहित प्रासाद दान रहित प्रसाद, मुष्टिरहित कृपाल, ठस्लीरहित बाण, अणी

बिहुतणों धौल निर्मल । एकिवपालइ लावण्य एकि वधायाइ पुण्य । इसी परि वधाणितु स्थानकि आविउ, विश्वप्हइ आनन्द उपाजाविउ । राजा सोमेश्वि सचिहु रायप्हइ आवअन कीधो । नुणट हुइ घाडउ, कुग-प्हइ हाथिउ कणप्हइ आभरण धुणप्हइ पटकूल इणिपरि भक्ति कीधो । राय सेन्ने आपण आपण नगरि पहुता । राजा पृथ्वीचन्द्रप्हइ सामन्य नरेश्वर तणइ चावासि निगु मवनवे गोरवि शिवमय सुखमय दिवस अतिकुमर ।

अन्यना प्रस्तावि राजा पथ्वीचन्द्र अनइ राजा सोमेश्व राजसभा एकण बइठा । किसी ते राज सभा जीणि सभा पात्र नाचइ, विद्वांस बइठा पुस्तर वाचइ, माल मल्लविद्या मांडिया माचइ, रागरा रायप्हइ रग रहाविवा राचइ, सुहाबोला धुम बोली स्वामी कहूँ पसाव याचइ, कूडा सागइ चिरनाण विवाद करी स्वयमेव पाचइ । इसी सभा, विशु नरेश्वरि करि वली वाधी प्रभा । निसिइ अवसरि, हुय प्रसरि । पहुनउ वनपाल सीणि वीनविउ श्री सोमेश्व भूपाल स्वामिन । आपणइ उद्यानवनि श्री धमनाथ तीर्थंकर देव पाउधारिया, जीणि परमेश्वरी त्रिभुवन आनन्द वधारिया । हिव अवसरि आविउ, श्री धर्मनाथतणउ कहिवउ, चरित्र महा पवित्र । इणि अवसर न प्रवरगुणि करी राशानी आपणइ आवसि मननणइ उल्हासि । पतयकि पउढी हुती विपहुर रात्रिसमइ निद्रभरि वतमान हुतीइ चऊ महास्वप्न दीठा । किस्या ते महास्वप्न गज १ वृषभ २ सिंह ३ लक्ष्मी ४ पुष्पमाला ५ सूय ६ चन्द्र ७ ध्वज ८ पूर्ण कलस ९ सरोवर १० समुद्र ११ विमान १२ रत्नराशि १३, निधूम वह्नि १४ । इह चतुदश महास्वप्नतणउ सामलउ जूजूउ वणन अधिकार । राणी प्रथम दीठउ गजइ । किसिउ गजेन्द्र चतुर्दि विनयवत सप्तांगप्रतिष्ठिता गज इ गुणि अधिष्ठित विशाल कुंभस्थल, विस्तारकर्णविल उद्दण्डशुण्डादण्ड, तेजिकरी प्रवड मदजलवासित कपोलमूल, भ्रमरकुल अनुकूल परित्यक्तसकल दोष उत्पादितसकल जननमन संतोष, प्रधान ऐरावता गज समान महाकाम, वपवत प्राय भद्रजातीय अद्वितीय जहनणी गत प्रशस्तो, एवविध दीठउ हस्त । १ । तउ दीठउ वृषभ । किसिउ ते वृषभ निजल धारा धर धवल, विकसित काशकुसुमसमुज्ज्वल, विशालककुद चंद किरण तणीपरिविशद सूक्ष्मसुकुमाल रोमराजिविराजमान स्निग्धकांति देदीप्यमान अभगश्यामनशृंग, सुन्दर समस्त अंगोपांग, विशुद्धनत पक्तिशोभित प्रमुख प्रदेश, चारू चरण सनिवेश प्रसन्न वदन दुग्ध धौत धवल लोचन, त्रिणिउ आलनउ हुइ प्रमाण, अथवा कलाम पचास्यू लिइ बाम्ह इसिउ अत्यंत शुभ, दीठउ वृषभ । २ । तउ राणीयइ दीठउ

सीह । किसिउ ते सीह? कम्पित शार्दूल, अद्भुत प्रभाकर रक्तोत्पल सुकुमालतल, लांगूलनागो आरक्त जिह्वा जिसिउ हुई अशोकप्रवाल, विस्तीर्ण कंधर सटाभिराम स्कंध, वज्रसार शरीर अथ, प्रवरपावर प्रकोष्ठ कमलकंद रक्तोष्ठ तीक्ष्णदाढा विडंबितचन्द्र, पराक्रमनडाउ वदन, पुच्छच्छटा पाडी आस्फालतउ, पीतलोचनि भूमिरति निहालतउ, मृगगणमुखगलितमान किरता निकरनेत्र गौरवशिखरउ अंग, असम पराक्रम हस्त मदल अपराजित अबीह एवंविध दीठउ सीह । ३ । तु चीठी देवी लक्ष्मी ॥ ते किसी -हिमवंतपर्वतनाइ शिखरि, महाप्रासादि पद्मद्रह माहि योजन प्रमाण विमल कमलि सन्निविष्ट, चन्द्रसमान वदन, कमल समान लोचन निर्मल रूप महप देदीप्यमान कुंडल उदार प्रलंबितहार अद्भुत शृंगार, दिग्गजेन्द्र अमलकमलि करी अभिषिच्यमान, पगतलि चापी रही नवनिधान एवंविध परम कल्याणमान मनोरागराज, एवी लक्ष्मी दीठी । ४ । तदनंतर सुगंध सार नाना कुसुम विरच पाडल सेवती वार जूही केउड़ा वउल थी चम्पा मरुआ मंदार मचकुंद करणी प्रमुख कनकाभरण कुसुमि निरंतर भ्रमर भर गुञ्जमान परिमल एवंविध दीठउ माला युग्म । ५ । तउ दीठउ चन्द्रमा । द्वितीय चन्द्रमा रात्रिगणइ समधि उदय करी सरस तारहरी, रोहिणीरमण, यामिनी विविधेश्वर, अमृतमय मूर्ति, उज्ज्वल

श्री सूर्य देखइ उदइ प्राणाकमलां द्वार ऊघडइ पूजा थइइ, पाप सवि टहइ, मुनिवर धर्मध्यान करइ, ताहं वाम विनोद ताहइ सेव मल्हार गाइइ । माहि अनेक उत्तम गृहस्थ पण मन पग चारित्र सूरवली वासल विहगइ, चन्द्रमाए उदइ, एवंविध प्रवर किरण निकर दीठउ सहस्रकर । ७ । तउ दीठउ ध्वज । किसिउ ते ध्वज इन्द्रावलि वाई एवं गरुड मारग, प्रगटि हेठउतरइ शिखरि कलश सुवर्णमय दंड, तेह ऊपरा अंकुश, कनकमय कमल, भंगी भंगी रत्नमय पाटला, तिहां किसी रत्नाउ ऊपजी, इसीपरि, निरुपम दंडक तिहां नीपजतउ कर हरिउ गगनांगणि लहलहतउ, वाई सहसनटु निमल नीरउ, ताइंह दीठउ ध्वज । ८ । तउ दीठउ पूर्णकलश । किसिउ ते पूर्ण नीरउ, पाणि दीठउ ध्वज । ८ । तउ दीठउ पूर्णकलश । किसिउ ते पूर्ण कमल-नवन घटित रत्नमय पदपीठ स्थापित, कनक पुष्पमाला स्थापित माहि अमरपूजित पवित्र विराजमान आमुक्तरत्न मांगलिक लक्ष्मी प्रधान मनइ विरह इम ए दीठउ पूर्णकलश । ९ । तउ दीठउ सरोवर, कमलनउ पवित्र पानियउ विमल, देदीप्यमान मयूर पंच नउमाकर चउकी पउदही शरदगइ, वाइ वाइं सहित अवनमइ उपरि ना सरोवइ पड कूह नर वइ, समणागरनीर दाइइ टहर शरीर गाइल कुसुम करियन कलहंस कमलगइ तात्कणा क्वार हंसइ राजहंस रमई, मनरमइ चकोर चक्रवाक भूइ, सुमेहिता चढ़ावइ मोर कलाई करइ कलाई, आदि परादा गई, ए कुंभ क्वार करइ, मणिमय

लोर निरय गारइ, मदन नियारई, मध्या विधि साधई, अर्धमर्दनम आरोपइ, पोलीयाँ पावरे क मदह क्रोपइ, तिमिर गुणगणउ, सहकार अप देवता लगउ नियाल, देहरी दक्षणलय आगमनारा लागइ, अवहारिणी पूप म धूलणी नूपुर धराबइ, तहि श्रीनिरलभ दीसइ हीयउ विहार, यत धनइ आनन, सेम गहार नादइ, पाहि और धातरूप कुम्भराग गदाराटिनगुर्भवती हीमयदी चमलवन विलास यामन, देवता जिहाँ क्रीडा बामइ, एवविध उदार, वृतागार, आयतागार, महाराजाहर, दीठउ पद्मकमलतापमंडित सरोवर। १०। तव दीठउ समुद्र जिलिउ ते समुद्र अर नजलु अवार वहल्लोल फाटिनकुल माहि मगर महामत्स्य नक चक्र पाठीन चीकुलि मिलिमिलनणी फूल पडइ, एवि चपडइ, लहरि रामइ, गाजी गाजइ, दक्षिणावर्तसंखणी पूग फिरइ, माहि और प्रवहण सोचरइ। पुन पूरी (व) इ तहि नागरीमइ, वाहण वाहणरइई सूधि मिलिली आपणई, मालीप्रवाला आगरणा लीजइ, जिहाँ एवर पेपिर पाणी पीजइ, इतिउ आदमर्तलणउ निमर, पुनी गोठ हुइ बलय, गुहिर गभीर, आगमीर, समुद्र राणीयइ दीठउ समुद्र। ११। तउ दीठउ बिमान। जिलिउ धिमान सुवर्णमयभिमि, रत्नमयविच्छित्ति, प्रकाश्यमानशिखरो धामभाल, गगन तद्भीरुहइ कुंडल समान, जेहुमाहि और दव देवी रम्भा रइइ, एहि जनि ... बोलइ हुते न गाइ, अनेक परिएल महक इ रचना चमत्कार मन महमहइ, एवविध विपुधवधूशरीरोचा दनार तेज पडति निर्मितमानस गर नीठउ विमान। १२। तउ दीठउ रत्न राशि। जिलिउ ते रत्नराशि और चया वहूर्य चन्द्रकांत अक्रांत पुष्पराग पद्मराग मरकत करकत चक्रसमनवरप्रभ प्रभाताप अतीव किरणीय अपरा जिन मनोहर मनारम हतगर्भ माहितात मयुखरस लगउ राशि, विरचित विचरप्रभाग, देवइ राणी मानवइ उत्साति। १३। तउ दीठउ निर्धूम वैदवानरज्वालि अक्मनीय प्रदक्षिणावर्तज्वाला करी रमणीय मधुपुञ्जवारवरिणी वमान, कूर्मपरा/म देवता मुखगमार धूम रहित तेजसहित मानोनममूल, जिदवानुरूप प्रबर एवविध नीठउ वैदवानरा। १४।

ए चतुर्दश स्वप्न देवी राणी नामी, निद्राभागी, मनि विमासिवा लागी। मइ तो ए सकलमुविणा दीठा, इहतणा फल हुसिइ अत्यन्त मीठा तउ स्वामी कनइ जाइसु, जिम रुडेहु पाइसु। इतिउ विमासी वइ न बोलावी दासी, सरली महिली गमि पासी राणी स्वयमेव पासी। कुसलासि हरविद्दे मन, गहली जिहाँ राजा तिहाँ गहुँन, नयविनय करली। रायरहइ निमा टाली राजा तणइ भारैमि भद्रासनि बइठी। इस्नवानी सांभली राजा फडुरदिइ, राजी हुरयि

प्रहिउ । निवार पूठिइ आपणइ स्वस्थानकि आवी पल्यंक बइसी सतीयहि धमजागरिका नीपजावी । प्रभाति नरेश्वरि सभामाहि स्वप्नपाठक पाछि इ विचार कहाविउ दान देउ निमित्तीयम आनिंदइ नीपजाविउ सम्पूर्ण दिवस अतिक्रम हुते परमेश्वरतणउ हुउ अवतार देवता करइं जय जय कार ।

पंचमोल्लास

तत्काल मननणी रत्नी, छप्पन दिक्कुमारिका मिली । तेहे सूतीकर्मतणी उपचरीति नीपजावी । तन्नतर सौधर्मेन्द्र देवलकइंद्रतहइ आसनकंप हीनउ । पहिलउ इन्द्रप्रह कोप ऊपनउ । वज्र उगामिउ जान दृष्टि निहालिउ । आमण प्रकंप अवि मीयन न । जानिउ आमण छांडि दशदाश करी गूढे पइ मस्तकि हाथ जोडी नमस्तव-कहिउ । इह आमणि बइसी हरिणेगमेसी देव बोलाविउ तत्काल आविउ । इन्द्रनइ आदेशि सुघोषा घंटा आस्फालीनइ देवलोकि जणाविउ । इन्द्रतणइ आदेश प्रमाणि पालक विमान चडी पंचरूपि परमेश्वर लेउ मेरु पर्वति आविउ । चउसठि इन्द्र मिलिया देव समूह हर्षि उल्लसिया आठ इन्द्र चउसठि आन्हा कलसि करी निर्मल जलि भरी स्नान करा घटा तन्नतर अनुक्रमण १ करा, विलेपन २ वस्त्रयुगल ३, वास पूजा ४, पुष्पारोहण ५, माल्यारोहण ६ वर्णारोहण ७ चूर्णारोहण ८, ध्वजा रोहण ९, आभरणारोहण १०, पुष्पगृह ११, पुष्पवर्ष १२, अष्टमंगलकरण १३, धूपोत्क्षेप १४, गीत १५ नृत्य १६, वाजित्र १७ सतरभेद पूजातणउ करणीय कीधु ।

तानि अवणदि गगन आविया दगुणपवागमेसि वाजित्र वाजियां वचन वचन पदि इ उत्तम तान गनान गणीयान नरेन्द्रीवान परिवरियान सदृग्म ठान वनधान पदहान अत्यानिक्रियान सभाप हारवान हालिजवान भरीन गन्धार प कुंकुम प कामिद्रवान मुगल मुक्ति...न नवमुक्ति...न पञ्चि ता... कपदमाद्री विलवीतान आमादिक्रवान गुरान नवमान दिव्यवान द्दुवादि... विवा... वाद्ध्यवान वरदान दिवि... वनानिक्रवान तमान्न ठाणन वन्दानम प मद्रियवान दिविदिविद... नुमरिवान दुदुवान पूजिवाता... वनान वसु... तर वान एत्नन्नान पदाइस ठान ! ऐति दुलित, मन्वर्शिवर, आमपाणिवइ वरदात्तइन्द्र स्नानमहोत्सव करी पुनरपि पंचरूपि इइ हर्षे एव माना गनइ मनावि मूकिउ । वसीन वचाउ श्याम दि, जापिनइ वधोवावि मुगलगनइ... वधि करी, मार्ग... इति ... हर ... मनारा वमाडुं ... मूठ ... इइ सरसानिक दम्यु ।

हिव प्रभाति दासी महिलीए राउ वधाविउस्वामी । तुम्हारे पुत्र आविउ राजा वधामणी दीधी, नगरमाहि सव महोत्स तणी पद्धति किधी। अलंकरिउ प्राकार, शृंगारिया प्रतोलद्वार । मच अतिमचतणी रचना हुई, स्वर्गपरीतणि सोभालई । ध्वजपताका लहकइ, पुष्पपरिमल बहुरइ । नाचइ पात्र, राजाभवनि आवइ अक्षतपात्र । सोमाइ भणता आवइ छात्र लोक अलंकरइ आभरणि गात्र उत्सव करिया एहइ ज वात । तीणि वेला नऊ कोरण बांधीयइ तोरण । बांधीयइ वदरवाल, उत्सव विशाल । तुलधीउ साहीयइ, मन उमाहीयइ । ईणि युक्ति अ म महोत्सव हूआ । नामकरणतणइ अवसरि माता-हृइ डाहुलइ धम बुद्धि हुई, एहभणी धम इसिउ नाम दीधउ, परमेश्वरि रमलिकर ता वालपणु लीधउ योवनवयि राजकन्यातणउ पाणिग्रहण कीधउ । अठइ लाप वष कुमारपणउ पालो पचास वरस (?) राज्यलक्ष्मी पामी, पछइ विरक्तियुक्त हूउ स्वामी । नवविध लोकांति देवतणी विनती लगइ सावत्सरिक दान दीधउ पछइ महोत्सवि सहित चारित्र दीधउ । विवरस छद्मस्थ काल अतिक्रमी, केवल लक्ष्मी पामी । विहार कम करइ भव्यलोक तारइ ।

हिवराजा पम्बीचन्द्र अनइ सोमदेव उद्यान पाल करहइ साढा बारलाख सुवर्णदान देइ, समस्त परिवार साथिइ लेई । परमेश्वर नमस्करिवा साचरिया, सकललोक ऊलटिभरिया । पम्बी रहइ अलक रण दीठउ स्वामीतणउ समोसरण । किसिउ ते समयदेव आवइ समोसरण नीपजावइ । ता पहिलु वायुकुमार देवता निर्मित सवसक वायु विस्तरइ तेतण काष्ठ कचवर हरइ आकाशि मेघ पटल पसरइ गधोदकि वृष्टि करइ फूलपगर भरइ गहगत रत्नमय पीठ बांधी ऊपरि जानु प्रमाण वर्णवर्ण कुसुम वरसइ चिहु दिसि दिव्य परिमल विलसइ । रत्नमय सुवर्णमय रूप्यमय त्रिन प्रकार च्यारि प्रतोली द्वार । तिहा चिहु पासे उत्त्वेस्तर सुवर्णमय स्तभ, ऊपरि मणिमय कुभ । इद्रधनुपमान पूरण रत्नमय तोरण । प्रत्यक्ष जिसी मागलिक्यनी पालि इसी वदरवालि । अनेकि विचित्र, विशाल छत्र । उपर स्वरूप कनक मय पूतली तणा रूप । जेहे लिखित सिंह शार्दूल गज, इस्या निर्मल नीरज पचवण ध्वज । इस्या समोसरणविचालि, मणिबद्ध पीठि विशालि । मकल मांगलिक्य मुख्य गरूउ अशोकवृक्ष । जिसिउ प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष इसिउ वारगुण चत्यवृक्ष । तेहतणी छाया रत्नमय सिंहासण जग नथ बइसइ वइसण । तजिइ जाई मर्कीयइ नीठ इसिउ रत्नमय पादपीठ । जिस्या विकसित सहस्रपत्र तिस्या पत्तर छत्रातिछत्र । अमर, देवपूइ ढालइचमर । एउ अधरीकृत आन्तियमडल लीय कर लक्ष्मी भर्यं कडल पुत्र इल कइ भा महल । जेहतणइ दर्शनि मिथ्यात्व

धर्म्म टलइ, इन्द्रिय आगलि धर्मचक्र झलहलइ। दिव्य दुंदुभिनादइ, त्रीणि निर्घोष गगनांगणि गाजइ, परतीर्थिकनउ अहंकार भाजइ। सहस्र प्रमाण योजन इन्द्र ध्वज लहलहइ, धूपघटा परिमल महमहइ, वाजित्र तणी कोडि दुहदुहइ। मनुष्य तणी कोडि आवइ, मनि उल्हसइ। इसि इन्द्रि समोसरणि परमेश्वर जगन्नेश्वर नवसुवर्णकमलि पग स्थापतउ, पूर्वदिशा उत्तर बारइ प्रवेश करई जिणि ध्यानतउ भविक लोकन्हई पाप मूंकावउ, पूर्व सिंहासनइ द्वारि पइसइ, पूर्वाभिमुख सिंहासनि बइसइ। चतुर्मुख हुइ भविक समुदाई। सनूरी, बार परिषद् पूरी, मिथ्यात्वमान चूरी, पापपटल चूरी। सर्वसत्त्वभाषा रिणी अमृतानुकारिणी मधुरवाणी लाभ जाणी, वखाण करइ, धर्ममार्ग विस्तरइ।

हिव बेउ नरेसर मनि गहगह्या, समोसरणि माहिं पहुता।

श्री धर्मनाथ इह प्रणिपात दउ, आगलि बइठा नरेन्द्र। बेहु तिवारे राजा पुण्यादिक भावनाइ चिंतवइ इति तामस करी देशनातव इसइ मान्यव वापु श्री धर्मनाथि तीर्थंकरि उपदेश मांडउ। किम्पु ते—

सद्धर्मश्च गतिर्णो स्वरूप[illegible] जात्यादिर्न बधुरि पौरुषमूरता श्री।
पुत्रा पवित्रचरिता गुरुदायकोत्र स्युपधर्म पद्य [illegible]ति ॥

अहो भव्य जीव! ए इस्यां धर्मनाम जाणिवां। कवण कवण पहिलु तो उत्तमकुलि अवतार ए धर्मनां फल सार। जइ जीव नरकुलि अवतार ह, तु किसिउ पुण्य करइ। तइ विश्वमाहि एह माणुसनां कुल जीवनां कुल, श्रावकनां कुल। इणिहि जाण्या आहेडा वागुरा पाटकी मछर धाधा मार कण्डा बाघरा मग तुई पाकधरगायाबजनां पारनां कुल जाणिवां। जीव गइ कुल अवरा पाप करा रहति जाय, पापु मनुष्यजन्म निरर्थक थाइ। इसि आवइइ उत्तम कुल दुर्लभ। कुल तां उत्तम कुल।

धन्यानां जिन्नतो [illegible] च [illegible]।
[illegible] च [illegible] पुलिगुरु [illegible] ॥ २ ॥

[illegible] प्राप्ति वड़े [illegible] अवतार। [illegible] कवन विचार— [illegible] गुदवन, [illegible] सुन्दरीजन, [illegible], पाबेरा, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] प्रमुख [illegible]। [illegible]। किम [illegible]। किसी [illegible]

सुश्रावकतणइ कुलि जीववधु टालीयइ, जीवदया पालीयइ। मिथ्यात्व परिहरीयइ सम्यक्त्व अंगीकरीयइ। पाणी भलीपरि गालीयइ इंधण सोधी ज्वालीयइ। अथाणू न राधीइ, अणतकाई न चापीइ। चारी न कीजइ सुपात्रि दान दीजइ, सुतीर्थि वित्तवावी लाभ लीजइ। आलोअण लई पाप धोई ई परिग्रह प्रमाणि पुण्यवंत होइय। उभयकाल सामायक त्रिकाल देवपूजा समाचरीइ, पुण्य भंडार भरीइ। बावीस अभक्ष बत्रीस अनंत काय टालीयइ, आठमि चऊदसि पूनिम अमावास चउमासी पजूसणा सव पालीयइ, पुण्यमाग उजूआली यइ। इसु श्रावकतणउ कुल तउ पामीयइ जइ पातइ पुण्य हुइ विपुल। उत्तिम कुलि लाघइ हूवइ गहस्थ रहइ जय हुई कुकल यतणउ सयोग, तु हुई पुण्य तणउ वियोग। जिसी ते कुकलत्र जे चालती कउयछि साची चलछि। आत्म कुटुंबर्थ्र भजकि परचित्तरंजकि। कपट कुटिल पटिष्ट अतिहिं अनिष्ठ। बोलती छउउ ऊनारई स रीसाई ओर मारई। जीमई जय छोलइ जलविइ असबद्ध बोलइ। वग ई करती गोन्हु गिन्हइ, परि विन्नोड करी बाहिरि मिलइ बोलावी बिसइ हाथ ऊधमइ। फूफूती सापिणी चालती चीत्रिणी। पुण्यद्वारतणी आगल, नगरतणी भागल। घणू किसिउ कहीयइजिसी मिरीसणी ऊगटि, जिम्हिउ चाम्तउ पतवणउ जिसी दाघजवरतणी बहिनी, इसी सतापकारि तु सपजइ नारी, जउ जीव पापकर्मि भारी। अनइ इसी सतापकारि तु सपजइ मारी जउ जीव पापकर्मि भारी। अनइ तु हुइ सुकलत्र, जइ पोतइ हुइ पुण्यपवित्र। जिसी ते सुशाल सुशील सदाचार सत्यवती विनयवती विवेकवती पुत्रवती शीलवती सुजाणि मधुर वाणि। देव गुरुतणइ विषइ भक्त पुण्यतणइ विषइ आसक्त सहजि सलावण्य, इसी सुकलत्र तु सपजइ जइ पातइ पुण्य। अनइ ज नरीरि सपजइ लाक्षावत घणू त पुण्यमणउ प्रमाण। ज मधुरगति चालइ पाबुद्धि पालइ। सहजि विचक्षण शरीरि बत्रीस लक्षण अलिकुलदज्जलदपामरा केशपाश अष्टमी चद्रसमान भालस्थल कामदेव कौदंडाकार भ्रूभग पूर्णचंद्र समान वदन मडल, आदर्श तलसमान कपोलयुग मौक्तिक श्रेणिगमात दशनमाल वक्षस्थल विशाल प्रचंड भुजदंड, इसी रूपलक्ष्मी अखंड तु सपजइ जइ पातइ प्रचुर पुण्यपिंड। अनइ जे द्रव्य ऊपार्जिवातणइ कारिणि एकि लाख देव न्दता सारा यइ मत्रविद्या सघरपणइ साधइ। राजसभा बुद्धिवत भणी वइसइ रणक्षेत्रि पहिला पइसइ। व्यापारकला खेलवइ घतपणइ भता रन्इ भोलवइ। जलमाग स्थलमाग आदरि आक्रमइ भूमडलि भ्रूग्रावलि भमइ। जागा पूठिइ लागि सुखपा लागइ एकि भाटा ठाकुर मागइ। एकि पाता पूगा पयि चालइ। एकि हाट दय। भणी घहरामरि धाउ घालइ एकि हल यहइ उलग

करइ लागा ठाकुर निशाण वजडइ, रिराया कवित्त कहइ। वस्त्र सहूइ सिणुन, पुण्यिवंती तु पामइ जइ पोतइ पूर्व पुण्य पवित्र घरि सुवर्ण मणि रत्न प्रधान प्रधान कुशलातन गजरथतुरंगमादि जाणिवा लक्ष्मी तणा विलास गणित।

हिव ते सवहइ वस्तुत, एह पृथ्वीचन्द्र चरित्र। एहइ तणइ एकि कुमर हूइ ते बालपणि पालीइ लालीइ वलि अनुक्रमि यौवनभरि आइ, तेज सग भावाधानशी थाइ। रूपइ अद्भुत न गिणइ, वराजा वचन निहणइ। सातीनशास्त्र संकुल वाणि कहइ, अहर्निशि दृष्टइ। लक्ष्मी लक्ष्मीगुणादि वरइ, कुल्यानविं विनवइ, रिगइ भूमि मनइ, पाडूए बवनि एकलडइ, मृदा वान वहती शाम्री पविइ स्वानना पदि नडइ, मारव्हइ हुअइ पावरी बलगइ, घणवार्ता हियइ न धरइ। इस्यां अम पुत्र प्रभवत्तु अवाल ए पाननू प्रमाण। मनइ अम पुत्र विवाहिया विवारइ महकिइ गत, तामामरत पुत्रमाननि निरिमवत गुणवत संयुक्त पमतान्त विषइ तत्पर, गुरुन पामिवइ जन, पामइ पृथ्वीचन्द्र भट।

इसिउ उपदेश सांभली, मननणी हली, परमेश्वर प्रतिइ विहु नरेश्वरी वीनती कीधी वली हे जगनाथ । सदेह भाजिवानइ अभउ हाथ, दुख टाली अपरि सनेह न भाजइ, सदेह मजन विरूद तूरहइ छाजइ । जहि कारणि इसिउ कहीइ समुद्रि उलघीयइ भारडि न मसइ, गजेन्द्र विडारीयइ रतहि, न ससइ । विषधराणा विष औरवियइ गुरुडि, न कुवडइ, वृदाखिहरतणा फूल लीजइ सहयडइ, न तूवडइ । सग्राम भूमिइ भिडीयइ राउति न दयामण मडारीतणा भार सालियइ अभीष्टि, न अलपामणइ । पवततणा टोल ताणीयइ नदी तणइ पूरि न वाहूलइ रायतणइ मनि रगि रहावीयर मधुरस्वरि, न पाह लइ । समुद्रि सेतुबध बाधीइ पवते, न काकरइ, इढगढ तणी पोलि भाजिइयइ गजेंद्रि न थाकरइ । याचक जनना दरिद्र टालीयइ दातारि लक्ष्मीवति न आजमदु सबल सदेह भाजीइ केवलीए न छद्मस्थि । तेइ कारणि तउ हे स्वामिन । अम्हारा सदेह टालि, एक सदेह ऊपनउ सरोवरतणि पालि, एक ऊपनउ अन्वी ठामी, एक सग्रामि, एव स्वयवरि ए सवे सदेह अपहरि । इसी वीनती सामली जग नाथ कहइ इस—अहो नरेश्वर । सामलउ हिव कहीइ छइ पूर्वभव, जिसिउ हूउ अनुभव । इणइ क्षेत्रि भृगुकच्छनामिइ नगर जिहा नमदा नदी प्रवर । प्रौढ धवलगृह, लोक पुण्यविषइ सस्पृह । जीणि नगरि महा धर मडलीक सेलहत्थ वरवार ढाउन इवइत भाथाइत ऊडणाइत फनहकार छुरीवार गलीकार कुभकार सीगडीया सावलीया जेठी यमवाहा मडारी कोठारी प्रभति राजलोक वसइ, सवन भवन देषी मन उल्लसइ । जिहा पद्म श्रीनाभि सरोवर महा मनोहर जिहा राज्य पालइ द्रोणनामा नरेश्वर । तेहतणा सागर अनइ पूरण इसिइ नामि पवित्रचरित्र, बि पुत्र । ते बेउ नमदा । माहि बेठी चडी मत्स्य लिणा सिवा प्रवर्तिया । तिसिइ अवसरि मत्स्य ... गा हउ जोइ तीह प्रतिइ बालिव रे दुराचारउ ! मकरउ पाप नरकि रूप्या हुसिइ सताप नही घूनउ करताइ विलाप जइ न मानउ तउ पूछउ आपणउ बाप । ए बात सामली बेइ कुमर भयभ्रात हुआ । तिसिइ नदीनइ कठि एक दीठउ मुनीश्वर । तेहे बेहीतउ कतरी नमस्कारिउ । पच्छइ । तुम्ह म्हारा पात्र, हू पालऊ चारित्र तुम्हें करउ अगत्र तीणइ । सोनइ किसिउ कीजइ जोगइ सुटइ कान । तीणइ उपाध्यायि किसिउ जीणइ चूकइ मान । तिणइ ठाकुरि किसिउ कीणइ जीणइ पामइ पगिपगि अपमान । तीणइ धम किसिउ कीजइ जीणइ वाधइ मिथ्यात्व वान । तीणइ ववरइ किसिउ कीजइ जीणि पाछइ ऊपाइ विपवाद । तीणि मित्रि किसिउ कीजइ जीणइ थाइ प्रमाद । तीणिइ घरि किसिउ कीजइ जहमाहि दूपूइ पाप । तीणइ स्नेहि किसिउ कीजइ जाणि वराई कीजइ जेहनु निनु सताप । तीणइ नामतिइ किसिउ कीजइ ... गत्यप्रति ... तरी तुम्हें उगाटिया दार । बरस गुण भवन व्यनरि,

ते सवागसु दर रूपिइ पुरन्दर, विवेक वधुर राज्यधुरधर सत्यपुरुषसिंधुर नामि महिधर प्रवद्धमान हुउ। राजापथ्वीचन्द्रप्रह राज्य करता नवलाप नवाणवइ सहस्य नवसइ नवोत्तर वरस अतिक्रम्या। तिसिइ अवसरि कानडदेसनउ राउ सिंहकेतु इसिइ नामिइ अकस्मात पुहिठाणपुरि पाटणि ऊपरि चढी आविउ, लोकप्हइ आतंक ऊपजाविउ। तत्काल चरपुरुषि पथ्वीचन्द्रप्यह जणाविउ। ते साभली राजा पथ्वीचन्द्र कोपिकरी करवाल ऊलालतु सामहिड, सुभटवग गहगहिउ। भभायाजी, ममनागण रहिउ गाजी। राजा आप जेतलइ हाथि चडिउ तेतलइ मनि विमासण पडिउ। छे रे आत्मन। हु बाह्य वइरी पूठिइ धाउ, अतूरगवइरी पूठि न धाउ। कुण ए बुद्धि किसी शद्धि। जीतउ जोइयइ क्राध, जेहुतउ चालइ विरोध। जीतु जाइयर मान, जहन्हइ पर्वतनउ उपमान। जोति जोइयर माया। जेहनु पामीयइ स्त्रीतणी काया। जीतु जोइयइ लोभ जेहतु ससारि समयम्भेत्र। जीतु जोइयर काम, जेहुतु फडइ पुण्यतणउ ठाय। ईणिपरि नरेस्वरप्हइ चीतवता ऊरनउ शुक्लध्यान, तत्काल ऊपनउ केवलज्ञान॥ आव्या देव, करइ सेव। वइरी समिउ, आवीन भिउ। वाजइ वादित्र, महोत्सव विचित्र। देवे वेष दीधउ, राजऋषि लीधउ हसजमलि, बइठउ स्वण कमलि। दिइ उपदेश, इउ पुण्य तणउ निवेश एके आदरिउ सम्यक्त्व, एके श्रावकत्व। एके सयम, एके नियम। ईणिपरि लोकप्हइ लाभ देई पृथ्वीमडलि विहारक्रम करी पथ्वीचद्रि राजा सिद्धि साम्राज्य लीधउ, तेहतणइ पुन्नि महीधरि पुहिठाणपुरि अखड प्रतापि राज्य कीधऊ। पृथ्वीचन्द्र नरवर तणउ चरित्र साभली, मनतणी रली वलीवली विवेकवति पुण्यवत लाभ लेवउ। जिसइ पुण्यतणा प्रभावतउ सकल श्री समप्हइ श्रय कल्याण ऋद्धि वद्धि परपरा ऊपजइ।

श्रीमदचलगच्छे श्रीगुरुमाणिक्य सूरिणा।
पृथ्वीचन्द्र नरेन्द्रस्य चरित्र चारु निर्मितम्॥

सवत १४७८ वर्षे श्रावण सुदि ५ सो पृथ्वीचन्द्र चरित्र पुरूपपतने निर्मित सर्मथितम।

मावमेरुमही यावत् याच्चन्द्र दिवाकरो।
वाच्यमानो जनस्तावद ग्रन्थोअय भुवि नन्दतात॥

इति श्री अच ल गच्छे श्री माणिक्यसुन्दर सूरि कृते श्री पृथ्वीच द्र चरित्र वाग्विलास पचम उल्लास।

———

२२

नमस्कार बालावबोध

(रचना— हेमहंस गणि, वि० सं० १५००)

वन्दिउ नरवर मरणारतउ सुर, श्री जिन शासनतउ सार, इग्यार ग, चऊद पूरवतउ उद्धार ... ते श्री पंच परमेष्ठि महामंत्र नवकार—

नमो अरिहंताणं ॥१॥ नमो सिद्धाणं ॥२॥ नमो आयरियाणं ॥३॥ नमो उवज्झायाणं ॥४॥ नमो लोए सव्वसाहूणं ॥५॥

एसो पंच नमुक्कारो ६, सव्वपावप्पणासणो ७। मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं ॥८॥

एहूतउ अर्थ—नमो अरिहंताणं—नमो हुउ... । अरिहंत जेह राग द्वेष कषायादिक अन्तरंग अरिवइरी हणिया छइ। ते श्री अरिहंत चउत्रीस अतिशय, पांत्रीस वाणी गुणे करी सहित समवसरणि बइठा विहरमाण छइ। तेह

नमो उवज्झायाण—नमोउपाध्याय जे द्वादशांगीनउ सूत्र मुखाधीतगणइ, शिष्य हूइ पढावइ । ते उपाध्यायहूइ नमो नमस्कार हुउ। उपाध्याय मरकतमणिनी परि नीलवर्ण ध्याईइ । एतलइ ४ पद ४ सपद हुई ।

नमो लोए सव्वसाहूणं नमो लोक सवसाधुभ्य लोके मनुष्य लोकमाहि जे सवसाधु मोक्षमार्गसाधक जिनकल्पी प्रमुख घडे भेद ऋषीश्वर छइ । ते सवि हूएहइ नमो नमस्कार हुउ । महात्मा आसाढना मेघनी परिश्यामवर्ण ध्याइइ । एतलउ ५ पद ५ सपद हुई ।

एतलइ पाश्रीसे अक्षरे श्री नउकार मूलमंत्र कहीइ । हवइ आगलि चिहु पदनी चूलिका माहि एह मूलमंत्र प्रभाव कहइ छइ । एसो पंच नमुक्कारो स व पावप्पणासणो एष पंच नमस्कार सव पापप्रणाशन । ए पाचहू परमेष्ठिनउ नमस्कार ते किसिउ छइ स व पाव पंच पाप सगउ प्रणाशन फडणहार छइ । एतलइ छट्ठउ अनइ सातमउ बिपद हुआ । बि सपद हुई छठी सातमी । तथा मंगलाण च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं—मंगलानां च सर्वेषां प्रथम भवति मंगलो सब मंगलीक जे लोकीक दधि दूर्वा अक्षत चन्दनादिक लोकोत्तर तप नियम सयमादिक तेह सवि हु मंगलीकमांहि पढम—प्रथम कहीइपहिलउ उत्कृष्टउ मंगलीक ए श्री नउकार कहाइ । एतलइ आठमउ अनइ नवमउ बिहु पद हुआ बिहु पदे करी सपद एवजि आठमी हुई । एक चूलिका माहि 'हवइ' नइ स्थानकि "होइ" इसिउहु कहता केतलाइ बत्रीशजि अक्षर मानइ पुण मूलि तेत्रीस अक्षर छइ ।

यह उक्त—महानिशीथसिद्धान्ते तहेव इक्कारसपयपरिच्छिन्निति' इग्यार पदि परिच्छिन्न कहता सहित हुउ । इक्कारसपय परिच्छिन्निति आलावय तिति सिअक्खर परिमाण । एसो पंच नमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो । मंगलाण च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं । इति चूल । । तेणेव कमेण छट्ठसत्तमट्ठमदिणेसु आयंबिलाहि अहिज्जिज्जा ।

प्रवचन सारोद्धारप्यक्त ।

पंचपरमिट्ठिमते पए २ सत्त सपया बमसो ।

पजत सत्तरमक्खरपरिमाणा अट्ठमी भणिआ । । गाथाद्वय । ।

यद्यपि 'हवइ' नइ 'होइ' कहता अथनउ विशेष कोई छइ नही । तथापि 'हवइ' इसिउ जि कहिवउ । जेह भणी नमस्कार चूलिका प्रथमाहि कहिउ छइ जिवारइ कायविगरि ऊसनइ चूलिका तणउ ध्यान करीइ, तिवारइ चमालीसमउ रचउ एककउ अक्षर एकेकी पाखुडीइ स्थापी तेत्रीसमउ अक्षर गइयकणिकाम स्थापी ध्यान करिवउ । इम हवउ होइ इसिउ कहीइ तउ

चूलिका बत्रीस ति अक्षर पहुचइ बत्रीस अक्षर बत्रीस पासुडीइ ति पूरइ, मध्यकर्णिका टाली नि रहइ। इसाम्हि अनइ ए सिद्धान्तयुक्ति छइ। मध्यस्थ पणइ विचारिवउ। एव श्रीनवकारमहामंत्रि ९ पद ८ संपद, ६८ अक्षर, तेहमाहि ७ भार ६१ लघु अक्षर। ज वि अक्षर एकठा मिल्या हुइ त भारी कहीइ जे एकमात्र अक्षर ते लघु हलुउ इम सघल जाणिवउ। एह श्री नवकारनाउ महिमा इम कहिउ छइ—

नवकार इक्कक्खर पावं फेडेइ सत्त अयराणं।
पन्नासं च पएणं सागरपणसयसमग्गेणं॥१॥

जो गुणइ लक्खमेगं पूएइ विहीइ जिणनमुक्कारं।
तित्थयरनामगोयं सो बंधइ नत्थि संदेहो॥२॥

अट्ठेव अट्ठसया अट्ठसहस्सं अट्ठलक्खा अट्ठकोडीओ।
जो गुणइ भत्तिजुत्तो सो पावइ सासयं ठाणं॥३॥

श्रीनवकार भावसहित विधिइं जापतां, श्री गुरुदत्त श्री मंत्र अनइ ध्यानइं चिन्तिइं करी, इहलोकि अनइ परलोकि मनवांछित फल थायइ इह लोकि पणि देवता सांनिध्य करइ। जिम श्रावकनी पुत्रिकाप्रइं को पमइ। यतः—

जइ ते घडउ जोअइ। देवय तउ माहि साप नहीं अनइ घडउ परिमलि महमह छइ। पछइ जाणिउ मही एहह्नइ देवता साहाय्य करइ। हु अभागिउ एहह्नइ पाहुउ तीचवस। पछइ स्वजन वग मेली तेह आगलि आपणउ वतात कहि श्रीमतीह्नइ खमावइ। तेहना गुण ऊपरि अनुराग धरइ। एकवार अवसर देखी श्रीमती भर्तार ह्नइ जिन धमना मम कहइ। कमविवरनइ यागिइ प्रतिबोध लासउ। महामज्र्जानी जैन श्रावक हुउ। यावज्जीव धमपाली सुगतिइ पुहुतउ॥ कथा एक॥

वली नवकारनइ प्रभाविइ अनेक सक्ट भाजइ, लक्ष्मीनी प्राप्ति हुई, जिम श्रावकना वटाह्नइ हुई। अत्र कथा

(२) रत्नपुर नगर, यशोभद्र श्रेष्ठि श्रावक तहनउ बटउ शिवकुमार महा यसनीउ। पिताइ घणउइ सीखावी कोइउ धम न्मिइ न क रइ। पिताइ प्रानकालि मान मागी कहिउ वच्छ। एतलउ करीज जिवारइ लूह्नइ गाढउ सकट आवइ तिवारइ ए नउकार जपेइ। दाक्षिण्य लगइ माजिउ। पिता दिवगत हुउ। शिवकुमार सात "यसन पोषतइ हुतइ लखमि सघली निगमी। निद्धन भणी किहाइ मान महत्व न लहइ। एकवार तेहह्नइ त्रिदडीय मिलिउ। तेह आगलि प्रति लगइ निद्धन पणनउ विषा द प्रकाशिउ। त्रिन्डीउ कहइ जउ माहरउ कहिउ करउ तनो लूहह्नइ लक्ष्मीइ करी धनप समान करउ। पछइ शिवकुमार पासइ एक मतक अणावी काली चउदसिनी रात्रिइ मसाणनी भूमिकाइ गिओ। माडल माडिउ। मृतकहाथि ऊघाडउखग आली शिवकुमार ह्नइ कहिउ—तू एहना पगना तला उलहाति। आपणवइ मननु जाप होम करइ छइ। निसिइ शिवकुमार सकटि पडिउ चीतवइ आहा सही ईणइ मायावीइ तिदडीइ एमघलु मुझ मारिवानउ उपाय माडिउ। मृतक अठोनइ सही मुजह्नइ खाभिवरी आहणिसिइ, तउ हिव किसिउ करउ। ईहा थकउ हुवडा नसाइ० नही। इम करता पितानउ ते वचन साभरिउ। एकाग्र हुइ नउकार जपवा लागउ त्रिदडीयाना मत्रनइ बलिइ वरी ते मतक मारेक सलसलीनई ऊठिवा लागउ। वली पाछउ ति पडिउ। त्रिदडीउ चीतवइ सही काइ माहरा जापमाहि दोदलउआ हुआ। वली विशेषिइ एकाग्रपणइ करवा लागउ। मतक ऊठा बीजीइ वार वली निम जि पाछउ। तिवारइ त्रिन्डाउ चमकीउ। शिवह्नइ पूछइ काई मत्र तूह्नइ? शिव कहइ ना। पुण हिआमाहि नउकारनउ महिमा जाणिउ। वेतालनउ अधिष्ठिउ मतक अठिउ। शिवह्नइ नउकारनइ प्रभाविइ करी पुहचा शकइ नही। पछइ रीसाविइ मतकि ऊपाढी त्रिन्डी जानु मस्तक खगि करी छन्डि। मत्रनइ महिमाइ करी तत्काल त्रिदडीक फीटी सोनातणु पुरिसउ हुउ। शिवकुमार च मत्करिउ। रात्रिमणी तिवारइ ते सहू भुइ माहि

सांभलि । प्रभाति दधिवाहन राजाइं सघलुं वृत्तांत कहीउं । राजानुं आदेश पामी महोत्सवपूर्वक मातानउ पुत्रउ निवकुमारि आपणइं घरि आण्या । सम्मो प्रगट हुई । दोहद पूरवाना मन्त्रनइं काठा टाली बीजा सघला अंगी पाणनउ सोनउ काला ? बावराइ । रांधि वली दिव्यानुसारि छित्याइ त्रि पाइ । पारे त्रि विशउ प्राइ श्रावक व्यवहारिउ थउ । अनुक्रमि गुरुनइं पाणि धननामय आगो आर सुवर्णमय प्रासाद कराव्यो, मांहि मणिमय प्रतिमा मंडावी, धर्मवासो मुगति पहुतु । कथा २ ।

वना यो नमस्कारनइ प्रभावि मरणान्त सङ्कट त्रिणु छूटीद । निम जिनदास श्रावक छूटउ ।

अत्र कथा--

वे हाथ जोडी आगलि अभु रहिउ । पगि लागी कहइ मूहप्हइ घम बूझाविउ, तू माहरइ गुर, काई वर मागि । श्रावक कहइ वर अवरदसि तु सव जीव मारिवा नियम पिइ, अनइ स्याप्रवि जि बइठा दिन प्रति एक बोजउ अणी आपवउ । "मतरइ मानिउ । श्रावक अखड पाछउ । राजाप्हइ वत्तान्त कहिउ । एककउ वाजोरो मावनरहइ व्यतरउ सदैव आणी आपइ । श्रावक जइ राजारहइ आल" । राजा हर्षिउ, नगरलोक हर्षिउ । सहूको जिदास श्रावकनी प्रशसा करइ । पणु वाल घम पाली सुगति पहुतु । कथा ३ पूरी ॥

ए इहलोकि नउकारना फल ऊपरि त्रणि दृष्टान्त कह्या । हवइ । परलोक ऊपरि कहीइ छई ३ दृष्टान्त । परलोकि नउकारनइ प्रभावि राज्य पदवी पामीइ । जिम चडपिंगल चोरइ पामी । अत्र कथा—

(४) वसतपुर नगर तिणुत्रु राजा भद्रा रानी । चडपिंगलनामइ चोर छइ । सीणइ चोरी करी करी नगरलोक ऊदेगिउ छइ । एकवार रायनु भडार फाडी राणीनु अमूलिक हार चारिउ । एक कलावती नामि तिहा गणिका छइ । काई श्राविका काई मिथ्यात्विणि । तेहनइ विषइ ते चोर उलूपउ छाइ । ते हार लेई गणिकाप्हइ आपिउ । इम करता मयण तेरगिनु पव आविउ छइ । सगली गणिका आपणा २ शृगार पहिरी उद्यान वनमाहि क्रीडा करिवा गई कलावतीइ ते हार पहिरी तिहा आवी । तिहि राणीनी दासीए ते हार तेहनइ कठि दीठउ । ओलखिआ जइ राणीनइ कहिउ राणीई राजाप्हइ कहिउ राजाइ प्रतीहार पाइ जोवरावी चडपिंगल कलावतीना घरमाहिथिकु माही महाविडबनापूवक सूलिइ दिवराविउ कलावती ते वात जाणी तिहा गई । चितवइ अहो माहरइ कीधइ एहरइअवस्था थाई तु आजतू एह पुण्य टाली बीजा सघपुरपनु नियम एहरहइ नुकार दिउ । पेनी नुकार लेई । छे "इ चोर मरी पहराणीनु वेटउहूउ । राजाइ महामोह लगइ महोत्सव करी पुरदर कुमार नाम दीघउ । कलावतीइ दीहाडानी तकनाक जाई जाणिउ सही ए तेह जि माहरा भरतार । राजानइ आवासि आवइ । पुरदर कुमार बालकप्हइ हुलावइ । जिवारइ रुदन करइ तिवारइ पाछिला भवनइ नामि बोलावइ इ है चड पिग । म राइ । बालक रहइ ते नाम सामलता जातिस्मरण ऊपनु । नुकारनु महिमा जाणिउ । पिता निवृत्त हुआ पूठि पुरदर कुमार राजाहूउ । कलावतीउ उपगार जाणी तेह ऊपरि अत्यन्त स्नेहथिकु निरतर नुकारनु स्मरण करइ । राज्य अनइ घमपाली सुगति पहुतु ॥ कथा चोथी ४ ॥

वली परलोकि नउकारनइ प्रभावि महापापनु करणहार मरी देवतानी पदवी पहइ । जिम हुडिक चोरि पायो । अत्र कथा—

(५) मथुरा नगरी, शत्रुमर्दन राजा। तिहां हुंडिक चोर सदैव चोरी करइ। एकवार कहिइक व्यवहारी आनइ घरि खात्र पाडी घणउ सुवर्ण चोरिउ कुटुंब नै मानुसै कलकल कीधउ। तलारखाया साथा सहित चोर साहिउ। बांधी प्रभाति राजा आगलि आण्यो। राजाइ नगर माहि चहुटइ करबी भाग प्रकारि विटम्बना कराव्या ध्यापटउ मूलाइ दिवराविउ। नगरमाहि सघले उद्घोषणा करावी—अहो लोका। इसिउ फल देषी कोइ चोरी म करिसिउ। अनइ एहनि चिंता कुणहि न करिवी पछइ सूली चडलि राउभावर मूकया। जि को एहनि चिंता करइ ते आवी कहि्यो, जिम तेह रहइ एह जि दड कीजइ। ति भिइ बापडा तेचोर रहइ तावडइ अनइ दधिराइ तीरसला करी अपार गाढा भूषा लागा। जि का कुणइ आइ तेहरहइ पाणी मागइ इ राजान भइ करी कुणइ पाणी पाइ नहीं। तिसिइ जिनदत्त श्रावक आविउ। तेतलइ पाणी मागिउ। श्रावकि कहिउ पाणी लई आवउं तेतलइ तू नुकार गुणि। नमो अरिहंताण मुखि ऊचरि। श्रावकि घरि जई करवडउ पाणी भरी जेतलइ नमो हरिहंताण कहितो जि चारला प्राण गया। मरी महर्द्धिक यक्ष देवता ऊपनउ। तिणि परे पई जिनदत्त श्रष्ठिनु वतांत राजा आगलि कहिउ। राजाइ तेहरहइ सूली चाचवानु आदेश दीधउ। रासभि चडावी लीजइ भूमिका लई गया। तिहि लीजइ हुंडिकयक्षइ नवइ ऊपनइ अवधिज्ञान प्रयुंजिउ। आपना गुरु जिनदत्त श्रावकरहइ तिणी अवस्था दीठी रीसाणिउ। आवी नगर ऊपरि महाकाय शिला विकुर्वी, आकाशि थाणी चालता मांणा भरे राजा अमात्य प्रमुख सह नमस्कार पाडा। आमो ह्यता जि ईहइ निपाइ करा तुम्ह नविकुन्नइ पूजा करउ। ए देवनु अमुह गुअवरु माहरइ स्वामी श्री जिनदत्त शेठी, तेहरहइ

करतु चउमासु रहिउ छइ। तिहा एक पुलिंदिउ नवी पुलिंद्री आव्या। ऋषि वादिउ। भद्रपरिणाम दपी ऋषि नुकार सीषवीनइ कहिउ- ए त्रिकाल सदव सावधान थई जपिवउ। पेला वेहू सदैव जपइ। ऋषि चउमासा पूठि गुरुकन्हलि पहुता। कालि वेहू परोक्ष हूआ। पुलिंदानु जीव मरी जम्बूद्वीप मणि मदिरि नगरि राजा मगाक राजा त्रिन्या राणी, तेहनइ गर्भि अवतरिउ। राणीइ सीहनु स्वप्न लाधउ। अनुक्रमि पुत्रजन्म हुव। महोत्सव करी राजसिहनाम दीधउ। मउण्इ २ बहुतरि कला पारीण हुउ, रूप लावण्य सौभाग्यनउ निधान यौवन वय प्राप्त हुउ। मतिसागर मुहुतानउ बेटउ सुमति कुमार। तेह सिउ राजसिहनइ मित्राई छइ। एक वार राजसिंह कुमार मित्रसहित वनमाहि तुरगमती क्रीडा करिवा गिउ घणी वेला तुरगम वेलावी थाकु एक आवानी छायाइ विसमइ छाइ तिसइ एक वटवाहू तिहा मिलिउ। कुमरि पूछिउ-कहु किहा थकी आव्या किहा जासिउ? किहाइ काई आश्चर्य दीठउ हुइ ते कहु पेलइ कहई—पद्मपुर नगर थकु हू आविउ। मकलनीथनु ठाकुर श्री शत्रुंजय साधनी यात्रा करवा जाउ छउ। हवइ आश्चर्यनी वात सांभलि। तेणइ पद्मपुरि नगरि पद्मराजा हसी राणी तेह तणइ रत्नवती नामि बेटी चउसठि कलाकुशल महासपपात्र यौवनवय प्राप्त हुई। पितानि मनि वरचिंता ऊपनी। अमात्यन्हइ करइ-- एह कन्यान्हइ गुणे करी अनुरूप योग्यवर किहा थिकु मिलशइ। एकवार राजा आगलि एक नाटकउ पुलिन्दनइ वधि नाचतु देषी कन्यान्हइ मूर्छा आवी जातिस्मरण ऊपनुं। आपुणु पाछिलु भव पुलिंदानु दीठउ। पूव भवनी भार्या रत्नवती प्रति अतिसानुरागथिकु थकी पूछइ-- मह्नु आधु किसिउ हुउ? वटवाहू कहइ पछइ ते कन्यातणी प्रतिज्ञानी वात देसि विदेसि विस्तरी। अनेक राजाना कुमार ते कन्या परिणवानइ लोमइ आवी २ कूडु जि कहइ। अम्हे पाछिलइ भवि पुलिंदा हूना, पछइ कन्या कहई अहा जु तुम्हें पुलिंद हूआ तु कह उतम्हे सिउ पुण्य कीधउ हूतउ जेणइ करी एवडी राजरिद्धि लाधी? पेला त वात न जाणइ कूडा, पडिआ।। तहीअ लगइ ते कन्या पुरुषाद्वेषिणी थई। ए पुरुष सघलाइ कूडा बोला। जि हुइ तेह भणी एह पुरुष तणु मुख नही जोउ। इसिउ चीतवई स्त्रीइजिना वृदमाहि थिती रहइ। तु अहा राजकुमार। पुरुषमाहि तु रत्न छइ अनइ स्त्रीमाहि तु ते कन्या रत्न। तुम्हे बिहुन्हइ जइ योग मिलइ तु अपार अडतु हुइ। इसिउ सामली कुमार हर्षिउ आनदिउ, सव अगनग्न आभरण ऊनारी तेहन्हइ आपी विसर्जी आपणइ घरि आविउ। रत्नवतीन्हइ मिलवाना ऊपाय चितवइ। सिइ नगर लोके मिली राजान्हइ ज्ञानि कीनइ— स्वामी। अम्ह किमकरू? ए राजसिह कुमार नगरमाहि जीणइ २ सेरीइ साचरइ तिहा २ आपणा मालपइ रोग्यतां मूकी मूकीनइ सौभाग्यना व्यामोहिआ स्त्रीना वृद गमे २

कहिएक वरलउ पाणिग्रहण करइ का नही। पछइ रत्नवती कहइ जो, नर भरतार ता मननी रतिनइ वाजिइ कीजइ। ते तु तुम्ह साहउ जोऊतां मनम्हइ ऊपजइ छइ तु बीजइ कुणहि माहरइ काज काई नही तिवारइ कुमार स्त्री पूछइ ले भवातरनु पुलिदउ वर मिन बोलपाइ। रत्नवती कहइ जि को ले भवनु कीय उ पुण्य माहरू जाणजइ ते सही माहरू पूर्व भवनु पति। तिवारइ कुमार स्त्री कहई एतकु जाणउ पाछिलइ भवि दमसार ऋषीश्वर नुहार सूहम्हइ सीधविउ हूतु ते स्मरवानइ प्रभावि तू भरी रायनी बेटी हुई। ते सांभलीनइ चमत्कारी रत्नवती आपणी सखी चन्द्रलेखा प्रति कहई ए किम ए बात जाणइ ? चन्द्रलेखा कहइ स्वामिनी जोइवा एहनी गति, वचन चेष्टा सहु पुरुषन। सरिषु दीसइ छइ। अनइ एह देखी तुम्हनइ रति ऊपजइ। तीणइ हसिउ जाणयिए, वही ए ताहरू पूर्वभवनु भरतार। किसिइ कारणि पुरुषनें स्वरूप आच्छादी स्त्रीनइ रूपि आपणपु देखाडइ छइ। तिसइ चन्द्रलेखा कुमार स्त्री प्रति कहइ स्वामी हवे प्रसाद करी आपणउ स्वभावनु रूप देखाडउ। तिसइ ऊपधीनइ योगइ वेहू पुरुषनइ रूपि थिआ। रूप देखी सहु को हरषिया। पछइ चन्द्रलेखा कहइ स्वामी। जिम रूप प्रकाशिउ तिम गोत्र कुलादिक प्रकाशउ। तिवारइ मित्रइ कुमारतणउ देस कुल गोत्र पटेवाहूना वचन मन वतात सपूण कहिउ। राजाइ वात जाणि हरषियइ शुभलग्नि मोट महोत्सवे रत्नवतीन पाणिग्रहण कराविउ। हस्ति मोचनि अनेक गजेन्द्र तुरगम अद्ध राज्य दीधउ। राजसिंह कुमार रत्नवती सहित नाना प्रकार भोगवइ छइ। घणउ काल। एकवार पिताइ मंगांवरआगाइ प्रतिहार हाथिलेख मोकलिनइ कहाविउ वच्छ ! हिव वृद्धपे वद्ध हुआ। राज्य छाडीदीक्षा लवानी वाकठा करु छउ। घणा काल लगइ ताहरा दरसननी उत्कंठा छइ। तु वहिलु आहा आविजे। पछइ राजसिंह कुमार सुसरानइ मोकलापी रत्नवती सहित चतुरंग कटक परिवार मणि मंदिर नगरभणी चालिउ। अनुक्रमि पहुतु। पिताम्हइ प्रणाम कीधउ। सव कुटम्ब परिवार हरषिया। राजा चितवइ अथ कुमारम्हइ राज्य देइ हूं आपणू धमकाय करउ। इसिइ आवी उद्यानपालिक वीनविउ स्वामी ! उद्यानमाहि श्री गुणसागर सूरिगुरु पाउधारिया। राजा मति हरषिउ। राजसिह कुमार प्रति राज्य स्थापी साते क्षेत्र विलवेची सपरिवार गुरुकन्हलि गिउ। दीक्षा लेई दुष्कर तप करी देवलोकि पहुतु। राजसिंह राजाइ रत्नवती राणी सहित सम्यक्तवमूल बार व्रत पडिवज्या। निष्कंटक राज्य अनइ श्रावक धर्म पालइ छइ। नुकारनइ प्रभावि मोटा वयरी राजा आज्ञा मनाव्या। गाम गाम जिनप्रासाद कराव्या। पृथ्वी जिनमंडित करावी। चिरकाल राज्यपाली एकवार भोगाक्रांत चिन्तइ हुतइ आपणा पुत्र प्रतापसिंह कुमाराम्हइ राज्य स्थापना कीधा आपणइ रत्नवती राणी सहित श्रीगुरुनइ

सुविहि सविस्तरि आराधना कीधी सब जीवराशि खमावी पुन्यरासि अनशन (रा) सु कि पराण हुउ । मरी ग्रीनमि देवमाहि दस सागरोपमनइ आऊखइ ऊपनउ इंद्र मित्र हुउ । रत्नचूड मरी तीणइ जि इंद्र (तणा) सामानिक देवता हुई । तिहां थकु चवी एरवत क्षेत्रमाहि अवतरी दीक्षा लेई एकम्न नवकारी केवलज्ञान ऊपार्जी वहूं जगी मोक्ष सहूंगइ ।। कथा ६ ।।

।। श्री नवकार बालावबोध ।।



उत्तरार्द्ध-मूल्यांकन

विषय प्रवेश

गद्य और पद्य हिन्दी साहित्य की दो प्रसिद्ध विधाएं हैं, जिनमें गद्य का उद्भव कब हुआ ? यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न है। संस्कृत और प्राकृत भाषाओं के परिशीलन से यह विश्वास तो होता है कि गद्य रचना बहुत प्राचीन काल से होने लगी थी, पर इसके उद्गम स्थान क्या हैं, यह बहुत निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता। प्रायः ऐसा सब विदित है कि पद्य ही गद्य से पूर्व बना था पर क्योंकि संस्कृत और प्राकृत के अनेक ग्रंथ गद्य के माध्यम द्वारा कहे जाते हैं इसलिए पद्य का उद्भव गद्य से पूर्व नहीं माना जा सकता। हिन्दी साहित्य के प्राचीनतम गद्य साहित्य का प्राप्ति स्थान के लिए सभी की दृष्टि आदिकाल की ओर उठ जाती है। आदिकाल में उपलब्ध रचनाओं में हिन्दी-साहित्य की अनेक प्राचीनतम गद्य रचनाएँ प्राप्त हुई हैं। प्राचीनतम गद्य के स्वरूपों को सुरक्षित रखनेवाली रचनाओं को जन्म देने का श्रेय इस आदिकाल को ही है। इसी काल में सिद्ध, नाथ, जैन अजैन (लौकिक) आदि अनेक ग्रन्थ हमें उपलब्ध होते हैं।

यह बहुत ही महत्वपूर्ण बात है कि हिन्दी साहित्य की प्राचीनतम गद्य और पद्य की रचनाओं को सुरक्षित रखने का श्रेय इस काल के ऊपर ही है। पर इसका तात्पर्य यह भी नहीं है कि अन्य आगामी भाषाओं में गद्य-और पद्य कृतियाँ बिल्कुल ही नहीं मिलतीं। मिलती हैं, पर वे इस काल की अपेक्षा में बहुत कम हैं। अतः इस दृष्टि से देखें, तब इस काल के साहित्य का इन कृतियों का अध्ययन आवश्यक हो जाता है। आदिकाल का यह साहित्य विशाल साहित्य है जो अनेक भाषाओं में लिखा गया है। इस काल के प्रवर्तक साधकों ने अपने विचारों, अपनी अनुभूतियों और साक्षात्कारक दृष्टिकोण के प्रचार को व्यापक बनाने के लिए जनभाषा में ही [illegible] लेकर जन साधारण की जानकारी तक दे दिया है। मानव मात्र का प्रश्न

विचार अभिव्यक्त करने का प्राकृतिक अधिकार होता है अत आदिका इन उपलब्ध हिन्दी कृतियो से इन साधको और कवियो को तात्वतम अनु और अभि यक्ति का पूण परिचय प्राप्त होता है।

अस्तु—हिन्दी साहित्य की प्राचीनतम गद्य रचनाओं की परम्परा उद्भव और विकास जानने के लिए हमे तत्कालीन प्राप्त साहित्य के वि स्रोतो को अवश्य देखना होगा। इस दृष्टि से आदिकाल की जैन, जने सभी धाराओ के साहित्य को उपलब्ध प्राचीनतम समाविष्ट गद्य रचनाओ साहित्य के इतिहास पर विचार करना होगा। इन अद्यावधि प्राप्त रचन में गद्य का सबसे प्राचीन स्वरूप प्रस्तुत करने वाली रचनाओ के लिए विभ की जो भी मान्यताए रही हैं, उनका सक्षेप में विवेचन करना यहाँ उ प्रतीत होता है।

पूव मान्यताए

हिन्दी साहित्य के सबसे प्राचीनतम गद्य की सभावना पर सबसे प हमारी दृष्टि गोरखनाथ के गद्य पर उठ जाती है। आचाय शुक्लजी ने भी स १४०० के आस पास के ब्रज भाषा गद्य का उदाहरण मान लेने की लि है।[1] पर तु उनकी इस मा यता मे स्थिति बहुत सदिग्ध है। कारणो की व्य स्या करते हुए इस तथ्य के लिए यह कहा जा सकता है कि एक तो गोरखन का समय ही सदिग्ध है और दूसर विभिन्न विद्वान भी उनके समय से सह नहीं हैं। उदाहरणाथ मिश्रबधु गोरखनाथ का समय स० १४०० मानते हैं पर राहुल साकृत्यायन उसे १०वी शताब्दी का ही कहते हैं।[3] इस प्रकार तो गोरखनाथ का समय ही निश्चित है और न उनके नाम से उपल ध कृतियाँ भी असदिग्ध हैं। श्री अगरचद नाहटा गोरखनाथ के नाम स मिल वाली कृतियो के विषय म सन्देह प्रकट करते हुए लिखते हैं कि — गोरखना की कुछ रचनाए गद्य में लिखी बतायी जाती हैं। इन रचनाओ की भाषा १३वी से १५वी शताब्दी के मध्य की मानी गई हैं। पर इसके लिए को सबल आधार नहीं प्रतीत होता। इन रचनाओं का गोरखनाथ की कृति

---

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास—श्री रामचद्र शुक्ल, पृष्ठ ४३८
२ मिश्रबधु विनोद भाग १, पृष्ठ २११
३ नागरी प्र० पत्रिका, भाग ११, अक ४, पृष्ठ ३८९-१० पर राहुल का लेख।

होना संभव नहीं जान पड़ता। किसी प्रसिद्ध साम्प्रदायिक नेता या मत प्रवर्तक के अनुयायी, स्वयं ग्रंथ बनाकर नेता के नाम से या मत प्रवर्तक के नाम से प्रसिद्ध करते रहते हैं। गोरखनाथ के इन ग्रंथों की हस्तलिखित प्रतियाँ यथावधि १८वीं शताब्दी से पूर्व की प्राप्त नहीं हैं। उनके अन्य पद्य ग्रंथों की प्रतियाँ भी संवत् १७वीं शताब्दी से पहले की मेरे अवलोकन में नहीं आईं। अतः जब तक उनकी हिन्दी गद्य रचनाओं की इससे पूर्ववर्ती प्राचीन हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त न हो जायें, वल्लभ सम्प्रदाय के प्राचीन ब्रजभाषा के गद्य ग्रंथों को ही हिन्दी के प्राचीन गद्य ग्रंथ कहा जा सकता है।"[1] ऐसी स्थिति में दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता और चौरासी वैष्णवों की वार्ता आदि ग्रंथों का ही हमें सहारा लेना पड़ता है।

एक अन्य ग्रंथ १४वीं शताब्दी का और उपलब्ध होता है, जिसका नाम है वर्णरत्नाकर।[2] यह ठाकुर ज्योतिरीश्वर की गद्य रचना है। रचना के वर्णन प्रकारों और शिल्प की प्रौढ़ता को देखते हुए यह सहज ही कहा जा सकता है कि इसके पूर्व भी गद्य की रचनाएँ मिलना बहुत संभव है। नायिका वर्णन, ऋतु वर्णन, प्रभात तथा दमयन्ती आदि वर्णन बड़े ही प्रौढ़ बन पड़े हैं।[3] इस प्रकार मैथिली गद्य की प्राचीनता अस्वीकृत नहीं की जा सकती। गद्य के क्षेत्र में इस रचना का अपना एक ही महत्व है। प्रसिद्ध विद्वान् सुनीतिकुमार चटर्जी भी इस रचना के गद्य की प्रौढ़ता स्वीकार करते हैं। मैथिली गद्य के विकास में महत्वपूर्ण योग देनेवाली इस रचना के गद्य की सम्पन्नता का परीक्षण आगे किया जायगा। एक उत्कृष्ट रचना विद्यापति की कीर्तिलता भी गिनी जाती है।[4] यह रचना १४वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की है।

इस बीच में शताब्दी में मराठी का गद्य भी महत्वपूर्ण कहा जायगा। १३वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में से प्राप्त मराठी गद्य का रूप प्रस्तुत करनेवाली

---

1 हिन्दी अनुशीलन भाग सन् १९५३, पृष्ठ ३११ पर श्री अगरचंद नाहटा का लेख राजस्थानी गद्य काव्य की परम्परा।

2 हिन्दी साहित्य का आदिकाल — श्री हजारी प्रसाद द्विवेदी पृष्ठ १८।

3 वर्णरत्नाकर — मिश्र की मैथिली भूमिका पृष्ठ ३४

4 हिन्दी-साहित्य का इतिहास — आचार्य शुक्ल, पृ० ६६

बैजनाथ कलानिधि की एक रचना का भी उल्लेख मिलता है।[१] यह प्रति ताड पत्र पर लिखी हुई है और इसका समय सम्भवत १५वी शताब्दी का उत्तरार्द्ध माना जा सकता है।

कई वर्षों पूर्व श्रीअगरचन्द नाहटा ने तरुण प्रभ सूरि की १४वीं शताब्दी के एक जैन विद्वान् की गद्य रचना की भी सूचना दी, जो तत्सम शब्दों से पूर्ण है,[२] और पर्याप्त प्राचीन है।

अस्तु इन उपलब्ध रचनाओं को देखते हुए वर्तमान स्थिति में गद्य की प्राचीन रचनाओं के विषय में हमें बहुत सन्तोषजनक प्रमाण उपलब्ध नहीं होते। वस्तुतः शोध की वर्तमान स्थिति में हिन्दी साहित्य की प्राचीनतम गद्य रचनाओं को खोजने के लिए गद्य की प्राचीन परंपरा का विश्लेषण करना आवश्यक हो जाता है। उक्त सभी गद्य प्रधान रचनाओं में तत्सम शब्दों की भरमार है और पर्याप्त प्रौढता एवं स्थिरता है पर तु जब तक पर्याप्त शोध होकर इनकी प्रामाणिक हस्तलिखित प्राचीन प्रतियाँ नहीं उपलब्ध हो जाँय, इस अनुमान का प्रत्यक्षीकरण पूर्ण सरलता से नहीं किया जा सकता। ऐसी स्थिति में हमें लोक भाषाओं के साहित्य की ही आशा बच जाती है। देशी भाषाओं के इस उपलब्ध साहित्य में अपभ्रंशेतर काल में ब्रज, अवधी प्राचीन राजस्थानी, प्राचीन गुजराती, मैथिली, मराठी आदि लोक भाषाओं से ही सहायता मिलती है। इनमें ब्रज भाषा, खड़ी बोली तथा सिन्धी और भाषी आदि की कृतियाँ सदि ग्धता से परे नहीं कही जा सकती तथा प्राचीन समय की लिखित प्रतियाँ उपलब्ध भी नहीं है। इनके अतिरिक्त अन्य प्रा तीय भाषाओं में तत्कालीन पुरातन हस्तलिखित प्रामाणिक प्रतियाँ एकदम उपलब्ध नहीं होती, होगी भी तो अभी अवधि अज्ञात हैं, अतः प्राचीन राजस्थानी या जूनी गुजराती का ही सबसे प्रमुख स्रोत रह जाता है। वस्तुतः लोक भाषाओं की यह शाखा हिन्दी की ही एक बोली है अतः इन रचनाओं में मिलने वाले ग्रन्थ की परम्परा के विकास का वैज्ञानिक अध्ययन करना आवश्यक तथा महत्वपूर्ण होगा।

---

१ देखिए पाटण कटलाग ऑफ् एम० एस० एस० पृ० ७५ ७६
२ अगरचन्द नाहटा का लेख जनल ऑफ् दी यू पी हिस्टारिकल सोसाइटी प्रथ १२

२

हिन्दी साहित्य मे गद्य की परपरा

हिन्दी साहित्य के प्राचीनतम गद्य की परम्परा के मूल स्रोत हमें संस्कृत और प्राकृत की रचनाओं म मिलते हैं। संस्कृत में गद्य, वैदिक संस्कृत के साहित्य म ही मिलने लगता है। वैदिक काल में गद्य की रचनाएँ हुईं और उनका महत्त्वपूर्ण स्थान भी था। संहिताओं ने पद्य को प्रधानता दी है। ब्राह्मण ग्रंथों म हम पद्य का स्थान गद्य लेता हुआ दिखाई पड़ता है, जब कि उपनिषदों म पद्य फिर जोर पकड़ गया है।

स्थिति यह है कि लौकिक संस्कृत म गद्य की प्रगति नहीं मिलती। रामायण और महाभारत म भी पद्य का ही प्रधानता मिली। परन्तु उसके बाद अलंकृत साहित्य गद्य में मिलता है। सूत्र साहित्य में तो पद्य के कहीं दर्शन भी नहीं होते।

संस्कृत के पश्चात् प्राकृत काल में अर्थात् जैन और बौद्ध की रचनाओं में हम गद्य की प्रगति पुनः मिलने लगता है। प्राकृत अपभ्रंश की रचनाएँ तो (हिन्दी) साहित्य के प्राचीनतम गद्य रचनाओं की जन्मदात्री कही जा सकती हैं। बौद्ध काल के इन रचनाओं में गद्य के प्राचीनतम उदाहरण हमें उपलब्ध होते हैं। गद्य का प्राचीनतम स्वरूप हमारे सामने प्रस्तुत करने में इन प्राकृत व्याकरण और कोश ग्रन्थ की इन भाषाओं का बहुत हाथ है। ऐसा भाषाओं पर अपभ्रंश का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। यही नहीं कि उत्तर भारत की वर्तमान सभी प्रान्तीय भाषाओं का विकास अपभ्रंश से ही हुआ है। प्राकृत और संस्कृत के गद्य के अंशों हजारों वर्ष हैं, पर अपभ्रंश का प्रधानता का प्रभाव पद्य का इतना अधिक बढ़ गया था कि अपभ्रंश में पद्यबद्ध तो हिन्दी प्रान्त की अपभ्रंशों में बड़ी रचनाएँ मिलती हैं परन्तु गद्य म मिला

गया कोई भी तत्कालीन गद्य ग्रंथ स्वतंत्र रूप में उपलब्ध नहीं होता।[1] अपभ्रंश की नवीं शताब्दी में रचित कुवलयमाला ग्रंथ में हम गद्य के छोटे छोटे वाक्य देखने को मिलते हैं। प्रसिद्ध विद्वान् श्री लालचंद भगवान गांधी ने अपने ग्रंथ अपभ्रंश-काव्यत्रयी में कुवलयमाला के कतिपय उद्धरण प्रस्तुत किये हैं।[2] अतः हिंदी गद्य साहित्य की परम्परा के उद्भव के बीज इसी रचना से हमें मिलने लगते हैं। कुवलयमाला के कुछ उद्धरण डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी हिंदी साहित्य के आदिकाल में उद्धृत किए हैं। वे लिखते हैं कि- 'नवीं शताब्दी की कुवलयमाला कथा में कुछ ऐसे प्रसंग हैं, जिनमें बोलचाल की तत्कालीन प्रचलित भाषा के सुंदर नमूने आ गये हैं।'[3] प्राकृत के इस प्रसिद्ध ग्रंथ में प्रसंग वश जहाँ जहाँ अपभ्रंश का प्रयोग मिलता है उसमें उस समय की बोलचाल की भाषा पर छोटे छोटे गद्यात्मक वाक्यों द्वारा उस पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। इन छोटे छोटे कथोपकथनों द्वारा हम गद्य की प्राचीनतम स्थिति का सहज अनुमान लगा सकते हैं। ऐसे कुछ उद्धरण यहाँ दिए जा रहे हैं।

(१) रे रे, अरोहट। मण रे जाद ण पम्हुसई। जनार्दन पुच्छइ कस्थ तुज्झे कल्ल जिमि अल्लया ?

तेण भणिउ साहिउ ज तेन उत्तस्स वलवलइ एल्लयहु तणए जिमि अल्लया।
तेण भणिउ कि श्रा विस महिला बनवलइ एल्लिक्ष।
अण भणिउ तेहह। साय महारय सपूण्ण स्वलक्षण गायभि महासिव।[4]

(२) भो भो भट्ट उत्ता। तुम्ह ण याणह यो राजकुले वत्तान्त ? तेहि भाणिव भण है व्याघ्र स्वामी। क वार्ता राजकुले ? तेण भणिय कुवलय मालाए पुरिस द्वेषिणीए पानओ लबनि इम च भो कुण अप्पा डिइण एक्को उटिठउ घटठो। भणिअव णेण यदि पाण्डित्येन ततो भट्ट परिणतव्य कुवल यमाल। अण्णेण मणिअ अरे कवण् तव पण्डित्यु ? तणभणिअ षडग् पढमि, त्रिगुण मन्त्र पढमि किं न पाण्डित्यु ? अण्णेण भणिय

+ + +

अह सहितस जओ स्वामी पठमि।
तेहि भणिअ कइ भो रे व्याघ्रस्वामि। गाथा ?

---

१ देखिए शोध पत्रिका में श्री नाहटा लिखित प्राचीन जन राजस्थानी गद्य साहित्य-लेख, पृ० ४९

२ देखिए अपभ्रंश काव्यत्रयी - श्री लालचंद भगवान गांधी, पृ० १०४ ९

३ हिंदी साहित्य का आदिकाल आचार्य द्विवेदी, पृ० १९

४ अपभ्रंश काव्यत्रयी पृष्ठ १०४

तेन भणिअ इम व्याप
मा ते मवनु मयोना कनुवस्य कृता बम ?
परय मम्य पना कुपि मत्वत मधुमून

× × ×

करोन अलिअ भरे। तिमोगा कह पुच्छद व्याधा। पटहा हल भणिअ गुरु पइ मि

कन्नर नविनय भर। वेरिमो मो पाभ जा तीअविनु

हेनिमनिंड राजान मडपटिनु मानि मो मे विस्मनु गुरु माझु पहनि
ति इम पमो कन पटड रसायन विणिय

रावडनण महा बनाहबणिमान जम बहुरनायनन पटटाण नि

(कुवलयमाला कथा ... पं० मा० ता० १३० १११)

इस उद्धरण में अपने अध्ययन के विषय में शिष्य-गुरुओं की बातचीत है। एक दूसरा कथानक जिसमें कुछ मनोविनोद के बहाने और रानियों का वर्णन है उसकी अन्तिम पंक्तियाँ देखिए—

कुवलयमाला के इन उदाहरणों में संस्कृत के कठिन तत्सम रूप कम ते गये हैं। भाषा में एक परिवर्तन परिलक्षित होता है। संस्कृत तद्भव ~ देखने को मिलते हैं। अत देशी भाषा की ओर क्रमिक झुकाव इन वाक्यों स्पष्ट परिलक्षित होता है। एक और उदाहरण में ग्राम मेहतर की उक्ति ा अत्यन्त वक्रता की अभिव्यक्ति देखिए—

तउ भणिय एक्केण गाम महत्तरेण

' एहुउ दुम्मणस्साहु। सव्व भे घु (यु) जा अरिदु। तुम्हा गउ। वक लतउ। परद्धउ (तु) प्रइ। मुगइ भातु व (च) व आति सव्वु।

तउ अण्णेण भणिय

पु ज विरड्डु पणलवासा स सुहसम्पडे एतु प्रह दुरपट्ठ मण मोहलुद्धउ सम्पत्ति ग्रालितउ। एतु (उ) एतु (उ) प्राग्ड भल्लउ।

तउ अण्णेण भणिअ थिरजरा जुण्ण डेट्टेण —

पत्थ सुज्झति किर सुवाण्ण रे बहुसाण रमुहुगतउ मउ पाउ मित्तस्स वण। कामाति अक्रत धरणे एतु (उ) पाउ हुज्ज ण्णाहिय।

तउ सयल हग सामिणा मणिअ जेटठ महामय हूरेण धवल वाहुण धवल स्स सिरि भ्रमिति आविमल जल। धवलुज्जल सा भडारी यति गग प्रावेमि हु मिम द्रोज्यु तो णाम सुज्झति——[1]

कुवलयमाला कथायाम (ज० मा० सा० ५१ ३७ ४७)

इस प्रकार विक्रम संवत् ८३५ में लिखे इस कुवलयमाला कथा ग्रंथ में भाषा की यह परिवर्तित स्थिति तथा तत्सम शब्दों के बाहुल्य को स्पष्ट करने ले इन प्रासंगिक गद्य अंशों से हिन्दी साहित्य की आदिकालीन गद्य की सबसे चीन परम्परा स्पष्ट होती है।

अपभ्रंश का एक और ग्रंथ उक्ति व्यक्ति प्रकरण ११वीं शताब्दी का कवि ा दामोदरदास शर्मा द्वारा लिखित उपलब्ध होता है।[2] यह ग्रंथ बनारस और सके आसपास के भाषा रूपों का समझने में योग देता है। पाटण भंडार की ची में भी इस ग्रंथ की सूचना मिलती है। तत्सम शब्दों की ओर तेजी से तिक्रमण हमें इस रचना में उपलब्ध होने लगता है। डा० द्विवेदी भी इस मत

---

१ अपभ्रंश काव्यत्रयी पृष्ठ ११०

आदि उद्धरणों मे प्राचीन गद्य के उदाहरण मिल जाते हैं जो आदिकालीन गद्य रचनाओं की पृष्ठ भूमि निर्मित करने म सहायक तत्व हैं।

श्री नाहटाजी ने पाटण भडार की एक सूची के विवरण में उक्तिव्यक्ति विवर्त्ति१ नामक ताडपत्रीय एवं अपूर्ण प्रति का भी उल्लेख किया है, जिसमें लोक भाषा के गद्य को अपभ्रश की सज्ञा दी हुई मिलती है। यह रचना पर्याप्त महत्वपूर्ण है। वस्तुत अब तक संस्कृत और प्राकृत की दुरूहता को कम करने के लिए टीकाओं के रूप मे कतिपय गद्य ग्रथो का प्रतिपादन किया जाता था। पद्य ग्रथों में भी कुछ गद्यात्मक अश मिल जाते हैं ताकि वह सरलता से जनता के समक्ष म आ सके। पर अब लोक भाषाओ का अनुशीलन करने पर यह कठिनाई तो पर्याप्त रूप मे दूर हो गयी है। इन प्रातीय भाषाओ के उदाहरणो से ही हिंदी गद्य की प्राचीनतम स्थिति की जानकारी हो सकेगी।[2]

अब तक हिन्दी का प्राचीनतम गद्य १६वीं शताब्दी का ही माना जाता था परन्तु हमारे शोध के आधार पर यह गद्य १०वी शताब्दी का पुराना मिल जाता है। यह रचना गद्य का एक सुन्दर शिला लेख है, जिस पर आगे प्रकाश डाला जायगा। अत ज्ञान की वर्तमान स्थिति म प्राप्त कृतियो के अनुसार ११वी शताब्दी से भी ४०० वर्ष पहले गद्य का प्रादुर्भाव स्पष्ट हो जाता है। इन देशी भाषाओ न मिलकर हिंदी भाषा के उद्भव और विकास म योग दिया है अत हिंदी साहित्य की प्राचीनतम गद्य की रचना करने का श्रेय भी इन्ही कृतियो का है। इन लोक भाषाओ मे मैथिली ब्रज अवधी आदि भाषाओ का साहित्य प्राय इतना प्राचीन नहीं मिलता जितना कि प्राचीन राजस्थानी या जूनी गुजराती का। परन्तु यह आशा की जाती है कि इन भाषाओ में भी इस प्रकार की रचनाएँ अवश्य होगी जो इस समय खोजी नहीं गयी है। इस प्राचीन राजस्थानी साहित्य म अन वाङ्मय इसीलिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्राचीन राजस्थानी भाषा और जूनी गुजराती इस दृष्टि स अत्यन्त सम्पन्न मानी जायगी क्योंकि उसके पास गद्य तथा पद्य की प्राचीन से प्राचीनतम हस्तलिखित प्रामाणिक रचनाएं विद्यमान हैं। यही एक ऐसी लोकभाषा है जिसका सीधा सम्बन्ध भी हिन्दी से है। विद्वानो ने इस

---

१ देखिए देव नागर वर्ष १, अक २, पृष्ठ ५५ ५६
२ शोध पत्रिका भाग ७, अक १, २।
३ देखिए लेखक का साहित्यकार नवम्बर दिसम्बर वर्ष २ अक १९, पृष्ठ ६८ ७१। (प्रकाशित लेख का हिंदी साहित्य की प्राचीनतम् गद्य रचनाएं शोधपत्र लेख)

अपभ्रंश की छठी सदी तक जाता है ।[1] इसी के साहित्य में जन जजन क पुरानी रचनाएं उपलब्ध हुई हैं । अनन्तर,रचनाओं में स्यात और बात साहि के लिए तो राजस्थानी अत्यन्त सम्पन्न विभाषा है ही ।

इस विभाषा के विशाल तथा सम्पन्न साहित्य के लिए अनेक विद्वानों ने अपने विचार प्रकट किए हैं ।[2] राजस्थानी या चारण साहित्य वीरता और शौर्य का साकार कोश है । श्री जस्टिस् आशुतोष, मुखर्जी, महामना प० मालवीयजी तथा विश्व कवि टैगोर ने भी इस भाषा की सम्पन्नता और साहित्य पर अत्यन्त सुन्दर रूप में अपने स्वाभाविक और यथार्थ विचार प्रस्तुत किए हैं । इन विचारों से यह तो निश्चित रूप में जाना जा सकता है कि राजस्थानी भाषा का यह साहित्य प्राचीन, प्रामाणिक तथा

---

1 देखिए राजस्थानी भाषा-श्रीस्वामी नरोत्तमदास जी का भाषण ।

2 डा॰ ग्रियर्सन—'There is an enormous mass of literature in various forms in Rajasthani of considerable Historical importance, about which hardly any thing is known

—H U P of Royal Asiatic society-Great Britain

3 डा॰ सुनीति कुमार चटर्जी 'There is however very rich literature in Rajasthani mostly in Marwari

Rajasthani literature is nothing but a message of brave flooded life and a brave storms death The period covered by the literature extends from about a little before the 14th century A D to the present day During these five or six centuries we have scattered here and there over millions of couplets songs and historical compositions'

III Dr L P Tessitory—This vast literature flourished all over Rajputana and Gujrat where ever Rajput was lavish of his blood to the soil of his conquest—

—Rajasthani Language & Literature

सम्पन्न है । राजस्थानी के साहित्य को सम्पन्न बनाने| में जनसाहित्य, का बहुत महत्त्व पूर्ण हाथ है। प्राचीनतम रूप में यदि राजस्थानी के पास किन्हीं कृतियों की निधि या थाती है, तो वह जैन साहित्य की रचनाएँ हैं जो सुरक्षित, प्रामाणिक तथा हस्तलिखित हैं । जैनेतर कृतियाँ इतनी प्राचीन तथा प्रामाणिक उपलब्ध नहीं होती । उदाहरणार्थ—चारणी साहित्य, बात और ख्यात साहित्य को हम इस रूप में ले सकते हैं परन्तु जहाँ तक रचनाओं की विशाल संख्या, प्रामाणिकता तथा विश्वसनीयता का प्रश्न है, राजस्थान मे उपलब्ध तत्कालीन हिंदी जन साहित्य को या पुरानी हिंदी या उत्तर अपभ्रंश की ये कृतियाँ अपनी

1 (i) But bardic poem are also imporant x x x they (i e the bardic prose chronicles) are real and actual chronicles with no other aim in view than a faithful record of facts and their revealation is destined, to destroy for ever the unjust blame that India never possessed historical genius

- Justice sir Ashutosh Mukherji Rajasthani Language and literature p 4

(ii) Why is this (Rajasthani) Literature not taught in our universities x x x x Rajasthani is the Language of brave and heroic people Its place among the literatures of the world is unique Its study should be made compulsory for the youth of modern India The work of the revival of this soul inspiring literature and its language is absolutely necessary I am eagerly looking for the day when the full fledged Department of Rajasthani will be established at the Banares Hindu University, where complete facilities will be provided teaching and research work in Rajasthani literature

—Madan Mohan Malviya

The other day in Calcutta a few of my Rajasthani friends were good enough to recite Rajasthani martial songs to me I, was simply spell bound to listen to them What charm

जाती नहीं रहती। अद्यावधि प्राप्त प्रमाणों और खोज की स्थिति के आधार पर इन्हीं कृतियों से हिन्दी गद्य का प्राचीन रूप निर्धारित किया जाएगा। बनारसी तथा प्राचीन गुजराती और प्राचीन राजस्थानी एक ही भाषा थी अतः पुरानी गुजराती का साहित्य भी इस रूप में हमारी बड़ी सहायता करता है।

१ यद्यपि विद्वानों ने राजस्थानी को हिन्दी की बोली नहीं मानकर राजस्थानी को हिन्दी की बहिन (Sister language) माना है और अपनी कृतियों [illegible] भी इसका स्वतन्त्र रूप से महत्व आँका है परन्तु डा० ग्रियर्सन[2], डा० चाटुर्ज्या[3], श्याम सुन्दरदास[4], डा० धीरेन्द्र वर्मा[5] तथा डा० बाबूराम सक्सेना

---

earnestness and noble sentiments these songs have They are the natural outburst of the people I regard them as superior even to the saint poetry How nice it would be if they were published And language and literature of the world could well be proved of them God willing I shall have them published from the Hindi Bhawan of Shanti Niketan I shall try my level best to place Rajasthani literature before the Indian public through the Hindi Bhawan

(ii) The heroic sentiment which is the essence of every song and couplet of Rajasthani is a peculiar emotion of its own of which, however the whole country may be proved"

See—Rajasthani language & literature page 4 compiled by the Literary, Rajasthan Academy Bikaner

१ देखिए साहित्यकार, वर्ष ७ अंक १९ पृ० ११

2 Dr Sir George A Grierson Linguistic survey of India vol I page 9

३ डा० एस के चटर्जी—Origin & Development of Bengali Language page 2

४ देखिए भाषा रहस्य डा० श्यामसुन्दरदास पृष्ठ ११४

५ हिन्दी भाषा का इतिहास डा० धीरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ ५५

ना[1] आदि प्रसिद्ध भाषा विज्ञानियों ने राजस्थानी को अलग भाषा ही माना है, हिन्दी की बोली नहीं। प्रसिद्ध विद्वान स्वामी नरोत्तमदासजी और माहटाजी भी राजस्थानी को स्वतन्त्र रूप में अलग भाषा मानते हैं। डा० ग्रियर्सन ने इसका सीधा सम्बन्ध गुजराती भाषा[2] से बताया है और गुजराती से मारवाड़ी का पृथक्करण एकदम आधुनिक कहा है। डा० सुनीतिकुमार चटर्जी गुजराती और राजस्थानी का उद्गम प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी को मानते हैं।[3] डा० टैसीटोरी ने भी इसी मत का प्रतिपादन किया है। अतः प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी की यही रचनाएं हिन्दी साहित्य की आदिकालीन रचनाएं हैं। इन्हीं रचनाओं के आधार पर इस भाषा को पुरानी हिन्दी कहा जा सकता है।

हिन्दी साहित्य के गद्य के उद्गम और विकास की परंपरा पर विचार करने में यहाँ राजस्थानी के सम्पूर्ण साहित्य का विश्लेषण करना आवश्यक नहीं समझा गया है क्योंकि अधिकतर आदिकालीन हिन्दी साहित्य इसी प्राचीन राजस्थानी या जूनी गुजराती का है अतः हिन्दी की गद्य परंपरा का निर्धारण करने में राजस्थानी की कुछ बोलियों के उद्धरण यहाँ दिए जा रहे हैं। राजस्थानी की प्रमुख बोलियाँ हैं (१) मारवाड़ी (२) मेवाड़ी (३) जयपुरी (४) मेवाती (५) मालवी। इनमें मारवाड़ी का साहित्य बहुत ही विशाल साहित्य है और जैन साहित्य इसी मारवाड़ी में ही लिखा और प्रभावित हुआ मिलता है। हिन्दी साहित्य की गद्य परंपरा का उद्भव स्पष्ट करने के लिए हमें १४ वीं शताब्दी की इन्हीं जैन कृतियों का सहारा लेना पड़ता है। श्री माहटाजी

---

१ सामान्य भाषा विज्ञान-पृष्ठ १९२ ९३ डा० बाबूराम सक्सेना।

२ 'Gujrati and Rajasthani are hence very closely connected and are in fact little more than variant dialect of one and the same language

The differenciation of Gujrati from the Marwari, dialect of Rajasthani is quite Modern

—Linguistic Survey of India Vol I I page 170

३ Gujrati and Rajasthani are derived from the one and the same source dialect to which the name old Western Rajasthani has been given"

Shri Chaturjya Origin & Development of Bengali language – Page 9

४ लातताललकार ५ आवजी ६ परवावजी ७ पटावजी ८ लघावजी ९ मृगलिया १० करडि ११ मलरी १२ पडह १३ समेतु १४ पचसबद्र वाइयइ । गूजरी गीत गाइयइ लास्यु ताण्डव नाचियइ मदगु वाइयइ है हृदिश्री घर्ई त्रिभी परिवाइयइ ।[1]

उक्त उद्धरण में एक गूजरी नायिका के मुह से जो शब्द गुजराती के नाम से कहलाये गये हैं उन्हें सरलता से प्राचीन राजस्थानी कहा जा सकता है अथवा पुरानी या मरुल हिन्दी ।

इसी प्रकार मालवी भाषा का उदाहरण देखिए—

२ जब मालवा देस की बावली नायण लागी, तब मदर देस की परि मागी । निसुणि रे मोरी बहिणी । फणि फुणि मोरा देश काइव वखाणहि । मोरा देस की बात न जाणहि । जिणि देसि महवगढ़ केरा ठाम जयसिंघदेवराउ । मसूर का याव । अवर देश का काइउ मानु । काला मूग अरु तुटन्या । बोरा ताडा अरु भूणा । ढाली अरु वाजणी । पटिली अरु लाबणी । दिवस रे मोरी बहिणी । वलि वलि वाजउ बिललाइ । तारा ठाहला महुवान्यइ । मालव देस की परि लोकी सिरि की टाली मेल चार का साहा । पूजियइ आदिनाथ युगराज । दिहे साइकवणि वग्पूजियइ ।[2]

उक्त उद्धरण मालवी का है जो प्राचीन राजस्थानी की एक बोली है । पुरानी हिन्दी की ओर इन बोला के रूप भी बहुत दिखायी देते हैं । खेद है मालवी में लिखे हुए आदिकालीन गद्य या अन्य साहित्य की केवल एक ही रचना उपलब्ध है नहीं तो बहुत सम्भव था कि आदिकालीन गद्य और पद्य के उद्भव में मालवी से भी पर्याप्त सहायता मिल सकती ।

अब पूर्वी का उदाहरण देखिए—

३ अब पूर्वी नायिका का बोलता मुणहुण रे भइया । क्यु जुगि जाणियउ धीरे दिसुरे मारो बान्ति फुनि फुनि मार देसु कितवु वरति आदि । मारे देस की बात न जानसि । नहि देस ऐसे मानुस कैसे—इवकु धीरे धीरे विवविये । नरम टाप के माहन मराट मल्ल तुम्ह कतुके जान कतुके पराल वखा की आर । अर्म्ते तुम्हीं बडा अतरु आदि कइसु अतरु

---

१ नागरी प्रचारिणी पत्रिका वर्ष ४८ अंक १, पृष्ठ २०२

२ साहित्यकार नम्बर— दिसम्बर,१९२७, पृष्ठ ६९

३ राजस्थानी वर्ष ३, अंक ३

उपलब्धियाँ तथा मूल्यांकन

(आदिकालीन हिन्दी जैन कृतियाँ और उनका गद्य)

अभी तक जिन महत्वपूर्ण तथ्यों पर विचार किया गया है उससे स्पष्ट हो जाता है कि आदिकालीन उपलब्ध हिन्दी साहित्य को हिन्दी गद्य की सबसे पुरातन कृतियाँ रखने का सौभाग्य प्राप्त है। अनेक विद्वानों ने गद्य की इन कुछ रचनाओं पर प्रकाश डाला है और कतिपय विभिन्न ग्रन्थों में प्रकाशित भी हो गई हैं।[1] इन रचनाओं का आगे सम्यक विश्लेषण और वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया जायगा। ताकि हिन्दी साहित्य के प्राचीनतम गद्य के शिल्प सौन्दर्य का मूल्यांकन हो सके। विविधता की दृष्टि से या तो आदिकालीन साहित्य कई प्रकार का मिलता है। उदाहरणार्थ चारणों का साहित्य जैन साहित्य सन्तों का साहित्य, लौकिक साहित्य, अलिखित साहित्य और उपदेशात्मक धार्मिक साहित्य। परन्तु इनमें सबसे अधिक विशाल जैन साहित्य है। अद्यावधि प्राप्त आदिकालीन हिन्दी गद्य की जो जैन रचनाएँ मिली हैं वे चौदहवीं शताब्दी के प्रारम्भ की हैं तथा उनकी प्रतिलिपियाँ भी १४वीं शताब्दी के आरम्भ की हैं अतः यह अनुमान सरलता से लगाया जा सकता है कि अवश्य ही ये रचनाएं १३वीं शताब्दी में लगभग की होंगी। यहाँ हम पहले इन्हीं जैन लेखकों द्वारा निर्मित गद्यरचनाओं का अध्ययन प्रस्तुत कर रहे हैं। इसके बाद अजैन (लौकिक) आदिकालीन गद्यधारा की रचनाओं पर प्रकाश डाला जायगा। अस्तु हिन्दी साहित्य की अब तक जो जैन रचनाएँ उपलब्ध हुई हैं उनका शताब्दी क्रम से उल्लेख इस प्रकार है —

१४वीं शताब्दी —

* १ आराधना	सं० १३३०
* २ बालशिक्षा	संग्राम सिंह सं० १३३६
* ३ अतिचार	सं० १३४०

---

१ देखिये — प्राचीन गद्य संदर्भ, मुनिजिनविजय तथा प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह — श्री दलाल

तारांकित कृतियाँ श्री लालचन्द को पाटण भंडारों में मिलीं और ये प्राचीन जैन गुर्जरकाव्य संग्रह में प्रकाशित हो गयी हैं — देखिए सी० डी० दलाल सम्पादित प्राचीन जैन गुर्जर काव्य संग्रह पृष्ठ ८६—९२

१ प्रारंभिक काल (स० १३०० —१४००)
(अ) प्रारंभिक रचनाए
(ब) परवर्ती रचनाए
२ विकास काल (स० १४००—१५००)
(१) प्रौढ गद्य
(२) गद्य काव्य

प्रारंभिक काल की रचनाओ का विवेचन १३०० से १४०० के अन्तर्गत तथा विकास काल की रचनाओ का विश्लेषण १४००—१५०० मे किया जायगा।

प्रारंभिक काल की प्रारंभिक रचनाओ के अन्तगत आने वाली कृतिया है—

१ आराधना स० १३००
२ बालशिक्षा स० १३३६
३ अतिचार स० १३४०
४ नवकार व्याख्यान स० १३५८
५ सर्वतीर्थ नमस्कार स्तवन स० १३५८
६ अतिचार स० १३६९

तथा परवर्ती रचनाओ की सीमा म आने वाली कृतिया हैं—

७ तत्वविचार प्रकरण स० १४०० के लगभग, तथा
८ धनपाल कथा

इस सब रचनाओ की प्रतिलिपिया १४ वी शताब्दी के लगभग की मिलती है अत य रचनाए निश्चित रूप से १२ वी शताब्दी क उत्तरार्द्ध या १३ वी शताब्दी के पूर्वार्द्ध म लिखी गई होगी। वस्तुत इनका ज मकाल यदि वि० १३०० से ही माना जाय तो असगत नही होगा।

प्रारंभिक काल की रचनाओं का विषयानुसार वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है —

१ धार्मिक कृतियाँ—
१ उपासना पद्धति ज य
२ धार्मिक सिद्धान्त मूलक
३ गद्यात्मक स्तोत्र सूलक
२ साहित्यिक—
■ व्याकरण सम्ब धी तथा
■ कथात्मक

धार्मिक कृतियाँ

उपासना पद्धति ग्रन्थ

गद्य की कृतियों में सबसे प्राचीन कृति अज्ञात लेखक कृत आराधना है। इस कृति का निरूपण धार्मिक है और धर्म के प्रमुख अंग उपासना से यह सम्बन्धित है। आराधना नाम से ही कृति का अनुमान उपासना मूलक होना स्पष्ट होता है। यह कृति पाटन के ताड़पत्रीय प्रति में मिली थी। इसका प्रकाशन सर्वप्रथम सन् १९२० में बड़ौदा से प्रकाशित प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह के सम्पादक श्री सी० डी० दलाल ने इस ग्रंथ में किया था।[1] तथा इसके आठ नौ वर्ष बाद श्री मुनिजिनविजय जी ने अपने ग्रंथ प्राचीन गुजराती गद्य सन्दर्भ में सं० १९८६ में किया।[2] इन दोनों ग्रंथों के द्वारा गद्य साहित्य के प्रारंभिक काल की प्रथम ३–४ रचनाएं विद्वानों के सामने पिछले कई वर्षों से आ चुकी है।

शिल्प

आराधना की अपनी पद्धति श्रद्धालु भक्त के हृदय के विचारों व विश्वास व पश्चाताप की अभिव्यक्ति का स्पष्टीकरण करता है, जिससे उपासना करते समय मन में किसी भी प्रकार का कलुष न रहे। आराधक स्वयं अपनी लघुता आराध्य के समक्ष स्वीकार करता है तथा अपने पूर्वकृत समस्त पापों और मिथ्या तत्वों पर वह इस उपासना पद्धति से आत्म शान्ति अनुभव करता है। पंच परमेष्ठि का स्मरण सब जीवों से क्षमायाचना एवं अरिहंत सिद्ध साधु और धर्म इन चार महापुरुषों की शरण में जाना ही आराधना[3] का मुख्य लक्ष्य है।

विषय — उपासना, आत्मशान्ति प्राप्त कर शुद्धि, मानस विशुद्ध, दुष्कर्मों का परित्याग महापुरुषों के उत्तम गुणों का स्मरण तथा अपनी लघुता पर विचार और आराध्य का आत्म समर्पण ही [illegible] आराधना के प्रमुख

वर्ण्य विषय हैं। सम्भवत यह भी कहा जा सकता कि विषय वस्तु के आधार पर ये गद्यात्मक संज्ञाएँ कालान्तर मे गद्य वर्णन की पद्धतियाँ हो गयी होगी।

विषय एवं शिल्प की दृष्टि से आराधना और अतिचार संज्ञक रचनाओं मे पर्याप्त साम्य दिखायी पड़ता है। आराधना के कुछ उदाहरण देखिये —

१ ज्ञानाचारि पुस्तक पुस्तिका सपुट सपुटिका टीपणा कवली उतरी ठवणी पाठा दारा प्रभृति ज्ञानोपकरण अवज्ञा अकालि पठन अतिचार विपरीत कथन उत्सूत्र पुरूपणु अवग्रह धान प्रभृतिकु आलोवहु।

२ सम्यक्त्व प्रतिपत्तिकरहु, अरिहंतु देवता सुसाधु गुरु जिन प्रणीत धम्मु सम्यक्त्व दण्डकु उचरहु सागर प्रत्याख्यानु ऊचरहु, पंचहु सरणि पयसरहु।

३ परमेश्वर अरहंत सरणि सकल कर्म निर्मुक्त सिद्ध सरणि ससार परिवार समुत्तरण यान पात्र महासत्व साधु सरणि सकल कर्म निर्मुक्त सिद्ध सरणि ससार परिवार समुत्तरण यान पात्र महासत्व साधु सरणि सकल पाप पटल कवल नकलंक कलिसु केवलि प्रणीतु धम्मु सरणि सिद्ध सध गत केवलि श्रुत आचार्य उपाध्याय सवसाध व्रतिणी श्रावक श्राविका इहज माइ आशातना की हुति ताहि मिच्छामि दुक्कड।[1]

४ पंच परमेष्टि नमस्कारू स्मरहि, तउ तुम्हि विशेष स्मरेवउ, अनइ परमेश्वरि तीर्थकर देवि इमउ अथ भणियउ अच्छइ अनइ ससारतणिउ प्रतिभउम करिसउ अनइ कद्धि नमस्कारू इहलाकि सपादियइ। आराधना समाप्रति।[2]

भाषा शैली — उक्त चारो उद्धरणों से १३वी शताब्दी की इस सर्व प्रथम कृति आराधना की भाषा शैली की विशेषताएं जानी जा सकती हैं। कृति की भाषा म संस्कृत शब्दों की बहुत प्रचुरता है, पर बढते हुए अपभ्रंश के शब्दों की भी कमी नहीं हैं। गद्यांश का देखने पर लगता है कि वाक्य अत्यन्त लम्बे और विराम दूर दूर पर हैं अत वर्णन की यह शैली पूर्णतया *समासप्रधान कही जायगी। अनेक शब्दों को एक साथ मिला कर कहा गया* है। जहा तक कृति में उसके विषय के विवेचन का सम्बन्ध है, उक्त दूसरे और तीसरे उदाहरण इस पर पर्याप्त प्रभाव डालते हैं।

---

१ प्राचीन गुर्जर काव्य सग्रह, पृष्ठ ८६
२ प्राचीन गुर्जर काव्य सग्रह, पृष्ठ ८७

यद्यपि इन उदाहरणों को [illegible] से यह स्पष्ट हो जाता है कि [illegible] के वात्सल्य वर्णन का सौन्दर्य तथा भाषा की कोमलता नहीं है, पदावली का चयन भी दुरूह सा है। परन्तु कवि की कल्पनाशीलता उसमें एक अभूतपूर्व प्रवाह अवश्य परिलक्षित हुआ है। यत्र [illegible] [illegible] सौन्दर्य रहित [illegible] दिखाई पड़ता है। [illegible] उदाहरण [illegible] का [illegible] तथा पदों का [illegible] और शब्दों की नादात्मकता [illegible] तथा अभूतपूर्व [illegible] —

[illegible], [illegible], [illegible], [illegible] परिजन, मित्र [illegible] [illegible] [illegible] आर [illegible] [illegible] [illegible] की [illegible]। [illegible] और [illegible] [illegible] [illegible] की [illegible] है [illegible] में [illegible] [illegible] [illegible] का प्रभाव [illegible] है और [illegible] में [illegible] राजधानी [illegible] था। [illegible] सब कारणों से कृति में [illegible] और [illegible] आ गयी है।

या अपभ्रंश के हैं। इसके पश्चात प्रथमा और द्वितीया मे प्रयुक्त उप्रत्यय तथा क्रिया पदों म कृद त रूपो के ह तथा इउ प्रत्यय प्रयुक्त किए गये हैं।

अनेक नए श-दो का प्रयोग भी मिलता ह यथा—ठवणि, पाठ, पोष ईह, तणहविवइ, पनर मढर, करावणि, तुम्हि, अनई, आदि। इनसे कहा जा सकता है कि भाषा के ये सक्रांति कालीन रूप हैं जिनसे प्राचीन राजस्थानी का स्वरूप विकसित हुआ है। उक्त उदाहरण एतदय देखे जा सकते हैं। इस रचना स यह ज्ञात होता है कि उस समय प्रौढ़ गद्य लिखने की अवश्य ही परम्परा रही होगी।

यद्यपि आराधना टिप्पणी की भाँति एक छोटा सी रचना है पर तु फिर भी गद्य को ज म देने वाले अंकुर इसमे विद्यमान हैं। उपासना प्रधान एव धार्मिक प्रचार के उद्देश्य से लिखी हुई होन पर भी यह कृति आचरण में पवित्रता मे पूण निष्ठा सिद्ध करती ह।

कृति का लेखक अज्ञात है। आराधना की प्रति गुजरात प्रदेश मे ही मिली है, जो वास्तव मे प्राचीन राजस्थानी का ही प्रदेश था। हिन्दी साहित्य में गद्य का उद्भव करने वाली यह अब तक प्रथम कृति कही गयी है। कृति के वण्य विषय, साम्प्रदायिक पौराणिकता, आचार गत पवित्रता तथा उपासना की विधियों और वणन शली के आधार पर यह अनुमानत निणय किया जा सकता है कि इसका कर्ता अवश्य ही कोई तपस्वी साधक विद्वान कवि और जनसेवी लोकोपकारक जन साधु रहा होगा।

जो भी हो, कृति पर्याप्त महत्व की है।

धार्मिक सिद्धान्तजन्य

शुद्ध सैद्धान्तिक कही जाने वाली इसी काल की रचनाओं में निम्नांकित तीन कृतियों को लिया जा सकता है —

१ अतिचार[1] — सं० १३४०

२ अतिचार[2] — सं० १३६९

३ ताड़ विचार प्रकरण—

जहाँ तक इन कृतियों के नामकरण का प्रश्न है, अतिचार से इनका विषय स्पष्ट होता है सम्भवतः अतिचार शब्द से दोषों का परिहार परिलक्षित होता है। यह भी आवश्यक अवस्था वर्णन प्रस्तुत करने वाली ही कृतियाँ हैं। दोनों कृतियाँ सैद्धान्तिक हैं और इनके वर्ण्य विषय भी भक्ति मनोवेगों से सम्बन्धित होने के कारण धार्मिक हैं। प्रथम अतिचार ताड़ पत्र में से लिया गया है तथा दूसरा अतिचार सं० १३६९ में लिखित ताड़ पत्र की रचना है।

जहाँ तक अतिचार नामक रचनाओं के वस्तु चित्रण का प्रश्न है, यह कहा जा सकता है कि ये रचनाएँ धर्म के सिद्धान्तों का विधिवत् पालन करने के नियमों का प्रतिपादन करती हैं। आचार में संयम भंग या किसी नियम का अतिक्रमण ही अतिचार कहलाता है जिससे नियम भंग से भक्ति का स्थान प्रमुख होता है।

आराधना और अतिचार

ये दोनों गद्य रचनाएँ पर्याप्त महत्त्वपूर्ण हैं। अतिचार सं० १३४० में लिखी गद्यबद्ध रचना है। ... हाँ नहीं इसके वस्तु विषय और भाषा ... में भी पर्याप्त ... है। ... ही है कि आराधना व ...

---

१ प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह — श्री दलाल पृष्ठ ८८

२ प्रा० गु० ... — पृ० २१९। २

की विधियों पर प्रधान रूप में विचार किया गया होता है और अतिचार में आराध्य व आराधना के सैद्धांतिक तत्वों का। दोनों धार्मिक कृतियां हैं तथा ऐसी कृतियों का मंतव्य स्पष्टतया धर्म प्रचार ही कहा जायगा।

आराधना में साधना एवं आराधना की विविध क्रियाओं व उपकरणों आदि की विधियाँ स्पष्ट की होती हैं तथा धर्म का यह एक ऐसी स्थिति विशेष होती है जिससे आचारों की श्रेष्ठता स्पष्ट की जाती है और साधक को अतिचारों से एकदम दूर रहने का एक महत्वपूर्ण सुझाव होता है। पापों के १८ स्थानों गुह्य रहस्यों या अष्टौ करण दुष्कार्यों पर पश्चाताप तथा सत्कार्यों आदि का विवेचन यदि आराधना में होता है[1] तो अतिचारों में ज्ञान, दर्शन, तप, चारित्र्य और वीर्य—इन पांच आचारों और बारह व्रतों के दोषों की आलोचना की जाती है। श्री अगरचन्द नाहटा लिखते हैं कि—आज भी पक्षी, चातुर्मासिक एवं सांवत्सरिक प्रतिक्रमण के समय यह अतिचार लोक भाषा में बोला जाता है जब कि प्रतिक्रमण के अन्यसूत्र अधिकांश प्राकृत में है।[2]

जहां तक अतिचार नामक दोनों कृतियों में वर्णित गद्य की भाषा का प्रश्न है वह आराधना के समान ही है। अतिचार का एक उदाहरण देखिए—

कालवेला पढ्य विनय हीन बहुमानहीण उपधान हीण गुरुनिण्हव अनेरा कण्हइ पढ्य —ज्ञाना पकरण पाटी पोथी ठमणी सांपड सांपुडी आशातना पग लागउ, थुंकु लागउ पढतां प्रद्वेष मत्सर

अंतराय हउ कीधउ हुई तथा ज्ञान द्रव्यु भक्षितु उपेक्षितु प्रज्ञापराधि विणास्यउ विणसंतउ उवेख्यउ हुती सक्ति सार सभालउ न कीधियह। अनेरइ ज्ञानाचारि इ काइ अतिचार हुउ सूक्ष्म बादर मनि वचनि काइ, पक्षदिवस माहि तेह सवहि मिच्छामि दुक्कडं।[3]

उक्त उद्धरण में अपभ्रंश की उकारात्मक प्रवृत्ति स्पष्ट है। उद्धरण में तत्सम शब्द अधिक हैं पव्य (पढ़ा) उवेख्य (खुला) तथा करती पढ़तां गुणतां आदि वर्तमान कृदन्त आज भी राजस्थानी में प्रयुक्त है। शब्दों के नये रूप भी उल्लेखनीय हैं। उदाहरणार्थ—सातमइ लागइ पानि आरम्भइ माहि न कीधी जयणा, गापुर माहे पोमउ आदि। माहि शब्द सानुनासिक है—जो आज भी तत या के एक व न में सानुनासिक हैं। इस र की प्रवृत्ति प्राचीन है। ए के रूप में प्रयुक्त नहीं नए हैं।

---

[1] आराधना—प्रा० गु० का० पृष्ठ ८६
[2] देव नागर, वर्ष १ अंक ३, पृ० २७
[3] प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह पृष्ठ ८७

३ हव हियां माहिं सम्यकत्व धरउ । अरिहंत देवता, सु साधु गुरू जिण प्राणीतु धम, सम्यकत्व दंडकु ऊचरउ । हिव अठार पाप स्थानक वो सिरावउ ।[1]

आराधना की भाषा से तुलना करने पर इन दोनों अतिचारों की गद्य की भाषा में बहुत ही अंतर स्पष्ट होने लगता है। उक्त दोनों अतिचार संज्ञक रचनाओं में समास प्रधान शैली कम होती गई है। वाक्य छोटे, सरस और प्रवाह लिए हैं। भाषा में अधिकांश शब्द ठेठ प्राचीन राजस्थानी के हैं। यह गद्य थोड़े प्रयास में ही सरल गद्य कहा जा सकता है। या वर्ण्य विषय धार्मिक होने से भले ही थोड़ी कठिनाई उपस्थित हो सकती है परन्तु जहाँ तक गद्य की सरलता और प्रवाह में सौन्दर्य का प्रश्न है, वह सर्वत्र परिलक्षित हो जाता है। गद्य की सरलता और सुगठित वाक्य योजना तथा प्राचीन राजस्थानी शब्दों के बाहुल्य की दृष्टि से ये दोनों रचनाएँ आदि कालीन हिन्दी जैन साहित्य की बहुत ही महत्वपूर्ण रचनाएँ मानी जायेंगी।

प्रारंभिक काल की परवर्ती रचनाओं के अन्तर्गत आने वाली धार्मिक सिद्धान्तों का पोषक गद्य साहित्य की एक बहुत ही सुन्दर कृति—"तत्व विचार प्रकरण" है। इस कृति का रचना काल सं० १ ० के लगभग है। इस प्रति का प्रकाश में लाने का श्रेय श्री अगरचंद नाहटा को है।[2] लेखक को यह कृति भी उन्हीं के सौजन्य से प्राप्त हुई। श्री नाहटा जी को यह रचना बीकानेर के बड़े ज्ञान भंडार की सूची बनाते हुए अभयसिंह भंडार में जिन प्रभसूरि परंपरा की २१० पन्नों वाली एक प्रति में लिखी हुई मिली।

तत्व विचार प्रकरण इन गद्य कृतियों में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण रचना है। इसका समय १४ वीं शताब्दी निश्चित रूप से होना चाहिए क्योंकि यह रचना जिसमें मिली है वह प्रति १५ वीं शताब्दी में लिखी हुई है और इस संग्रह में अधिकांशतः जिनप्रभसूरि जी तक की ही रचनाएँ उपलब्ध होती हैं, जिनका रचना काल १४ वीं शताब्दी है।

तत्व विचार प्रकरण संग्रह की प्रति के १३५ से १३८ पन्नों में लिखी हुई है। इस संग्रह में १३ वीं १४ वीं शताब्दी की अनेक पद्यबद्ध रास चतुष्पदिका द्विपदिका मात्र दोहक आदि महत्वपूर्ण रचनाएँ मिली हैं। तत्व विचार में धर्म के कुछ महत्वपूर्ण अंगों का प्रकाश मिलता है श्रावकों के लिए नियम साधकों के लिए व्रत तथा त्रिषष्ठि शलाका पुरुष चरित तथा

---

१ प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह, पृष्ठ ८२

२ देखिए राजस्थान भारती, भाग ३ अंक ३ ४ पृ० ११७ । २०

भोग परिभोग आहार और श्रावक धम और अरिहंत देवता के विषय मे गद्य के बहुत ही सुन्दर उदाहरण मिलते हैं —

४ भोग परिभोग व्रतु द्विविध भोजनत कमत ज भोजन। तताइ दुविधु भोगविवइ। आहारु तवोलु फलु विलेपनु। परिभोग ज पुणु पुणु भोगवियइ। भवन विलया। आभरण वस्त्रादिकु——सवहि परिभोगु निषध कीजइ।

५ एउ बारह विध श्रावक धम होइ। धम सम्यकत्व मूलु। स किसउ? अरिहंतदेवो गुरूणा सुसाहुणो जिणमय महापकाण।

६ अरिहंत देवता किसउ होइ? चउत्रीस अतिशय सयुक्तु अष्ट महाप्रतिहाय कृत शोभु अष्टादश दोष रहितु। नीरागु। निर्दोषु। सवश॥

और अत म श्रुति का उद्देश्य तथा मुख्य सवेदना निम्नांकित गद्यांश द्वारा समाप्त होती है —

७ बारहे भेदे तपु कीजइ। सतरहे भेदे सजमु पालियइ। आठप्रवचन माता उपयोगु दीजइ। रजाहरणु। मुहुती। गोछउ। पडिगहउ धरइ॥छ॥

एम तत्त विचार रइय सुय सागराइ उद्धरिय
बोधयक्षर महत्थ मन्थाण मणुगहट्ठाण।।छ।।
तत्व विचार प्रकरण समाप्तमिति।।छ।।

उक्त सभी उद्धरणो से यह स्पष्ट हो जाता है कि कृति धम प्रचार, चारित्र, सयम और शुद्धाचार के परिपालनाथ लिखी गई है साथ ही ज्ञान श्रावक व्रत, अरिहंत आदि गूढ बातों की सरल व सम्यक परिभाषाएँ भी लेखक ने दी हैं। अतः स्पष्ट है कि लेखक ने यह रचना जन साधारण के लिए लिखी हैं।

साथ ही जन धम व दशन की गूढ़ बातो को भी कवि ने जन साधारण के लिए सुलभ बनाने का उत्तम प्रयास प्रश्नोत्तर शैली को अपना कर किया है।

प्रस्तुत रचना में वण्य विषय धार्मिक हैं। लेखक ने इसमें विभिन्न धार्मिक तत्वो का विश्लेषण किया है, उसकी पद्धति पहले प्रश्न रूप में एक सूत्र रखकर उसकी व्याख्या करने की है।

तत्व विचार के प्रकरण म हम कोई भी कथा या शृखलाबद्ध वर्णन उपलब्ध नही होते और उपल ध गद्य म एक उत्कृष्ट गद्यात्मक लालित्य का अभाव है परन्तु वण्य विषय अत्यन्त कठिन होने पर भी लेखक ने बोलचाल की भाषा में उसे समझा कर जन साधारण के लिए सुलभ बनाया है।

भाषा—

जहाँ तक तत्व विचार की भाषा के निर्णय का प्रश्न है, यह बहुत ही सरलता से कहा जा सकता है। कि यह सरल गद्य है उपलब्ध गद्य रचनाओं

रचना तत्कालीन गद्य की सम्पन्नता का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करने में सक्षम है। गद्य की सम्पन्नता के कुछ उद्धरण एतदर्थ रखे जा सकते हैं —

(१) उज्जयनी नामि नगरी तहिठ भोजदेवु राजा। तीयहि तणइ पचह मयह पडितह मांहि मुख्यु धनपाल नामि पडितु। तीयहि तणइ घरि अ यदा कन्हि साधु विरहिण निमित्तु पइठा। पडितहणा भाया त्रीजा दिवस हुणा दधि लेअ ऊन बोजतु काई निणि प्रहावि व्रनिया विहरावण सारी खऊ नहूतउ व्रतिया भणियउ कता दिवसहणो दधि। तिणि ब्राह्मणा भणियउ, तीजा दिवसहणा बनि—

(२) व्रनिया ठाला नीसरता पडित धनपालि गवाक्षि उपविष्टि हुतइ दीठा। विणवियउ किसइ कारणि ठाला गवाक्षि उपविष्टि हुतइ दीठा। विणवियउ किसइ कारणि ठाला नीसरिया पडियाणी दधि दियह छह। तदन तउ गवाक्ष हुतउ उठिउ महामुनि समोउ अवियउ। महामुनि व्रनिया। भगवनहु। किसइ कारणि दधि न वियह महामुनिहि भणियउ। त्रीजा दिवसहणी दधि न उपगरा। पडितु भणइ किसउ दधि मांहि पुण पूयरा छई ? तउ महामुनि भणइ फूलिणि हुयइ।

(३) तहिवार धनपाल पडित प्रनिबोध हुयउ। परम श्रावक हुयउ। तउनिणि श्रावक विधि कीधी अनइ इमउ अगिग्रह कीयउ, तीथ गुरु देव मूकिउ। अनेरउ इणि जीम करउ स्तवउ नही। अ यदा परमेश्वर रूपम नायनउ चरितु कयउ। ब्राह्मण जाइउ भोजदेव राजा आगइ कहियए। भोजदेव रइ पुस्तकु अणाविउ। वाचियउं। भणियउ पडितराजा चरित्र खरउ विपिद्धा आ। पुण जहिठे रूपमनाथु धानियउ छइ तिणि स्थानकि महेशवरू थापि। धनपाल पडितु भाणइ तीथ गुरु देवु मूकिउ अनेरउ न स्तवू।

(४) भोजदेवु गउ अति आग्रहि लागउ। धनपाल पडित रीस चडी। सीयालउ हुतउ। मगडो बलती हुतियहि माहि घानियउ भोज देव राजा वार्ता पुस्तकु बालियउ बइठान ऊठिया राति कहिठ पडियाणी पूछियउ किसइ कारणि मभाविवि करउ ? धनपाल पडिति भणियउ परमेश्वर हणउ चरित्र कीयउ अनइ वालियउ। तउ कष्टु। तिणी भणियउ तुम्ह करता मो केताहि एकि श्लोक भाविया। पडितु भणइ कहि पडियाणी जेतला पद भाविया तेता कहिया। पडिति कतउ एकु चरितु रूपम नाथ हणउ कीयउ।—

उक्त उद्धरण से रचना की भाषागत सरलता, सरसता तथा सौंदर्य का अध्ययन किया जा सकता है। हिन्दी साहित्य की कथात्मक रचनाओं की परम्पराओं में धनपाल कथा का स्थान सर्वप्रथम माना जा सकता है।

अभ्युदय काल (गद्य)

गद्य में प्राचीन काल में उपलब्ध होने वाली इन रचनाओं के पश्चात

(३) कल्याण मंदिर बालावबोध सं० १४८५ मुनि सुंदरसूरि शिष्य
(४) उपदेश माला बालावबोध सोमसुंदर सूरि
(५) षष्टिशतक बालावबोध सं० १४८६ सोमसुंदर सूरि
(६) योगशतक बालावबोध अज्ञात
(७) भक्तामर स्तोत्र बालावबोध सं० १४३० अज्ञात
(८) नवतत्व बालावबोध सं० १४०२
(९) पर्यन्त आराधना बालावबोध दयासिंह
(१०) षडावश्यक बालावबोध
(११) विचार
(१२) क्षेत्र समास बाला सं० १४२९
(१३) शीलोपदेश माला बालावबोध
(१४) संग्रहणी बालावबोध सं० १४९७
(१५) श्रावक वृहदतिचार सं० १४२६ के आस पास जयशेखर सूरि
(१६) पृथ्वी चन्द्र वाग्विलास सं० १४०८ माणिक्यसुंदर सूरि

इन रचनाओं में अधिकतर रचनाएं बालावबोध संज्ञक हैं।[1] गद्य ग्रंथों में बालावबोध एक शैली ही हो गई थी। इसे दूसरे शब्दों में बालावबोध भाषा टीकात्मक पद्धति कहा जा सकता है। वास्तव में जैन धार्मिक गद्य अधिकतर प्राकृत भाषा में लिखा गया है। अतः जन साधारण के लिए सरल सुलभ बनाने के लिए जन विद्वानों, लोक सेवक जैन कवियों और उनके अनुगामियों ने इसे जन भाषा में बोधगम्य तथा सरस अनुवादों, टीकाओं, विस्तृत टिप्पणियों आदि रूपों में प्रस्तुत किया। साथ ही उन्होंने एक महत्वपूर्ण कार्य यह भी किया कि शास्त्रीयता के बंधनों में कसे ग्रंथों के आधार पर स्वयं भी मौलिक ग्रंथ रचे हैं। अधिकतर यह अनुवाद और टीकाएं प्रमुख दो रूपों में मिलती हैं — १— टब्बा
२— बालावबोध।

टब्बा

यह भी टीकात्मक पद्धति है। इस रूप में जैन टीकाएं इस समय की बहुत ही कम प्राप्त हैं। इस प्रकार की शैली में विस्तार नहीं होता। इस शैली का शिल्प बहुत ही संक्षिप्त होता है। बालावबोध से इसका आकार अत्यन्त सूक्ष्म होता है। इस शैली में पहले मूल शब्द लिखा रहता है। और

---

(१) देखिए— राजस्थान लेखक या साहित्यकार वर्ष २ अंक २०, पृ० ६८ में हिन्दी साहित्य की प्राचीनतम गद्य रचनाएँ—शीर्षक लेख,

फिर उसका अर्थ दायें बायें या उसके [illegible] में अथवा मूल [illegible] का अर्थ या तो नीचे या ऊपर अथवा उसके पास में हो [illegible] दिया जाता है। आदिकाल के मौलिक गद्य साहित्य में भी टब्बा संज्ञक रचनायें उस काल में लगभग नहीं मिलतीं। कालान्तर में इस प्रथा की कई रचनाएँ उपलब्ध होती हैं।

बालावबोध

आदिकालीन हिन्दी जैन साहित्य के गद्य के विकास काल या अभ्युदय काल में बालावबोधक संज्ञक रचना ही प्रमुखतया उपलब्ध होती है। बालावबोध से तात्पर्य सरल सहज बोधगम्य अनुवाद से है। यह शैली जैन कवियों ने पढ़े लिखे व्यक्तियों के लिए नहीं अपना कर बहुत ही कम पढ़े लिखे अथवा अपढ़ श्रद्धालु श्रावकों के समझाने के लिए बनाई थी। मूल ग्रंथ की व्याख्या इन रचनाओं में बहुत ही विस्तार के साथ होती है। क्योंकि इस शैली की मुख्य मंशा यही है ताकि कठिन से कठिन सैद्धान्तिक सार भी सरल व सहजगम्य हो सके व जन साधारण उससे लाभ उठा सके। अतः मूल सूत्रों व सिद्धान्तों को स्पष्ट करने में कथा का प्रयोग किया गया है। वस्तुतः इस प्रकार की शैली को हम कथा प्रधान शैली भी कह सकते हैं। कथाओं के अनेक प्रकार भी मिलते हैं। यथा —

(१) मौलिक कथाएँ
(२) परम्परा गत कथाएँ
(३) लोक कथाएँ
(४) उपदेशात्मक कथाएँ
(५) धार्मिक कथाएँ
(६ विविध विषयक कथाएँ

वस्तुतः इन सब कथाओं के माध्यम से धर्मोपदेश व धर्म प्रचार ही लक्ष्य रहा है। प्रत्येक कथा धर्म के किसी उपदेश का प्रचार करती है। अतः धार्मिक कथा [illegible] इस शैली में [illegible] साधारण [illegible] धर्म, [illegible] वैराग्यिक, [illegible] उत्तराध्ययन [illegible], मृगापुत्र, [illegible], [illegible], [illegible] चरित्र [illegible] आदि मिल रहे हैं। इसके अतिरिक्त भी यह [illegible] का हृदय [illegible], [illegible], [illegible] दया, सद् भावना [illegible] विधान, [illegible], धार्मिक [illegible], [illegible], धार्मिक कथा [illegible] में [illegible] है।

[illegible] में [illegible] अथवा [illegible] की [illegible] के लिए [illegible] की [illegible] है। [illegible] प्रारम्भ में इस प्रकार की [illegible] में [illegible] किसी

विषय धर्म सूत्र, या ज्ञान सिद्धान्त या किसी उपदेश प्रधान तत्व न होता है। वस्तुत इस शैली का पहले तथा कालान्तर दोनों कालों में खूब प्रचार हुआ। यह शैली भाषा टीकात्मक पद्धतियों में सबसे उत्कृष्ट तथा प्रधान है।

उक्त सूची में दी हुई इन कृतियों का वर्गीकरण विषय के आधार पर वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है।

(१) व्याकरण मूलक गद्य साहित्य
(२) कथात्मक गद्य साहित्य
(३) धर्म सम्बन्धी गद्य साहित्य
(४) ऐतिहासिक गद्य साहित्य
(५) गद्य काव्य का उद्भावक एवं प्रेरक गद्य साहित्य
(६) अन्य (विविध विषयक

व्याकरण और कथात्मक गद्य साहित्य के साथ साथ धार्मिक साहित्य के रूप में मिलने वाली अनेक जैन गद्य रचनाएं उपलब्ध होती हैं। यों प्रमुख रूप में यदि देखा जाय तो प्रारम्भिक और अभ्युदय काल दोनों कालों में मिलने वाली रचनाओं में अधिकतर जैन रचनाएं धार्मिक गद्य की ही हैं परन्तु फिर भी गद्य के क्षेत्र में जैनाचार्यों द्वारा लिखा सरल गद्यात्मक कथा साहित्य निबंध मूलक गद्य साहित्य भाषानुवाद, टिप्पणियों टीकाओं भाष्यों, और बालबोध व्याकरण आदि के रूप में विशाल संख्या में उपलब्ध होता है। इस धारा का विस्तार में परिचय आगे के पृष्ठों में दिया जायगा। इसके अतिरिक्त ऐतिहासिक जैन गद्य साहित्य अजैन गद्य साहित्य गद्य काव्य का प्रेरक साहित्य तथा अन्य विविध विषयक गद्य साहित्य भी महत्वपूर्ण है जिनका विस्तार में विश्लेषण इस प्रकार है —

व्याकरण मूलक गद्य साहित्य

गद्य साहित्य के अभ्युदय काल में व्याकरण मूलक गद्य रचनाएं उपलब्ध होती हैं। व्याकरण सम्बन्धी ग्रंथों की परम्परा गद्य के प्रारम्भ काल सं० १३०० से ही मिलने लगती है। व्याकरण पर लिखी गई इन कृतियों की परम्परा का श्रीगणेश संग्रामसिंह की सम्वत १३३ की रचना बालशिक्षा[1] से होता है। बाल शिक्षा राजस्थानी का एक महत्वपूर्ण व्याकरण ग्रंथ है। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है इस ग्रंथ में बालकों को व्याकरण की शिक्षा दी गई है। लेखक ने बहुत ही सुगम शैली का प्रयोग किया है। व्याकरण सबंधी

---

(१) प्राचीन गुजराती गद्य सन्दर्भ— सं० मुनिजिनविजय की परिशिष्ट पृष्ठ २०५।

कीजई, दीजई । लीजई इत्यादौ वक्रोक्तौ कर्मणि वर्तमानाया आत्मनेपदम् । करिजे, लेजे, दजे, इत्यादौ एकारात वचने सप्तमी ।२।

/ × ×

कीजउ दीजउ, लीजउ इत्यादौ कर्मण्यात्मनेपद ।

× × ×

म कीधु म लीधु म दीधु इत्यादौ कर्मणि मा शब्दयोग जई करत, जई लेत, जई दत, इत्यादौ क्रियातिपत्ति

करि सिई, लेस (लेसिई, देसिइ इत्यादौ नही करई, नही लियई, नही दियई इत्यादौ भविष्यन्ति

अथ कृतप्रत्यय प्राप्ति माह

करतउ, लेतउ, देतउ इत्यादौ कर्तरि वर्तमान शतडानशौ । कीजतउ, लीजतउ, दीजतउ, इत्यादौ कर्मण्यानाश ।

× × ×

करीउ, लेउ, देउ इत्यादौ क्त्वा ।

करी आणु, पढी सकउ, करिवउ लेवउ देवउ इत्यादौ कर्मणि तव्य नीयौ ।

(अथ विशेष प्रत्यय प्राप्ति माह)

करावई, कराविवउ, करावीसई, करावतउ, करावी, कराविवा इत्यादौ इनतात प्रथमा । (उक्ति प्रक्रम पष्ठ)

उक्त उदाहरणों से कृति मे राजस्थानी शब्दों के माध्यम से वर्णित व्याख्यात्मक शैली स्पष्ट होती है । वस्तुत बाल शिक्षा का महत्व व्याकरण ग्रन्थो पर लिखे ग्रन्थो मे सर्व प्रथम कृति होने के कारण और भी बढ जाता है। इस रचना से स्पष्ट है कि इसमें बोल चाल की भाषा का साधारण स्वरूप है । पहले ही लेखक ने जिन शब्दो का प्रयोग किया है उनका विभिन्न कालों का स्वरूप देखा जा सकता है —

वर्तमान में —	दियइ करइ, दीजइ, कीजइ लीजइ आदि
विधिलिंग —	करिजे देजे, लेजे ।
लोट —	करि लइ, दइ, कीजउ दीजउ आदि
भूतकाल —	जोकउ लीधउ
भविष्यकाल —	करिसि, देसि, करिसिइ देसिइ, कीजिसिइ दिजिसिइ आदि
कृदन्त साधारण —	करिवउ, लेवउ
कृदन्त वर्तमान —	करतउ, लेतउ कीजतउ दीजतउ,
भूत कृदन्त —	कीधउ दीधउ लीधउ,
भविष्य कृदन्त —	करूणा इस देणा इस

उनके शब्दो तथा क्रिया रूपो का अध्ययन इन उदाहरणो से किया जा सकता है —कीहां, जीहां, तीहां, (कहां, जहां, तहां) । हिवडा (हमणा)

आदि मानों को हृदयंगम करने को पर्याप्त होगी। इन उदाहरणों से गद्य के तत्कालीन रूपों को समझा जा सकता है। लेखक ने कृति में विभक्तियों पर विचार किया है तथा नाम माम कृन्त भेद, उक्ति भेद आदि पर भी विस्तृत प्रकाश डाला है। कृति अनुवाद रूप में है

(१) ज कीजइ लीजइ दीजइ, पढाइ, गुणीइ, इत्यादि बोलिवइ, युक्ति क्रिया करी माहि अ वस्तु कर्त्ता व्यापीइ त कर्म। तिहां द्वितीया। चत्र कटु करइ। करइ इसी क्रिया। कवण करइ चत्र। जु करइ सु कर्त्ता। तिहां प्रथमा। किसउ करइ, कटु ज कीजइ त कर्म। तिहां द्वितीया। चत्र कट करोति। एव चत्र काष्ठ दहति। ग्राममयाति। शास्त्र पठति।[१]

(२) जहनइ कारणि क्रिया कर्त्ता कर्म हुइ। जनइ जहरहइ दान दीजइ कोप कीजइ तिहां संप्रदानि चतुर्थी। विवेकिउ माम्नइ कारणि तपइ। तपइ इसी क्रिया इत्यादि। धर्मु सुखनइ कारणि हुइ। क्रिया कर्त्ता पूर्ववत। किमानइ कारणि धर्मु हुइ, सुखनइ। तिहां चतुर्थी। साधु मोक्षनइ कारणि तपु करइ।

(३) जिहां देश कालि जहनइ विषइन इत्यादि इ कारनइ बोलिवइ जे कर्त्तानइ अथवा जे कर्मनउ आधारू हुइ ते अधिकरण तिहां सप्तमी। चत्र ग्रामिवसइ क्रिया कर्त्ता पूर्ववत। किहां वसइ, ग्रामि। तिहां अधारि सप्तमी।

क्रियाओं का विश्लेषण भी सुन्दर है

(४) मेघि वरिसइ मोर नाचइ। नाचइ इसी क्रिया। कवण नाचइ मोर ज नाचइ ते कर्त्ता। तिहां प्रथमा। किवइ हतइ नाचइ मेघि भाव लक्षणि सप्तमि।

कारकों का विवेचन भी सुन्दर है —

(५) छ कारक सातमउ सम्बन्धु, कर्त्ता करण, सम्प्रदान अपादानु अधिकरण, सम्बन्धु जु करइ सु कर्त्ता। ज कीजइ ते कर्म। जाण कारी क्रिया कीजइ त करणु। यह देवतणी वाछा। य ह रूपइ काइ। परीइ काइ त पारकु सम्प्रदान सनकु हुइ त कारकु अपादान सनकु हुइ। जेह क ह" ज माफि जेह पास जेह तणउ, जह तणी न तणउ तेज रहीं इत्यार्थ सम्बन्धु। ग्रामि, अनइ हाथि, वनि, विनि माझि बाहरि इत्यार्थ अधिकरण।[२]

दूसरी रचना औक्तिक है। इस रचना को भी दलाल ने १५ वीं

---

[१] प्राचीन गुजराती गद्य सदर्भ

[२] राजस्थानी गद्य का विकास, अप्रकाशित प्रबन्ध लेखक श्री शिवस्वरूप शर्मा, पृ० ६८

वस्तुत इन सभी कथाओ मे विषय की मुख्य सवेदना, धर्म प्रचार, चरित्र निर्माण और ज्ञान प्राप्ति ही है। कथात्मक पद्धति से इन रचनाकारो ने श्रोताओ के मनोवैज्ञानिक पक्ष का स्पर्श किया है। इन कथाओ द्वारा वर्णित मनोविज्ञान भी उल्लेखनीय है। जैन दर्शन, आचार कर्म, तथा भक्ति व धर्म के विभिन्न अगो जैसे कठिन व दुरूह विषयों पर प्रकाश डालने और उनको सरलतम भाषा मे समझाने के लिए जैन लेखको ने यह कथात्मक शैली अपनाई है और वर्णन प्रवाह के लिए कथात्मक गद्य को ही ठीक समझा है। अत ये कथाएँ अत्यन्त सरस, स्वाभाविक भाव प्रधान, उपदेश नीति, तथा चारित्रिक गरिमा दार्शनिक सिद्धान्तो और उपासना पद्धतियों को स्पष्ट करती हैं। इन कथाओ म महत्वपूर्ण कथाएँ प्रमुख जैन विद्वान तरुण प्रभसूरि के ग्रंथ म स० १४११ से ही उपलब्ध होती हैं इनमे प्रमुख रूप से सम्यकत्व, बारव्रत, श्रावक अतिचार, उपदेशमूलक, गृहस्थधर्म तथा योग शास्त्र, नमस्कार बाला बबोध, तथा प्रकीर्णक आदि अनेक विषयो पर लिखी कथाए उपलब्ध होती हैं। इन गद्य कथाओं क रचयिताओ में प्रमुख प्रमुख रचनाकार हैं—श्री तरुणप्रभसूरि (स० १४११) श्री सोमसुन्दरसूरि (स० १४५० १४९९), श्री माणिक्यसुन्दरसूरि (स० १४७८), श्री हेमहसगणि (वि० स० १५००) आदि हैं।

विभिन्न विषयो तथा उपदेशो के प्रचारार्थ जन भाषा मे लिखी गई इन गद्य कथाओं म द्वादश व्रतो पर लिखी गई अनेक कहानियाँ हैं। विषयानुसार इन कथाओ में कुछ क उदाहरण, उनकी भाषा तथा इनके प्रवाह का अध्ययन करने के लिए नीचे दिए जा रहे हैं —

(१) सम्यकत्व तथा व्रतों सम्बन्धी रचयिता श्री आचार्य तरुणप्रभसूरि स० १४११ यथा प्रथमव्रत ऊपर चद्रसूर राजा पुत्र कथा प्रथम अहिंसा व्रत पर लिखी एक कथा के गद्य का उदाहरण देखिए —

(१) जय पुरु नामि पुरू। शत्रुजय नामि राजा। सूर चद्र नामह बरी बि पुत्र। ज्येष्ठानुरागि करी राजेंद्रि ज्यष्ठु युवराजा कीधउ। प्रति करी। चद्र पति मात्राई करी गणिउ नही। तउ अपमान बाहमउ चद्रि न्यातरू लीधउ।[1]

(२) वासतो नामि नवरी, कीर्ति पालु नामि राजा भीमु नामि तेह तणउ पुत्रु। पुन ही कन्हा अति वसाम् सिंहु नामि श्रेष्ठि। सु पुणु परम श्रावकु जिन भक्तिवतु वर्तई। अनेइ दिनि सभा माहि

[1] प्राचीन गुजराती गद्य सदर्भ पृ० ७

> कीर्ति पामु राजा निर् यष्टि मुण कमनु भमर जिम आदगत हुवउ कमइ । नेउसइ प्रस्तावि प्रतीहारि आवी गज [illegible] बीनवइ महाराय । मुम्हरइ देवल्हाण [illegible] पुरुष [illegible] द्वारि आवि ॥ छइ । राजा मन्हि माहि मेलिहु ।[1]

धर्मकथा तथा श्रावकों के आधार पर भी अनेक कथाएं उपलब्ध हैं जिनकी भाषा अत्यन्त सरल व प्रवाहपूर्ण है। इन कथाओं का प्रारम्भ करने की शैली लगभग एक सी है परन्तु फिर भी प्रत्येक कथा अपने में पूर्ण तथा प्रभावशालिनी है। वाक्य छोटे, घने तथा भाव पूर्ण हैं जिनमें एक सौन्दर्य सबत्र विद्यमान है शैली में कहीं भी शिथिलता नहीं है। उदाहरण पद ऊपर लिखी भद्रीश्वर कथा का एक उद्धरण देखिए —

> प्रभात समइ धन भानु पैनी करा [illegible] [illegible] पति [illegible] करतइ हूवइ श्रेष्ठि पोमइ पारी करा निवल पूर्व विधि मठ व [illegible] मारउ । दुन्यानु माथि देइ नई धरिबसी पनाई बिवरा हुवी । अनेरइ [illegible] नि पु अवस्थाप लिया पान घटिना पर्हूना [illegible] धर्मु पारी हुवी तेह धर्मु माहिमउ एहु अमूलिडु पुरवापम्मउ [illegible] वरी निन्हि जि नगरि धीविवा आविउ । मु [illegible] गुणनु श्रेष्ठि [illegible] मागवनि मागविउ । मु पान परी वरी तगार रहइ आविउ मु पार धरम बताडु [illegible] जानी वरा इगउ व नवइ ।[2]

इन कथाओं में जन भाषा शब्द का सरलतम रूप विद्यमान है। विविध विषयों पर लिखा तत्कालीन अनेक प्रकीर्ण कथाएं [illegible] का प्रमाण है।

एक बुढ़िया पर लिखी एक तत्कालीन प्रकीर्ण कथा का एक [illegible] देखिए —

> [illegible] वि [illegible] कवि दरिद्रनावरि दुखित डोकरि एक हुँती । [illegible] वाणि नगरड [illegible] एहु [illegible] । मु [illegible] विविध [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] । अनेरइ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] आवन्न [illegible] मु पनि [illegible] [illegible] [illegible] लिखी है [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] । [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] नहीं [illegible] ।[3]

उक्त उद्धरण में डोकरि दीकिरउ वाउस हठउ आदि शब्द ठेठ राजस्थानी के हैं जो आज भी बोले जाते हैं।

उपदेश प्रधान धार्मिक कथाओं में अनेक नीतिमूलक कथाएं मिलती हैं जिनकी मुख्य भावना केवल धन या नश्वर संसार से विरक्ति ग्रहण करना ही है। मनावती कथा का एक उदाहरण गद्य को प्राञ्जलता को पूर्णतया स्पष्ट करता है —

> सभाइ पुरुडओ साप आतो दीठउ। चदन बामानु हाथ परहड बीधउ। चन्दनबाला आगी। पूछइ पूछ" तुम्हे वा माहरू हाथ हटाविउ। मनावतीइ कहिउ साप आइ छ, तउ भणी। चन्दनबाल साप न देखइ। मनावतीनइ कहिउ – तु किम देखइ? तुम्हनइ की ज्ञान छइ? तीणइ कहिउ केवल ज्ञान [1]।

इसी प्रकार सामसुन्दर सूरि द्वारा अनूदित अनेक कथाएं प्रश्न उत्तर पर प्रकाश डालती हैं। इन कथाओं में मनुष्य के कर्त्तव्य तथा गृहस्थ धर्म के गुणों के सुन्दर वर्णन हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं —

(१) तथा कुलशील ज कुल बाप पिता माहिं नउ बडा कहीइ अनइ पान मद्य मांस रात्रि भोजनादिकनउ नियम रूप ए आचार जेहे बिहु नाने करी ज समान सरखा हुइ। कुलिइ करी आचारि करी न सरखा हुइ।

(२) प्रसिद्ध च देशाचार ज उत्तम मनुष्य मान्य प्रसिद्ध देशाचार आचार भाषाश्राक्ष्वादिक ताक्षक परस्पर न मनावन्तइ ते धर्म योग्य नहीं ज मनावइ ते धर्म योग्य।

(३) राजादि राजा मन्त्रीश्वर पुरोहित सेठा प्रमुख माटानउ अवर्ण वाद निन्दा न करइ। ते बोलता इ बाक इ लक्ष्मीना हानि जीवित न विनाशादिक पाप ऊपजइ तह भणी रहितउ बोलइ यइ ते धर्म योग्य।[2]

इस प्रकार हिंदी गद्य साहित्य के अनेक उदाहरण इन आदिकालीन कृतियों के प्रस्तुत किए जा सकते हैं। यद्यपि इनमें से अधिकांश कथाएं अपने पूर्ववर्ती विद्वानों के संस्कृत और प्राकृत ग्रंथों से अनूदित हैं परन्तु तो भी इनके उदाहरणों में तत्कालीन भाषा के गद्य क्रम और विकास का इतिहास स्पष्ट हो जाता है।

---

१ प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ पृ० ७०

२ वही, पृष्ठ ११८ ११९

विद्वता का परिचय मिलता है। विषय वस्तु यद्यपि धार्मिक है, परन्तु हिन्दी साहित्य की प्राचीनतम गद्य रचनाओं में अभ्युदय काल या स्वर्णकाल की कृतियों मे इस षडावश्यक बालावबोध कृति को सबसे प्रौढ़ कृति कहा जा सकता है।

आचार्य सूरि का व्यक्तिगत जीवन, जन्म आदि स्पष्ट नहीं होता। सहायक ग्रंथों मात्र से ही कुछ परिचय मिल पाता है।[1] खरतर गच्छ में इनकी सं० १३६८ में दीक्षा व साहित्य साधना प्रारंभ हुई। तरुणप्रभ धुरंधर महारथी थे तथा संस्कृत, प्राकृत और लोक भाषा या तत्कालीन बोलियों में रचना करने में उनकी शक्ति अभूतपूर्व थी।

ग्रंथ का शिल्प

बालावबोध शैली, भाषा टीकात्मक पद्धति है, जिस पर पूर्व पृष्ठों में प्रकाश डाला जा चुका है। प्रस्तुत कृति जैन धर्म के छः आवश्यक कर्मों पर लिखी गई है जिसका मुख्य मन्तव्य धर्मोपदेश, शील तथा धर्म प्रचार ही है। कृति का रचना काल स्वयं लेखक के शब्दों से सं० १४११ स्पष्ट होता है। रचना शैली उपदेशात्मक है, शब्द छोटे और गंभीर विवेचन करने में सक्षम हैं। आचार्य श्री की कृति उनके गंभीर अध्ययन, मनन और अनुशीलन का परिचय देती है। इसकी कथात्मक शैली उदाहरणों अर्थान्तर न्यासों और दृष्टान्तों से पुष्ट किए हुए गद्य को प्रस्तुत करती है।

जहां तक कृति की भाषा का प्रश्न है। ऐसी उत्तम गद्य कृति दूसरी नहीं है। संस्कृत प्राकृत और उसके साथ जन भाषा के उदाहरण समन्वित हैं। लेखक का भाषा पर असाधारण अधिकार था। शब्द चयन गठा हुआ तथा पांडित्य रहित है उसमें एक अभूत-पूर्व सभार है। शब्दों का सुगठित स्वरूप हिन्दी साहित्य में गद्य की तत्कालीन सम्पन्नता को सिद्ध करता है। आचार्य जी का काव्यात्मक प्रवाह गद्य की सरसता की ओर निर्देश देता है। बालावबोध शैली में रचा गया यह पहला ग्रंथ है जिसमें प्रौढ़ गद्य लेखक की अभिरुचि, जनता की धार्मिक मनोवृत्तियों एवं चरित्र को सबल करने के तत्त्व तथा रचयिता के भावों को सरल भाषा में प्रस्तुत करने की असाधारण क्षमता है। कृति की भाषा दुरूह नहीं, एकदम सरल है। क्लिष्टता से यह कृति कोसों दूर है।

---

१ देखिए युगप्रधानाचार्य गुर्वावली—प्रति (क्षमाकल्याण ज्ञान भंडार बीकानेर में सुरक्षित)

४ भवनामर स्तोत्र बालावबोध
५ नवतत्व बालावबोध
६ पर्यन्त आराधना बालावबोध
७ षडावश्यक बालावबोध
८ विचार ग्रंथ बालावबोध

इन ग्रंथो के कुछ उद्धरणो पर विचार किया जा सकता है। क्योंकि इन कृतियो की शैली शिल्प और वस्तु में लगभग पर्याप्त समानता है। इन कृतियो में छोटी छोटी कथाएँ हैं भाषा अधिकांश कृतियों की प्राचीन राजस्थानी या जूनी गुजराती है। इनमे उपदेशो का सुन्दर संग्रह है। प्राकृत और संस्कृत के दुरूह काव्यो का सरलतम बनाने के लिए तथा जन साधारण के लिए सुलभ करने के लिए ही इन कृतियो की रचना हुई है। योग शास्त्र, हेमचंद्र का ग्रंथ है, उस पर दो बालावबोध हैं जिनमें कथाएं लिखी गई हैं।

जहाँ तक इन ग्रंथो के साहित्यिक तत्व का प्रश्न है वह अधिक नहीं है फिर भी इन कृतियो में भाषा की कड़ियाँ स्पष्ट परिलक्षित होती है। उक्त रचनाओ में सभी का विश्लेषण करना यहाँ संभव नही है। केवल एक दो का परिचय तथा गद्य के उद्धरण यहाँ दिए जा सकते है।

उपदेश माला बालावबोध आचरण की पवित्रता पर प्रकाश डालने वाली छोटी बड़ी प्राकृत कथाओं का ग्रंथ है। रचना का उद्देश्य धार्मिक उपदेश है। प्राकृत गाथाओं का विश्लेषण करने के लिए ही रचनाकार ने उनकी व्याख्या प्रस्तुत की है। योगशास्त्र बालावबोध श्री हेमचंद्र सूरि का लिखा संस्कृत ग्रंथ है। श्री सोमसुन्दर सूरि ने उसी पर यह बालावबोध लिखा है। रचना के नाम से ही स्पष्ट है कि लेखक ने उसमें योग सम्बन्धी तत्वो का विश्लेषण किया होगा। इस ग्रंथ में योग की स्थिति, योग के गुण वर्णन, पंच महाव्रत, आदि के साथ श्रावक के गुण सम्यक्त्व का विश्लेषण इन्द्रियों का वर्णन, मन का शुद्धिकरण और उसका स्वरूप, भावनाओ का वर्णन, मोआगमों तथा अतिचार और श्रावक के पांच अणुव्रतों का परिचय मिलता है। इन धार्मिक उपाख्यानो की भाषा सरल है। कथा तत्व की सरसता से धर्मगत उपदेशो की सारी दुरूहता मिट जाती है। इन कथाओ में भाषा के विकास के सोपान हैं।

दोनो कृतियों में साहित्यिक तत्व साधारण हैं। यह सही है कि षडावश्यक बालावबोध की भाँति ये रचनाएं प्रौढ़ नहीं हैं परन्तु फिर भी गद्य

बासति नगरी, कीर्तिपाल राजा। भीम वेटउ। राजानइ मित्र सिंथ्रेठि। एक बार दूत एक आवो राजा तइ बीनवइ–स्वामी नागपुरि नगरि नागचद्र राजा तणउ गुणमाला कन्या। ते ताहरा पुत्र हइ। दर वाछइ प्रसाद करउ। पुन मोक्लउ राजा सिंघ श्रेष्ठि नइ कहिउ जाउ कुमर नउ विवाह महोत्सव करि आवउ श्रेष्ठि कहइ—नागपुर इहा थकउ सौ जाजण गाजेन्द्र हुइ मस रहहि। तउ सौ जाजण उपद्रउ जावा नीम छइ। तह भणी नही जाउ राजा कुपित कहइ जउ नहि जाउ तउ तुहइ उटे घाली। जोजण सहस परइ मूकाविसु।[१]

बालावबोध शैली के अन्य कई ग्रंथ मिलते हैं, जिनमे खरतर गच्छ के मेरुसुन्दर सूरि का नाम उल्लेखनीय है। इनका रचना काल सं० १४८७ से १५३० तक है। राजस्थानी में इनकी अनेक टीकाएँ उपलब्ध होती हैं। बालावबोध रचनाओं में सबसे अधिक इन्हीं की हैं। ये रचनाएँ इस प्रकार हैं —

(१) शीलोपदेशमाला बालावबोध।
(२) पुष्पमाला बालावबोध।[२]
(३) षडावश्यक बालावबोध।[३]
(४) शत्रुंजय स्तवन बालावबोध।[४]
(५) कर्पूर प्रकरण बालावबोध।[५]
(६) योग शास्त्र बालावबोध।[६]
(७) पंच निग्रंथी बालावबोध।
(८) अजितशांति बालावबोध।
(९) भावारिवारण बालावबोध।
(१०) कल्प प्रकरण बालावबोध।
(११) योग प्रकाश बालावबोध।
(१२) षष्टि शतक बालावबोध।

---

१ अभयजैन ग्रंथालय बीकानेर में सुरक्षित।
२ वही, संग्रहालय।
३ पु० संघ भंडार पाटण में।
४ वही।
५ वही।
६ गोडीजी भंडार उदयपुर तथा मुनि विनयसागर संग्रह, कोटा।

(१३) षष्टिशतक बालावबोध।

(१४) विचार मुख ... बालावबोध।[1]

इन ग्रन्थों के अतिरिक्त मेरुसुन्दर सूरि की कुछ अन्य रचनाएँ भी हैं।[2] राजस्थानी गद्य लिखने में मेरुसुन्दर की सभी रचनाएँ उत्कृष्ट हैं। इनकी रचनाएँ विविध विषयों पर लिखी गई हैं, पर अधिकांश ग्रन्थों का रूप धार्मिक है। जो भी हो, यह स्पष्ट है कि हिन्दी गद्य के विकास में बालावबोध तथा हिन्दी गद्य रचनाएँ विकास क्रम में सहायक रही हैं।

शेखर सूरि

जयशेखर सूरि (सं० १४०० १४६२) इस काल के प्रमुख गद्य लेखक हैं। उन्होंने ३६ ग्रन्थों का प्रणयन किया।[3] जयशेखर सूरि अपने समय के श्रेष्ठ कवि तथा आचार्य थे, जिन्होंने जैन धर्म विषयों पर प्रौढ़ तथा रचनाएँ लिखी हैं।

त्रिभुवन दीपक प्रबन्ध इनके गद्य ग्रन्थों में ... सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ माना जाता है। इनका प्रमुख ग्रन्थ ... उल्लेखनीय है।[4] अतिरिक्त इस काल के गद्यकारों में ... पुण्य सूरि का ... विवरण बालावबोध (सं० १४७६)[5] ... (सं० १५०१) का ... बालावबोध आदि प्रमुख हैं। इन लेखकों की रचनाओं में गद्य ... हुआ है, और हिन्दी ... प्रयुक्त हुआ है, जिसका ... है। इन्हीं रचनाओं में प्रयुक्त ... प्रतिबिम्ब

(स० १४६६)[1] तथा कालिकाचार्य कथा[2] (स० १४८५) इनमें कालिकाचार्य कथा बड़ी महत्वपूर्ण है। गद्य की शैली में यह रचना काव्य का सा रस घोलती है। प्रासादिक शैली में माधुर्य का उन्मेष दृष्टव्य है। नाहटाजी के भंडार में यह रचना सुरक्षित है। शब्द चयन सरल, लावण्यता, प्रासादिकता अनुप्रासात्मक योजना दृष्टव्य है। उदाहरण और दृष्टान्तों की तो घटा ही उमड़ी जाती है। एक उदाहरण इस परंपरा का उल्लेखनीय है —

(१) जिसउ चचल इन्द्रधनुष नु आकार, जिसउ चचल मन नउ व्यापार। जिसउ चचल बीमनु झूलार। जिम दौहिलउ ए चारित्र। जिसउ चचल ठाकुरनउ अधिकार। जिसउ पीपलनु पान तिसी चचल राज्य लक्ष्मी जाण। सुम सरीखा सुविवकी प्राणी इसीया असार रूपीया कूआ माहि काइ पडइ दुर्गति काइ रडवडइ।[3]

इस प्रकार धार्मिक गद्य साहित्य में बालावबोध टीका साहित्य और अतिचार सम्बन्ध रचनाएँ अधिक मिलती हैं, जिनका लक्ष्य धार्मिक होते हुए भी उनमें साहित्य और भाषा विषयक सौंदर्य पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है।

(४) ऐतिहासिक गद्य साहित्य

गद्य की इस धारा में इतिहास से सीधा सम्बन्ध रखने वाली कुछ गद्य रचनाएँ उपलब्ध होती हैं। इन ऐतिहासिक रचनाओं में कुछ महापुरुषों जैनाचार्यों और गण, गच्छ तथा पट्ट की परम्परा विवरण मिलता है। ऐतिहासिक गद्य साहित्य का प्रतिनिधित्व करने वाली इस प्रकार की रचना अद्यावधि सिर्फ एक ही उपलब्ध हुई है परन्तु अजमेर, नागौर, जैसलमेर, दिल्ली, मेरठ मुजफ्फर नगर अम्बाला छावनी, आदि स्थानों में जैन भंडारों की सम्यक् शोध होने पर, यह बहुत सम्भव है कि इस दिशा में योग देने वाली कई गद्य की रचनाएँ उपलब्ध हों।

ऐतिहासिक गद्य साहित्य में पहली उपलब्ध कृति गुर्वावली है। रचना बीकानेर में सुरक्षित है। रचनाकार श्री जिनवर्द्धन हैं और रचनाकाल स० १४८० के लगभग। जिनवर्द्धन ने इसमें तपागच्छ के जैनाचार्यों की पट्ट नामावली महावीर स्वामी से सोमसुंदर सूरि तक दी है। इसमें विशेषता यह

१ प्राचीन गुजराती सदर्भ, पृष्ठ ६६ मुनिजिनविजय।
२ अभय जैन ग्रंथालय, बीकानेर स।
३ प्रति अभयजैन ग्रंथालय बीकानेर।

है कि इस [illegible] कवि ने [illegible] की भाँति [illegible] में [illegible] किया [illegible] है। पूरा [illegible] अनुप्रास युक्त है। [illegible] की [illegible] उसका धार्मिक तथा [illegible] में यह रचना [illegible] भाषा में [illegible] का [illegible] गीता [illegible] की [illegible] और [illegible] है। यह उदाहरण [illegible] है —

> बिन [illegible] माहि [illegible], बिन [illegible] न माहि [illegible]
> बिन [illegible] माहि [illegible], बिन [illegible] माहि [illegible]
> बिन [illegible] माहि [illegible], बिन [illegible] माहि गीता
> बिन [illegible] माहि [illegible], बिन [illegible] माहि [illegible]
> बिन रतन माहि चिन्तामणि, बिन आभरण माहि चूड़ामनि
> बिन [illegible] माहि [illegible] भूधर, बिन [illegible] माहि [illegible] त्रिपुर
> बिन [illegible] माहि [illegible], बिन मधुर [illegible] माहि अमर
> बिन [illegible], [illegible][1]

[illegible] का प्रतिनिधित्व करने वाली यह १४ [illegible] की [illegible] है। [illegible] है। [illegible] की [illegible] तथा [illegible] है। निम्नांकित उदाहरण [illegible] —

> [illegible]
> [illegible]

1 [illegible]

वस्तुतः इसी प्रकार की गद्य रचनाएँ गद्य साहित्य के विकास क्रम में नया मोड़ देने में सक्षम हैं।

(५) गद्य काव्य का उद्भावक एवं प्रेरक गद्य साहित्य

अभ्युदयकाल में गद्य काव्य की उद्भावक रचनाएँ मिलती हैं। इसलिए काव्यात्मक दृष्टि से अभ्युदय काल, आदिकालीन हिन्दी गद्य का स्वर्णकाल कहा जा सकता है। अब तक प्राप्त रचनाओं में तुक प्रधान गद्यात्मक रचनाएँ जिनका विवेचन पहले किया जा चुका है, तो कई मिलती हैं, परन्तु उनका काव्य की दृष्टि से महत्व साधारण ही कहा जायगा। या वैविध्य उनमें बहुत है तथा संख्या में भी वे अनेक हैं। गद्य काव्य का उद्भावक एवं प्रेरक गद्य साहित्य काव्य की दृष्टि से और भी अधिक महत्वपूर्ण है। अभ्युदय काल से पूर्व भी गद्यकाव्य भाँति सुषमा प्रस्तुत करने वाला गद्य कुछ अजैन रचनाओं में मिला है जिन पर विस्तार से आगे प्रकाश डाला जायगा। जैन रचनाओं में गद्य काव्य का उद्भव और विकास प्रस्तुत करने वाले तत्व अधिक मात्रा में परिलक्षित होते हैं, यद्यपि इनका काव्य अजैन रचनाओं से अधिक सम्पन्न नहीं कहा जा सकता परन्तु फिर भी जैन रचनाओं का ऐतिहासिक महत्व इस दृष्टि से अविस्मरणीय है।

यहाँ गद्य काव्य शब्द का अर्थ समझ लेना भी आवश्यक प्रतीत होता है। काव्य के दृश्य और श्रव्य दो प्रमुख प्रकार होते हैं, जिनमें दृश्य काव्य में नाटक और श्रव्य काव्य में गद्य पद्यात्मक तथा मिश्रित रचनाएं आती हैं। पद्य में जितने काव्य रचे गये हैं, उनमें अधिकांश छंद प्रधान होते हैं। पद्यात्मक विभाग के अन्तर्गत प्रबंध और मुक्तक होते हैं और प्रबंध के महाकाव्य, खंड काव्य तथा लघु काव्य भेद किये जा सकते हैं तथा मुक्तक के स्तोत्रस्तवन एवं सुभाषित होते हैं। पद्य काव्य की ही भाँति गद्य काव्य भी काव्य प्रधान होता है, पर उसको छन्द के बंधन में बाँधना अनिवार्य नहीं है। छन्द को छोड़कर शेष सब काव्य के गुण उसमें देखे जा सकते हैं। वामन ने गद्य के वृत्तगंधि, उत्कलिका और चूर्णक तीन प्रकार तथा साहित्य-दर्पणकार विश्वनाथ ने मुक्तक गद्य और कह कर चार भेद किए हैं। जिनमें पाद या पद के अंश जिस छन्द में मिलते हैं उसे वृत्तगंधि, लम्बे लम्बे समास प्रधान गद्य को उत्कलिका प्रायः छोटे छोटे समस्त पद को चूर्णक और समस्त पदों के अभाव वाले गद्य को मुक्तक नाम दिए गये हैं।

गद्य [illegible] कथा और आख्यायिका दो भेद किए गए हैं—[illegible] कादम्बरी को कथा और हर्षचरित को आख्यायिका के नाम से [illegible] किया गया है। चम्पू काव्य [illegible] है। चम्पू काव्य में [illegible] [illegible] और [illegible] हैं। [illegible] [illegible] काव्य का [illegible] काव्य [illegible] [illegible] और [illegible] प्रकार मिश्र काव्य का [illegible] है।[1]

[illegible] है कि गद्य और [illegible] [illegible] कहा मिला [illegible] कारणों को [illegible] करते हुए कहा जा सकता है कि पद्य [illegible] करने या कण्ठस्थ करने में सुगम होता है अत पद्य [illegible] है क्योंकि [illegible] जन साधारण में [illegible] और प्रचार रहता है। अत [illegible] [illegible] अधिक रहती [illegible] और [illegible] यही कारण है कि हमा[illegible] प्राचीन [illegible] और [illegible] द्वारा [illegible] [illegible] का [illegible]—[illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible]—[illegible] हुआ है [illegible] अधिक है। साथ ही [illegible] प्रकार [illegible] प्रधान [illegible] [illegible] [illegible] प्रधान [illegible] भी हो जाता है। यही कारण है कि हमारा अधिक[illegible] साहित्य [illegible] अधिक है। धीरे धीरे गद्य का [illegible] विकास हुआ। [illegible] [illegible] और [illegible] ग्रन्थों [illegible] गद्य के विकास [illegible] [illegible] योग [illegible]। [illegible] यह कहा जा सकता है कि [illegible] और भाषाओं ने [illegible] [illegible] [illegible] उतना गद्य [illegible] विकास [illegible] नहीं किया और यही कारण है [illegible] [illegible] भाषाओं में गद्य का [illegible] गद्य नहीं [illegible] बराबर [illegible] है। [illegible] में भी [illegible] [illegible] [illegible] कोई गद्य [illegible] [illegible] नहीं [illegible] नहीं [illegible] [illegible]। [illegible] और [illegible] [illegible] इस प्रकार का गद्य [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है [illegible] [illegible] गद्य साहित्य [illegible] [illegible] [illegible] गद्य [illegible] सकता है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] विचार किया जाय[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] गद्य का [illegible] है [illegible]

---

[1] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], पृ० [illegible]

अन्य प्रान्तीय भाषाओं में गद्य की ऐसी कृतियाँ अवश्य लिखी हुई होंगी, जो आज अनुपलब्ध हैं। कई विभाषाओं में तो सम्यक्‌शोध का अभाव भी इसका कारण हुआ है। जो भी हो यह स्पष्ट है कि आदिकाल की हिंदी गद्य-साहित्य परंपरा पर्याप्त प्राचीन है।

गद्य और गद्य काव्य में भी अंतर है। गद्य के सम्पन्न होने के पश्चात् ही गद्य काव्य का सृजन संभव है। गद्य काव्य रस पर्यात होता है। रसात्मक काव्य गुणोपेत विशिष्ट शब्द संचय रूप, पर छन्दों के बंधनों से रहित रचना गद्य काव्य के नाम से अभिहित है। साधारण गद्य को इसमें सम्मिलित नहीं किया जा सकता है। गद्य होते हुए भी जिसके पढ़ने और सुनने में पद्य का आनन्द या रस मिले, वही गद्य काव्य है।[1]

अतः गद्य काव्य में पद्य का आनन्द अनुभूत कराने की शक्ति होती है। इसमें छन्दोनुबंध अनावश्यक होता है और सरसता एवं रस विद्यमान रहता है। अतः यहाँ इसी गद्य काव्य की परम्परा के इतिहास पर संक्षेप में विचार किया जा रहा है।

जिस तरह गद्य का विकास पद्य के साथ ही साथ हुआ प्रतीत होता है ठीक वैसे ही गद्य काव्य का विकास भी पद्य काव्य के साथ ही साथ हुआ होगा। गद्य काव्य की प्राचीनता भी पद्य की प्राचीनता की भाँति ही पुरातन कही जायगी। वेदों में कहीं कहीं जो सरस वाणी मिलती है उसमें वाक्य एवं पद रागात्मक और रस पैदा, पद्य की अनुभूति कराने वाले मिलते हैं। वेदों के पश्चात् महाभारत में भी गद्य काव्य को विकास मिला ऐसा प्रतीत होता है। महाभारत के पश्चात जैन आगमों में गद्य काव्य के व्यवस्थित उदाहरण मिलने लगते हैं और इसके पश्चात नाटकों को लिया जा सकता है। नाटकों के गद्य ने भी गद्य काव्य के उत्थान में पूरी सहायता की है। भास, कालिदास, भवभूति आदि के नाटकों के सुंदर गद्यांशों में सुंदर गद्य काव्य के दर्शन होते हैं। संस्कृत ग्रंथों में दण्डी का दशकुमार चरित, जो ईसा की छठी शताब्दी के आस पास में रचा गया है, गद्य काव्य की उत्कृष्ट रचना है। सुबंधु की वासवदत्ता को भी नहीं भुलाया जा सकता। इस रचना का प्रत्येक शब्द ही सरस तथा रचना में श्लेष का बेजोड़ निर्वाह है। वासवदत्ता के पश्चात गद्य काव्य के महान प्रणेता बाणभट्ट हैं, जिनके प्रसिद्ध ग्रंथ कादम्बरी और हर्ष चरित हैं। कादम्बरी सुंदर सरस और उत्कृष्ट रचना है,

१ देखिए—राजस्थानी गद्य काव्य परंपरा शीर्षक श्री अगरचन्द नाहटा का लेख

[illegible] हुए [illegible] आता है। [illegible] मधुर [illegible] की [illegible] गद्य काव्य [illegible] प्रेरणा सी और [illegible] हुआ कि [illegible] गद्य [illegible] धनपाल की तिलकमञ्जरी लिखी गई। तिलकमंजरी कादम्बरी [illegible] गद्य काव्य [illegible] है और [illegible] किसी भी साहित्य की [illegible] अनूठा [illegible] है। [illegible] गद्य [illegible] की अनूठी रचना [illegible] किया।[1] गद्य काव्य [illegible] गद्य [illegible] में धनपाल की तिलक मंजरी [illegible] है। मुनि [illegible] धनपाल के [illegible] साहित्य के [illegible] की [illegible] तुलना [illegible] कोई [illegible] प्रेरणा [illegible] तिलक मंजरी [illegible] कहा जा सकता है कि यदि धनपाल [illegible] हुई न होती तो [illegible] हुई [illegible]। [illegible] है। धनपाल [illegible] है। [illegible] में [illegible] है।[2] तिलक मंजरी [illegible] गद्य काव्य [illegible] में [illegible] किया। [illegible] ६०० [illegible] में गद्य [illegible] की [illegible] है। [illegible] है। [illegible] है।

[illegible] है। [illegible] है। [illegible]

[1] [illegible] १४२, पृष्ठ ३३०।
[2] [illegible] पृ [illegible]
[3] वही।

है, जिसे गद्य काव्य का पूर्वार्द्ध कहा जा सकता है।[1] अपभ्रंश में तो गद्य का स्वरूप मिलता ही है। इन प्राचीन ग्रंथो गद्य जिन जिन रूपो मे जैसा भी सुरक्षित मिलता है, उनके उद्धरण गद्य रचनाओं के इसी अध्याय में परंपरा के रूप में दिये गये है इन ग्रंथो में सबसे प्रमुख ग्रंथ कुवलयमाला के कथानक, प्रबंधचिंतामणि के भाषा कथानक तथा उक्ति व्यक्ति प्रकरण में उद्धृत गद्यांश है। अपभ्रंश में सुंदर गद्य काव्य की अलग से कोई रचना अभी तक उपलब्ध नहीं होती पर भंडारो की शोध होने पर इस प्रकार की गद्य काव्यात्मक कई कृतियों के मिलने की आशा है क्योंकि यह कहना एकदम बहुत कठिन होगा कि अपभ्रंश जैसी सम्पन्न भाषा के पास, जिसने इतने उत्कृष्ट महाकाव्य साहित्य को दिए है, गद्य काव्य का अभाव है।

अपभ्रंश के उत्तर काल में गद्य काव्य की रचनाएं मिलने लगती है। प्राचीन राजस्थानी तथा जूनी गुजराती में गद्य काव्य के सुंदर नमूने उपलब्ध हुए हैं। १० वी शताब्दी का बम्बई के प्रिंस आफ वेल्स संग्रहालय में स्थित शिलालेख[2] में राउल के नखशिख वर्णन में कवि ने उत्कृष्ट मौलिक उपमानों से युक्त सुंदर गद्य काव्य लिखा है। अद्यावधि आदिकालीन हिन्दी गद्य काव्य मूलक रचनाओं में सबसे अधिक प्राचीन यही रचना है जिसका रचना काल या लेखन काल १० वी शताब्दी का है। यह शिलालेख जैनेतर कवि का है और गद्य काव्य की परम्परा का प्रारंभ करने वाली सबसे प्राचीन आदिकालीन रचना होने के कारण गद्य काव्य के उद्गम के रूप में तथा पृष्ठ भूमि के रूप में इस पर आगे जैनेतर (लौकिक) गद्यसाहित्य के प्रसंग में प्रकाश डाला जायगा। साथ ही मैथिली की ठाकुर ज्योतिरीश्वर की रचना वर्णरत्नाकर—के गद्य काव्य का परिचय भी विविध उद्धरणो द्वारा दिया गया है, जो बहुत संभव है, गद्य काव्य की परम्परा के उद्भव और विकास को समझाने में सहायता करेगा। हिन्दी की प्रादेशिक भाषाओं, लोक प्रचलित परम्पराओं और मौखिक या अलिखित साहित्य में इस प्रकार की अनेक रचनाएं अभी छिपी पड़ी होंगी जो संभवतः धीरे धीरे प्रकाश में आयें। मैथिली की ही भाँति मालवी की अवधी ब्रज मगही, भोजपुरी, बुंदेलखण्डी आदि बोलियों में भी संभवत गद्य काव्य की ओर भी रचनाएं प्राप्त हो पर इस समय तक हिन्दी की इन प्रादेशिक विभाषाओं में प्राचीन राजस्थानी

१ वही, लेख वही पृ०।

२ लेखक द्वारा आदिकाल पर की गई शोध में उपलब्ध रचना, सन् १९४७ ४८ (डॉ० मोतीचंद्र द्वारा साभार उपलब्ध)

या जूना गुजराती की कृतियों ने पर्याप्त भाग दिया है और वे रचनाएं प्रकाशित होने के साथ साथ प्रामाणिक एवं विश्वसनीय हस्तलिखित प्रतियों के रूप में भी इस समय उपलब्ध हैं।

[२] साहित्य में गद्य काव्य की परम्परा प्राचीन नहीं प्रतीत होती। इसकी गद्य काव्यात्मक प्रवृत्ति का समर्थन करने वाले कुछ प्रारम्भिक [illegible] में [illegible] काव्यात्मक रूप [illegible] है। हिन्दी में [illegible] गद्य की रचना तो विद्वानों ने १७वीं शताब्दी के प्रारम्भ में मानी है। गोरखनाथ की कुछ रचनाओं का गद्य में होना मिलता है तथा उनका काल १३ वीं से १५ वीं शताब्दी तक बताया गया है, पर गोरखनाथ की कृतियों की हस्तलिखित प्रतियां १८ वीं सदी के पहले की उपलब्ध नहीं हैं। अतः यह स्थिति प्रामाणिक नहीं कही जा सकती। [illegible] नाथ की प्राप्त सामग्री के आधार पर वल्लभ सम्प्रदाय के ब्रज भाषा वार्ताओं को ही हिन्दी का प्राचीन गद्य रूप माना जाता रहा है परन्तु इस तथ्य का परिहार भी [illegible] कथाओं में वर्णित हमारा [illegible] हिन्दी गद्य साहित्य की परम्परा एवं [illegible] प्राचीन रचनाओं द्वारा हो जाता है। [illegible] [illegible] के [illegible] गद्य का [illegible] [illegible] तो [illegible] नहीं होगी तथा हिन्दी में गद्य की परम्परा १० वीं [illegible] मानी जा सकेगी। हिन्दी साहित्य में १७ वीं [illegible] में [illegible] [illegible] की [illegible] (सं० १६११) गद्य [illegible] की उल्लेखनीय रचना है [illegible] बीकानेर का [illegible] [illegible] में सुरक्षित है।[1]

अस्तु—हिन्दी का प्रारम्भिक [illegible] में [illegible] राजस्थानी [illegible] गुजराती की हिन्दी की [illegible] रचनाओं ने गद्य [illegible] के सृजन में महत्वपूर्ण योग दिया है। राजस्थानी में गद्य का [illegible] रूप में [illegible] है —

(१) ख्यात और

(२) वचनिका—

इन दोनों के दो-दो भेद हैं —

(१) [illegible]

(२) [illegible]

और वचनिका के

(१) पद्य बद्ध

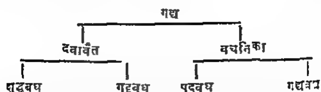
(२) गद्य बद्ध

---

[1] [illegible]

[illegible]

इनका रेखाचित्र इस प्रकार है —



वचनिका व दवावैत के शिल्प पर आलोचकों ने पर्याप्त प्रकाश डाला है। दवावैत कोई छन्द नही है, जिसमे मात्राओ, वर्णो तथा गुणो का विचार हो। यह अन्त्यानुप्रास युक्त गद्य-जाल है। अन्त्यानुप्रास मध्यानुप्रास और किसी प्रकार सानुप्रास या यमक सहित गद्य का प्रकार है। यह सस्कृत, प्राकृत, फारसी उर्दू और हिन्दी भाषा मे भी अनेक कवियो और ग्रथकारो द्वारा प्रयोग मे लाया हुआ मिलता है। लल्लूजी लाल के प्रेम सागर, उर्दू तथा फारसी के बहार अखिजा, नौवतन आदि ग्रथो मे देखा जाता है। यह दवावत दो प्रकार की होती है एक शुद्ध बध अर्थात पदबध, जिसमे अनुप्रास मिलाया जाता है और दूसरी गद्‌बध, जिसमे अनुप्रास नही मिलते हैं।[2]

---

१ देखिए कल्पना, मार्च १६८३ पृ० २१२

२ पद बध का उदाहरण —

(१) प्रथम ही अयोध्यानगर जिसका बणाव
बारे जोजन तो चौडे सोल जीवन की याव
चौतरफ क फनाव, चौमठ जोजन के शिराव
निसके तले सरिता सरिजू के घाट
अत उतानन सूँ वहै, चौसर कोसो के पाट ॥

गद्य बध का उदाहरण —

हाथियो क हलके खभू गगाते खोने अरावत पै साथी भद्रजाती के टोले।
अत देहु क दिग्गज विध्याचल क सुजाव, रग रग चित्रे सु डा डडके बणाव।
सून की जलूस बोर घटू के ठगके वादलो की जगमग मेरे गौरो की अकी भण के।
कमन कदमू के नार भारी कनक की हुम जवाहर के जेहर दीपमाला का रूस।

इसी प्रकार राजस्थानी के गद्य साहित्य के दूसरा प्रकार वचनिका है जिसका अध्ययन किया जा सकता है।[1] इन रचनाओं के हिन्दी व संस्कृत और राजस्थानी के गद्य ... का अन्तर स्पष्ट हो जाता है। राजस्थानी के इस गद्य ... का रूप ही वस्तुतः ... प्रकार किया गया है। वचनिका हिन्दी में विवेचनात्मक टीका की कही है, जब कि राजस्थानी में यह गद्य साहित्य का स्वतन्त्र तुकान्त प्रकार की रचना के लिए आता है। राजस्थानी भाषा में भी गद्य साहित्य ... में किसी ... और वचनिका संज्ञक रचनाएँ यथा—(१) जिनलाभ सूरि दवावैत

---

१ वचनिका के दो प्रकार —

दोय भेद वचनका रा, एक पद बंध दूजो गद्य बंध, सुपद बंध होय। भेद। एक तो वारता, दूजी वारता न साहुरा राखणा। दोय गद्य बंध वचनका है एक ना आठ मात्रा गो पद हुवै दूजी गद्य बंध बीस मात्रारो पद हुवै।

टीकाकार महताब चन्द खारेड़ ने इसके विशेष विवरण में लिखा है कि ये वचनिकायें दवावैत की ही भेद मालूम होती है। इनको देखने से मालूम होता है कि वचनिका कुछ नरमी और विस्तार होती है और गद्य बंध में तो कई छन्दों के जोड़ अर्थात् सम वचनिका ... में जुड़ते चले जाते हैं।

पद बंध का उदाहरण देखिये —

जिन सभा में श्रीगुरु राजी निरखतो ताराहार आगी।
आगा गाराही जाण पाट ... तारा ... ।।

गद्य बंध वचनिका —

(१) धर्म विचार ... विचार ... गुण ...
... गुणेश ...
... गुण ... और ... गुणे ...
... अखण्ड पार ... ...

गद्य बंध वचनिका के दूसरे भेद का विवरण ... —
रघुनाथ ... ... —भाग ... पृ० ... में
श्री नाहटाजी का लेख।

(२) ... जो ...
... ...

(२) नरसिंहदास गौड री दवावैत (३) अचलदास खीची की वचनिका (४) रतनमहेश दासोत्तरी वचनिका आदि मिलती हैं। राजस्थानी गद्य काव्य को कहीं कहीं वार्ता या वार्तिक नाम से अभिहित भी किया गया है। कई रचनाएँ देवी देवताओं के गुण वर्णन अर्थात सलोका नाम से भी मिलती हैं। वार्तिक के रूप में सिसर वंशोत्पत्ति का य प्रकाशित है।[3] केहर प्रकाश ग्रंथ में तुकान्त गद्य को वार्ता कहा गया है।[4]

अस्तु—राजस्थानी के इन गद्य काव्यों की परंपरा दवावत और वचनिका के रूप में २० वीं शताब्दी तक पाई जाती है, जिनमें प्रमुख ग्रंथ १६ वीं शताब्दी का जैसलमेर से प्राप्त मुत्कलानुप्रास तथा १७वीं शताब्दी की अनूप संस्कृत लाइब्रेरी में प्राप्त कुतुबुद्दीन साहिजादे री वारता, १८ वीं शताब्दी की नरसिंह दास गौड की दवावैत तथा सं० १७७२ की जिनसुखसूरि दवावत, १८ वीं शताब्दी अथात सं० १७८८ का रतनुवीर भाणकृत राजरूपक (प्रकाशित), १९वीं शताब्दी के प्रारम्भ में वाचक विनयभक्ति विरचित जिन लाभसूरि दवावत तथा २० वीं शताब्दी का (सं० १९२६ का) कविया गोपाल द्वारा विरचित सिखर वंशोत्पत्ति ऐतिहासिक गद्य काव्य, जिसका दूसरा नाम पीढीवार्तिक है, इस प्रकार राजस्थानी की गद्य काव्य परम्परा अद्यावधि सुरक्षित है। हिंदी में भी २० वीं शताब्दी में रायकृष्णदास की साधना गद्य काव्य की उत्कृष्ट रचना कही जा सकती है। वचनिका शैली में ही आदिकाल का हिंदी जैन गद्य काव्य लिखा गया है इसीलिए उक्त विवेचन में गद्य काव्य की इन राजस्थानी शैलियों का परिचय दिया गया है।

अस्तु—आदिकाल के हिंदी जैन साहित्य में गद्य काव्य का सर्व प्रथम और सर्वोत्कृष्ट रचनाओं का यहाँ अध्ययन प्रस्तुत करना गद्य काव्य के शिल्प भाषा वर्णन आदि सभी दृष्टियों से महत्वपूर्ण प्रतीत होता है।[5]

---

१ रतनमहेश दासोतरी वचनिका। सम्पादक डॉ० एल० पी० टस्सीटोरी प्रकाशित रॉयल एशियाटिक सोसाइटी बंगाल। अभय जैन ग्रंथालय में रचना की प्रकाशित प्रति सुरक्षित है।

२ कल्पना, मार्च १९५३, पृ० २१२

३ कल्पना, मार्च १९५३, पृ० २१२

४ कल्पना मार्च १९५३, पृ० २१२

५ देखिए—प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह सं० श्री सी डी दलाल, पृ० १३—१३०

पृथ्वीचन्द्र चरित

इस काव्य के स्वरूप को पुष्ट करने वाली रचनाओं में पृथ्वीचन्द्र चरित सर्वोत्कृष्ट रचना है। इस रचना का दूसरा नाम लेखक ने वाग्विलास भी दिया है। यदि रचनाकार के शब्द कौशल प्रतिभा तथा वर्णन चमत्कार को देखा जाय, तो पृथ्वीचन्द्र चरित लेखक का विलक्षण वाणी विलास ही लगता है। कवि ने पूरी रचना में एक सुन्दर प्रेम कथा का वर्णन किया है। इस कृति का कथा प्रेमाख्यान मूलक है। कवि ने प्रेम कथा को माध्यम बनाकर अपनी बहुमुखी प्रतिभा का सुन्दर परिचय दिया है। कथानक के नायक पृथ्वी चन्द्र और रत्नमंजरी हैं।

पृथ्वीचन्द्र चरित के लेखक आचार्य श्री माणिक्य सुन्दर सूरि हैं। १५वीं शताब्दी के प्रसिद्ध महाकवि जयशेखर सूरि के ये शिष्य थे। माणिक्य सुन्दर सूरि अंचलगच्छ के थे तथा इनके गुरु का नाम धर्मसेन मेरुतुंग था। माणिक्य सुन्दर ने मूलतः कवि हृदय पाया था। सूरिजी का आविर्भाव अभी तक अज्ञात ही रहा है। कृति में कहीं भी माणिक्य सुन्दर सूरि ने अपना निजी कुछ नहीं कहा है। अतः रचनाकार के समय, स्थान और जन्म का कोई प्रामाणिक उल्लेख नहीं होता। सहायक ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि माणिक्य सुन्दर सूरि ने गुणवर्मा चरित, मलयसुन्दरी कथा, संविभाग व्रत कथा, चतुःपर्वी कथा तथा पृथ्वीचन्द्र चरित आदि कई ग्रन्थों की रचना की थी।

आलोच्य रचना पृथ्वीचन्द्र चरित गद्य की ऐसी रचना है जिसमें लेखक का शब्दानुरूप वाग्विलास है। यह रचना बहुत पहले प्रकाशित हो चुकी थी। प्रसिद्ध गुजराती विद्वान् श्री सी०डी०दलाल ने इसका सम्पादन किया था। इस ग्रन्थ गाथा को कवि ने विभिन्न प्रस्तावों में उल्लिखित कर दिया है। कथा का विस्तार न होकर रचना में वर्णन का विस्तार ही अधिक है। प्रत्येक प्रस्ताव में परिवर्तन यही हो अधिक [illegible] है।

रचना की कथा संक्षेप में इस प्रकार —

पृथ्वीचन्द्र महाराज के पूर्वभव के जीव थे। अयोध्या के राजा सोमदेव और उनकी रानी (रत्नमंजरी)। रत्नमंजरी अनुपम सौन्दर्यमयी थी। एक बार देवताओं की स्तुति के प्रसंग में पृथ्वीचन्द्र का वर्णन आता है और [illegible] [illegible] को प्राप्त करने की भावना से विह्वल हो जाता है। इधर रत्नमंजरी

स्वयबर आयोजित होता ह। पृथ्वीचद्र को इसकी सूचना मिलते ही एक विशाल सेना साथ म लकर रत्नमजरी को वरण करने की कामना से वहाँ पहुँचता ह। उसका प्रेम रत्नमजरी को भी पिघला देता ह। पृथ्वीचद्र की कीर्ति, शक्ति से परिचित होकर वह भी उसे प्राप्त करना चाहती है। परन्तु बीच म अनेक व्यवधान उठ खड़े होते हैं। वैताल अपनी माया फैला देता है और रत्नमजरी को उठा ले जाता ह परन्तु पृथ्वीचद्र के प्रति उसका प्रेम दृढ़ होता है। इधर पृथ्वीचद्र भी देवी की आराधना करता है और देवी प्रसन्न होकर उसे रत्नमजरी को प्राप्त कराने म पूरी सहायता करती है। अन्त में दोनो को एक दूसरे की प्राप्ति होकर पाणिग्रहण का आनन्द प्राप्त होता ह।

कथा इतनी ही ह, परन्तु कवि ने इस छोटी सी प्रणय गाथा को विविध वणनो म सजोया है। वणन के इस स्थूल रूप म उलझ कर लेखक ने कहीं कहीं रचना का अथ गौरव शिथिल भी कर दिया ह। कहीं कहीं नाम परिगणन म झूम कर कृति की कथा वस्तु सुस्ताने सी लगती है और कथा का सारा ढाँचा ही लडखडाने लगता है। कहीं कहीं लेखक के वणन बड ही भावुकता पूण और सरस बन पड हैं।

पूरी रचना को कवि ने पाँच उल्लासो मे विभक्त किया ह और प्रत्येक उल्लास विविध वणनो द्वारा सवारा गया है। शब्द चयन अनुप्रासात्मक हैं, रचना का गुण उसक तुकान्त होने म का यात्मक होने तथा शब्द विन्यास के नादात्मक होने है। शब्दो की ध्वन्यात्मकता एक अनूठ अनुरणन का उन्मेष करती है। वणनो के अन्तराल म, जहाँ कवि का मन खूब रमा है वहीं उसकी काव्यात्मकता ने अभूतपूव सफलता प्राप्त की है उपमाओं और उत्प्रेक्षाओ की ऐसी सुन्दर मालाएँ अन्यत्र मिलना कठिन है। कवि ने कथा के माध्यम स वणन चमत्कार दिखाया है।

रचना का प्रारम्भ ही जन भारती स वाग्विलास की याचना द्वारा किया गया है।[१] कृति का रचनाकार मूलत कवि था, अत उसके गद्यकार पर कवि की विजय स्पष्ट दिखाई पड़ती है। वणन का सामथ्य देखिए—पुण्य की महत्ता का कितना उत्कृष्ट चित्र खींचा है -

> पुण्य लगइ पृथ्वी पीठि प्रसिद्ध पुण्यलाणइ मन वाछित सिद्धि, पुण्य लगइ निमल बुद्धि, पुण्यलगइ घर ऋधिवृद्धि, पुण्य लगइ शरीर नीरोग,

१ या विश्व म प मनो वल्लीलया कल्पित प्रदा
प्रदता वाग्विलास मे सानिरय जैन भारती—प्रा०गू० का० स०
पृ० ९३

पुण्य लगइ अमृत रसाल, पुण्यलगइ मुट्ठ परिवार तणा सुगाल पुण्य लगइ पतालीवइ तुरंग पुण्यलगइ नव नवारंग पुण्यलगइ मनिमय पटा, चारता दीगइ बदल छगा, पुण्य लगइ निरुपम रूप, अमृत स्वरूप, पुण्य लगइ वनिता प्रधान आवास, सुरंग रूप तणा लाग, पुण्य मा पीठवी आण, पुण्यलगइ धामरदायिनी मुक्ति, रूपमुण रहि पुण्य लगई घणा आहार, सद्गुण शृंगार, पुण्य लगइ स्वजन बहुमान, पुण् किलु कहीयइ पामीयइ केवल ज्ञान।[1]

रचनाकार ने अनेक वर्णनों द्वारा अपने बहुमुखी ज्ञान का परिचय दिया है। राज्य, राजा, रानी, शालद्वीप, भोजन, नगर, सभा, वसंत, शिशिर, सात वाय, युद्ध व्यापार, चपोल प्रकार देश नगर सभा प्रजा, नायिका नायक, स्वप्न, संयोग, ऋतु प्रकृति सुदर्श, आन द हाथी घोड़ा, नगर तथा शृंगार आदि के विविध काव्यात्मक और परिगणनात्मक अनुप्रासात्मक वर्णन है पृथ्वीचंद्र चरित्र माणिक्य के वर्णरत्नाकर से पर्याप्त साम्य रखती है। नीचे तुलनात्मक दृष्टि कुछ वर्णन दिए जा रहे हैं उनके आधार पर प्रस्तुत रच नागर क भावक सौष्ठव, शब्द गांभीर्य और पाण्डित्य का सहज अनुमान लगाया जा सकता।

मरहट्ठ देश का वर्णन —

तोह माहि मनोहर मरहट्ठ देश। जाणइ दमि नाम क वर अविरल भरा नगर, जिहां न जाणीइ गर। पुर, जिहां दुर्ग स्थान, धान्य, न सीयइ गामा, आगर, सुसाध्य तथा धर्म जह प्रणमाहि गा बहइ लोक सुखइ निवइई। धनि वन पुण्य तणा निवेश न स्वकर ग्राम। सीमि भेलि गुणानुग वास वस इ जिहां अनाद न मनइ।[2]

राजा एवं राज सभा का वर्णन

राजा किसा छइ। जीणि राज्यनी पुण्य शोभि धन धारा छइ। विविध गुणरत्नी वसुन्धरा छइ धर तणा धीर धारिणी छइ। कृष्ण पक्ष वाविद्या धरित्र न नरइ छइ, न ना तणी निति मरहट्ट छइ, नइ धन सदिना छइ, वहिन स ग न न नार पृथुक पुण्य समान गुणवान जिसि राजा कहइ। जिन

---

1 पृथ्वीचन्द्र चरित्र प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह, पृ० ८३

2 वही, पृष्ठ ८४

राजा दीसइ छइ, मस्तकि श्वेत आतपत्र छइ, पासइ ढलइ चामर पवित्र वाजइ विचित्र वादित्र, मस्तगि मुगट, कानि कुण्डल हृदयि हाराद्ध हार, महाउदार धनदतणउ अवतार, रूपतणु भण्डार। घणउ किसिउ कहीयइ। जिसउ पथ्वी लोकतणउ इन्द्र जिसउ सोलकला सपूर्ण चन्द्र इसउ दीसइ छइ पृथ्वीचन्द्र नरेंद्र।[1]

वर्णन की धारावाहिकता शब्दों का प्रवाह तथा अभिव्यक्ति की चित्रात्मकता स्पष्ट परिलक्षित होती है। इसी की तुलना में नाम परिगणन शैली में लिखा तत्कालीन वर्ण रत्नाकर ग्रंथ का देखें वर्णन देखा जा सकता है।

कइ सतु दपु। नागल, तोंगल, तापसि सेंलि तांति तिवर तुरिआ तुलुर तुरुकटाल्ल घेओल धागल धाकल धानुक धोआर धुनिआ धलिकार डोंव डोवटाल्ल लागि पगार हाडि डाढि भल भण्डार चमार गोष्ठि गोंति गोआर—।[2]

वस्तुत इन ग्रंथों की शैली तथा वर्णन परम्पराओं में पर्याप्त साम्य परिलक्षित होता है। प्रकृति वर्णन में भी दोनों ही रचनाकारों ने नाम परिगणन शैली का अधिक आश्रय लिया है। कवि ने वर्षाकाल का प्रारंभ ही राजकुमारी रत्नमंजरी के यौवन की भांति किया है —

हिव ते कुमारि चडी यौवनि भरि, पखिरी परिकरि क्रीडा करइ नव नवी परि। इसिइ आवसरि आविउ आषाढ—विस्तरिउ वर्षाकाल, जे पथी तणउ काल, नाठउ दुकाल। जीणिइ वर्षाकालि मधुर ध्वनि मेह गाजइ दुर्भिक्ष तणा भय भाजइ, जाणे सुभिक्ष भूपति आवता जयढक्का वाजइ चहुँ दिसि बीज झलहलइ पथी घरमणी मुलइ, विपरीत आकाश, चद्र सूर्य परियास, राति अंधारी लवइ तिमिरा उत्तरनउ ऊमयण, छायउ गयण, दिसि घोर, नाचइ मोर सधर वरसइ काराधर, पाणीतणा प्रवाह पलहलइ वाडि ऊपरि वेलावलइ—पवत तउ नीझरण विछूटई भरियाँ सरोवर फूटइ।[3]

अब वर्ण रत्नाकर का भी वर्षा वर्णन देखिए —

मघव गर्ज, आकाशक मेचकता, विद्युल्लताक तरंग, कदम्ब सौरभ

---

१ पृथ्वीचंद्र चरित्र प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह, पृष्ठ ९७
२ वर्णरत्नाकर सुनीतिकुमार चटर्जी द्वारा सम्पादित—पृ० १ प्रथम कल्लोल
३ प्रा० गु० का० स० पृ० १००, द्वितीयोल्लास

विषयक प्रकार दहरक कोलाहल, धाराक प्रवाह, मादिमक गु दुगा परीक्षेक मोहिम्य, मधु मय मन्तार, औषधीक उत्सव, नदीक मर्यादि विरहीक उत्कण्ठा, दानीक पुनुम्भलिता, पथिकक, दु प्रकार अगण्य लोक वैदेशिक विनम्र, कान्तक प्रेमाधिक, पुत्रीक छोहू एवम्बिध गमनगुण सम्पूर्ण वर्षा देव ।[1]

बाद के इस काल में वर्णन का प्रवाह भी आगे बढ़ता रहता है । कथा की धारावाहिकता देखिए

लिलित रत्नमञ्जरी कु अनि राजा रहइ बालगी करावा निहा तुष्टि आइला अ थी । जेहु तात परिवारि पी मनक प्रकारि कस्तूरिका कस्तूरिका, लीलावती पद्मावती चन्द्रावती—अनक दासी पत इ । तोह महीत सिहो मानो विचारइ प्राम नारवाला उत्पत्ति करी दिवस कप अनो राजपुत्र मनि चिन्ता पड़ली । एह माप्य कथन कर, दिनर, कि विचार ईलीउ चोतपद नरश्वर नरावर मणी नष्ट दीधी ।[2]

\+ + +

इसी वार्ता गामनी हुत हुइ बहुमान अनु चन्द्र लइ राजा परीक्षक हृदयर मनो चालित, मदन अरि धाताहि रुप नाम हानित ।[3]

\+ + +

हिव गमकेतु राजा न वार्ता सामना मनि वैराग्य पामिउ, राजा परीक्षक प्रसिद्ध शिक्ष मानित । मनइ इमा ताण कता नायक पुत्र कल्याण गहा । गुरहिह मोह महुल वेषा मनिश्च धरइ, गह विप्र हुइ ।[4]

\+ + +

शिवारइ करता बड राजा तान कहि करवाना रहो, अनाइ पुनरपि राजा हुआ राज पढा, र मैं हुउ विस्तार, पुनरपि परता चन्द्र देव शरीरइ कर्म उ करणाय ।[5]

---

१ धारासागर गुलीनिकुमार चटर्जी सम्पादित पृ० १८ प्रमुख सम्बन्ध ।
२ प्रा० गु० का० स० पृ० १००
३ वही, पृ० १०३
४ वही पृष्ठ १०८ गुरीय ग्न्वा.न
५ प्रा० गु० का० स० पृ० ३१४ पाटू उ नाम ।

पाचों उल्लासों के वर्णन उल्लास प्रधान हैं। प्रकृति का परिगणनात्मक स्वरूप वर्णन देखिए —

> जह अटवी माहि तमाल, ताल हृताल, मालूर खजूर, अर्जुन चंदन चंपक बकुल। विचित्रित सहकार कांचनार जांबू जंबीर वानीर मणवीर मौर केति मदन निंब नारिंग नालीयरि द्राख दाडिमी देवदारु अकुंन वकिटिल नाग पुंनागवल्ली यूथिका मालती माधवी जपा मरुवक दमनक पारधि केतकी मुचकुंद कुंद मंदार तगर सेवत्री राजगिरि।[1]

प्रकृति वर्णन के इस स्थूल स्वरूप में रचनाकार का काव्यात्मक वसन्त वर्णन दृष्टव्य है जहां उस पूरी प्रकृति हसती खिलती दिखाई पड़ती है। वसन्त में प्रकृति का सारा वातावरण ही राग की इन्द्र धनुषी कल्पनाओं में डूब जाता है। रचनाकार के काव्य कौशल का निखार देखिए —

> निसिइ आविउ वसंत, हूउ शीततणउ अंत, दक्षिण दिसितणउ शीतल वाउ वाइ विहसइ वणराइ। —-मउरिया सहकार, चंपक उदार, वउल बकुल भ्रमर कुल संकुल, कलरव करइ कोकिल सणाकुल। प्रवरप्रियंगु पाडल, निमल जल विकसित कमल, राता पलास सव शीवास कुंद मुचकुंद महमहइ, नाग पुन्नाग गहगहइ। नारसारंगी श्रेणी, दिसि वासीइ कुसुम रेणि, लोकतणे हाथि वीणा, यम्पाउ वर पीणा धवल श्रृंगार सार, मुक्ताफल तणाहार, सर्वांग सुन्दर का माहि रमइ भोग पुरन्दर। एकि गीत गवारइ दान दिवारइ विचित्र वादित्र वाजइ, रमलि तृणा रंग छाजइ एकि वाल्हि फल चूटइ वगतणा पल्लव चूटइ हीडोलइ हींचइ छातला वाल्हि ह जलिइ सींचइ, केलिहरा कउ तिण जो भइ प्रीतमत होइ।[2]

रचनाकार ने वर्णन में आलंकारिकता की मालाएँ पिरोदी हैं। अत्यानुप्रास तथा वर्णन की प्रवाहात्मकता तथा विविध उदाहरणों ने रचना की सुन्दरता में पर्याप्त योग दिया है। एक उदाहरण एतदर्थ पर्याप्त होगा —

> साभनउ वातो वर्णवाइ जे वक्ष पवत, नदी त अ नीरवत कटक ते न वीरवत, सरोवर त जे कमल वन मंत्र त जे समायत, महात्मा ते

---

१ वही, पृष्ठ १०४
२ वही, पृष्ठ १०२

ज समावन प्रासाद ते जे ध्वजावन, वाट त ज गूपवत, हाट ते ज वस्तुवत, पा त ज गुणवन, बाट त ज वणावन, मठ त जे मुनिवत, लहर ज प्रमाण वन, देव त ज अरावयन, गुरु त जे विद्यावत यमन त जे मानवन, [illegible] ते जे विनयवन, मनुष्य ते ज धमवन, तुरगम ते ज तजवत, हस्ती ते जे मदजाति वन प्रधान तेजे बुद्धिवन [illegible] त ज पादवन, राय त ज न्यायवत, व्यवहारीया त ज मदावन, धर्मी त जे दयावत ।[1]

इस प्रवाह म वचनिका शैली का सफल निर्वाह परिलक्षित होता है । [illegible] चरित को सभी समान पड़ता है । ऐसा प्रतीत होता है, मानों समाचार के ढ़ढ़ [illegible] ठूस ठूस कर भरे हों । शब्दों के विचार को वह [illegible] प्रवाह के लिए अवसर मात्र चाहिए । समास प्रधान अभिव्यक्ति का एक उदाहरण देखिए —

तउ गौडउ वयन । [illegible] वयम-विषम धारा परपयम, विकसित कास कुसुम समुज्ज्वल [illegible], [illegible] दरिविन्द, मू म मुकुमाल [illegible] विराजमान [illegible] देदीप्यमान, प्रमग [illegible] विशुद्ध [illegible] प्रदेश, [illegible] सनिवेश । —[illegible] अद्भुत प्रभाकर [illegible], मुकुमार [illegible], [illegible] इत्यादि [illegible] [illegible] प्रकार । [illegible] शरीरवित, [illegible] सकल, [illegible] —[illegible] ।[2]

[illegible] म कवि की उत्प्रेक्षालि अनुपम [illegible] तथा विवेक [illegible] हुई है । [illegible] का [illegible] म विद्यमान होना कवि की [illegible] विविध उदाहरणों का [illegible] करता है । [illegible] की [illegible] है —

[illegible]

१ प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह, पृष्ठ १०६
२ वही, पृष्ठ ११६

रहितु भिगु, वेग रहित तुरगम, प्रेमरहित सगम—रस्त्र रहित शृ गार, सुवर्ण रहित अलकार,—चरण रहित बाल, राज्य रहित भूपाल, स्तभ रहित प्रासाद, दान रहित मान, मुष्टि रहित कृपाण। जिम पाणी सरोवर, तिम रत्नमणरी पापइ ते न शोभइ लोक तणउ व्यतिकार, ते सभा, हुई निष्प्रभा।[१]

इस तरह रचनाकार ने शस्त्र अस्त्र, राजनीति, युद्ध, शृ गार, वीर, सौंदर्य रत्न, स्वप्न आदि के विविध वर्णन किए हैं। वर्णनों की अधिकता तथा अनावश्यक विस्तार से कहीं कहीं तो पाठक का मन उचटने तथा ऊबने लगता है, पर श्री सूरिजी ने परपरागत शैली का पूरा निर्वाह किया है। कवि का बहुवद् होना उसकी प्रखर प्रतिभा का परिचायक है। रचनाकार के जातिज्ञान का एक उदाहरण देखिए —

जिम कलिकाल प्रवर्तमानि चउरासी जाति बोलीय। किसी ते नाति—श्री, श्रीमाला, उसवाल, बाघेरवाल डीडू, पुष्पकलाल, डीसावाल, मेडतवाल, माथू सूराणा, छनवाल, दाहिल, साली, बडवड खडेलवाल पौरुम्रा गूजर, मोढ, नागर, आलहटा, दडाइता, कपोल, जालू, बाडडा दाव दसउरा करहीया, नागद्रहा मेवाडा, भटेउरा कथरा, नरसिंह, उरा हारल, पचमवस्र सिर पडला कमोह रोतकी अगरवाल, जिणाणी, बाभ धाप पालहाउत उचित वगहू अहिछत्रवाल श्रीगवउ बालमीकि, टाकी, तेनटा तिलउरा—पद्मावती नीमा जेंहराणा, माथुर, धाकड, पल्लीवाल हरसउरा, अजयमेरा नायल, सगउडा, सिहूरा, जेसनाल नादेवा, जाइलवाल, चावेल। एणि सविहू ज्ञाति कुल वश माहि व खाणीइ सु श्रावक कुल।[२]

इस प्रकार कवि अ य अनेक वर्णन सफलता के साथ करता है। गद्य काव्य की इसी वचनिका शैली पर लिखी गई इसी शताब्दी की एक रचना अचल दास खीची री वचनिका मिलती है। जिस पर आगे प्रकाश डाला जायगा। यह रचना जोतर है। तुलना के लिए इस समकालीन रचना के एक दो गद्य खाव्य के उद्धरण नीचे दिए जा रहे हैं —

पगि पगि पउलि पउलि हरती की गज घग, तो ऊपरि सात सात सइ धनक घर साठा। सात सात ओलिपाइक की वइठी, सात ओलिपाइक की उठी। खेडा डडण मुग फरकरी चुहचकी ठाइ ठाइ

१ प्राचीन गुर्जर काव्य सग्रह, पृष्ठ ११६
२ प्राचीन गुर्जर काव्य सग्रह, पृष्ठ १२५

टरा, इसी एक ल्गाट हहि पत्र लिखि पठी निज वाकिवकार निर्वाह कर आवालि पहुंची ।

(२) इसा एक ते पातसाह रा कटक सब असम सबर ऊपरि छूटा, घाटका घडई पग छूटा, दह का पाणा फूटा। दरवता सिरि पग लागा, दुखा टे दट आगा, सूर सुत नहीं पेह आगा।

अपभ्रंश साहित्य की कथनिका में इसका रूप का निर्वाह नहीं मिलता, परन्तु वचनिका शैली की राजस्थानी भाषा का, जैनदर, यही सबसे प्राचीन रचना है।

इस प्रकार इन रचनाओं के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इनके वस्तु वर्णन तथा शैली में पर्याप्त साम्य है। वचनिकाकार में अधिकों के लक्षण हैं। कर्ता कर्म और क्रिया भी अधिकों में हैं। ठीक इसी प्रकार पृथ्वीचन्द्र चरित्र के लक्षण कर्ता, क्रिया कर्म आदि प्राचीन राजस्थानी के हैं। वर्णन पद्धति भी तीनों रचनाओं की समान है।

पृथ्वीचन्द्र चरित्र को लेखक ने ग्रन्थ की इन्हीं पद्धतियों में ५ उल्लासों में समाप्त किया है। रचनाकार ने बीच बीच में श्लोक भी दिए हैं। इस कृति में अनेक शब्द संस्कृत के हैं अतः कवि का प्राकृत ज्ञान स्पष्ट हो गया है। पूरी रचना आद्योपान्त तुकान्त है। कवि ने विविध वर्णनों—वैराग्य तथा दयनीय स्थितियों के तकर स्पष्ट चित्रों का काव्यात्मक प्रवाह में वर्णन है। लक्षण दृष्टि से यह तथा कलापूर्ण है। कवि की बहुज्ञता, रचना प्रवाह का प्रदर्शन निश्चित कर रही है परन्तु फिर भी रचना आद्योपान्त गद्य काव्य की परम्परा का सम्यक् विकास करती है। अन्त में लेखक ने पुष्पिका में रचनाकार का नामादि व रचना प्रयोजन स्पष्ट किया है और रचना काल भी दे दिया है।[1] रचना न होगा, सम्पूर्ण राजस्थान की इन गद्यात्मक रचनाओं में पृथ्वीचन्द्र चरित्र अथवा वाग्विलास अमूल्य योग देता है।

---

१ श्रीमद् अंचलगच्छे श्री गुरु माणिक्य सूरिणा
पृथ्वीचन्द्र नरेन्द्रस्य चरितं वाग्विलासिनम्
संवत १४७८ वर्षे श्रावण सुदि ५ रवौ पृथ्वीचन्द्र चरित्र पवित्र
पुस्तकमिदं लिखितं समर्पितं ।
नारे सेर्नहो मावर् द वकपचाद् लिखावरा
म.ल्लाव अनेनाक्षर दनार्थ सुचि नम्याम्
प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह पृ० ११०

शोकाधिकार

गद्य काव्य की परम्परा में १५ वीं शताब्दी में पृथ्वीचंद्र चरित के पश्चात् एक महत्त्वपूर्ण रचना शोकाधिकार मिली है। यह रचना भी पृथ्वीचंद्र चरित की भाँति प्रासबद्ध शैली में रची गई है। रचना की प्रति मुनि जिन विजय जी को उपलब्ध हुई।[1] प्रति में रचना संवत नहीं मिलता, प्रति की लिखावट, पडी मात्रा, अउ के बदले उ का प्रयोग आदि तथ्यों से अनुमान किया जा सकता है कि यह १५ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के अंतिम दशक में लिखी गई होगी। रचनाकार का नाम भी अज्ञात है।

रचना कथा प्रधान है। वर्ण्य वस्तु अद्यावधि उपलब्ध रचनाओं में एकदम मौलिक तथा सुन्दर है। रचना प्रकाशित रूप में प्राप्त है। हाल ही जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेंस के प्रमुख पत्र जैन युग में डॉ० ह० चु० भायाणी ने इसे प्रकाशित किया है। रचना की कथा वस्तु के आधार पर इसका नामकरण भी डा० भायाणी ने शोकाधिकार किया है, जो पर्याप्त संगत है।

शोकाधिकार का कथा प्रसंग बहुत ही करुण तथा संक्षिप्त है। संक्षेप में कथा सार इस प्रकार है —

गर्भ में माँ त्रिशला को भार से परेशान देखकर ५ महीने के भगवान महावीर ने अपना भार हल्का कर लिया और गर्भ में अंग स्फुरण और हलचल बंद कर दी। अंग स्फुरण में माता को कष्ट होगा, यही जानकर वे बिल्कुल सूक्ष्म बन गये। माँ ने सोचा किसी ने मेरा गर्भ नष्ट कर दिया है। यह जान कर वह अत्यन्त शोकविह्वल हो गई सारे राजप्रासाद में शोक की लहर व्याप्त हो गई। सारी स्थिति विषम हो गई। महावीर के, माँ को सुख पहुँचाने वाले इस कार्य ने माँ को अत्यधिक कष्ट दे दिया। यह जानकर महावीर ने हल्के से अपनी उंगली फड़काई। स्पन्दन से माँ का शोक दूर होकर पुनः आनन्द हो गया। संक्षेप में रचना की यही कथा है। कल्पसूत्र, सुखबोध टीका आदि ग्रंथों में यह वर्णन विस्तार से मिलता है।

रचना का प्रारम्भ ही लेखक ने माँ त्रिशला के कारुण्यपूर्ण उद्गारों से किया है। शोकाधिकार की भाषा प्राचीन राजस्थानी या जूनी गुजराती है। वर्णन प्रास शैली में है, जिसका दूसरा नाम वचनिका है। काव्य एवं गद्य काव्य की दृष्टि से शोकाधिकार का बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। रचना अद्योपान्त तुकान्त तथा कुल ५१ गद्य काव्यात्मक कड़ियों में समाप्त होती है। कृति में करुण रस की धारा लेखक ने प्रारम्भ में ही बहाई है —

---

1 देखिए जैनयुग, अप्रैल १९५८, पृष्ठ ६ १२

अहो ! आ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], विविध [illegible], अहा सखी ! [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।[1]

इस के [illegible] हो जाने से माँ का [illegible] [illegible] [illegible] में परिवर्तित हो जाता है। माँ का [illegible] [illegible] अनुराग तथा [illegible] शृंगार हो [illegible] का दीखता है। [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] सबको [illegible] [illegible] है। [illegible] की अनुराग [illegible] [illegible], [illegible] तथा [illegible] दृष्टव्य है —

[illegible] [illegible] [illegible] जे [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] हार, [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] दीसइ [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। एउ सर्व [illegible] शृंगार [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।[2]

विविध उपमाओं द्वारा कवि ने माँ [illegible] के आत्म [illegible] का [illegible] किया है। [illegible] की [illegible] [illegible] और अधिक [illegible] [illegible] और बना देती है —

[illegible] [illegible] [illegible], जेह [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।

× × ×

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible], [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।

× × ×

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible], [illegible], [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।[3]

जैन गुर्जर [illegible] में [illegible] [illegible]। जैन [illegible] [illegible] [illegible] जैन गुर्जर [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] में [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] की [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible]

१ जैन गुर्जर कविओ १६१८ भाग ? १
२ जैन गुर्जर कविओ १६१८ भाग ४८
३ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] भाग १६ १८
४ जैन गुर्जर कविओ १६१८ भाग ३१ ३१

अ त मे लेखक ने माँ को गम स्फुरण का पुन ज्ञान होने पर दो पक्तियों मे वणन कर रचना समाप्त की है —

वाजिवाल (गा) मागलिक तणामृदग

राजभवन माहि सपूण आन द

इस प्रकार १५वी शताब्दी मे गद्य काव्य अन्य उक्त रचनायें उपलब्ध होती है, जो भाषा की दृष्टि स पर्याप्त महत्वपूण हैं और गद्य के क्षेत्र मे नये सोपान प्रस्तुत करती हैं। १० वीं शताब्दी के बम्बई के प्रिंस आफ वेल्स क शिलालेख राउलवेल के गद्य की भाषा भी पर्याप्त गद्य काव्यात्मक है, जिसके गद्य के उद्धरण आगे दिये जायेंगे। अत गद्य काव्य का उदगम १० वीं शताब्दी से ही माना जा सकता है। १५ वीं शताब्दी के पश्चात तो धारा म अनेक प्रौढ राजस्थानी भाषा मे कृतियाँ उपलब्ध होने लगती हैं।

वस्तुत ऊपर हमने अभ्युदय काल की गद्यकाव्य की उद्भावक एव प्रेरक आदिकालीन गद्य रचनाओ की मुख्य प्रवृत्तियो पर प्रकाश डाला है। अद्यावधि गद्य काव्य मूलक वचनिका शली म उक्त तीन रचनाए ही उपलब्ध होती हैं। विविध प्रादेशिक भाषाओ मे सम्यक शोध होने पर बहुत सभव है कि मैथिली के वण रत्नाकर की भाँति गद्य काव्य की प्रेरक कुछ और अनूठी रचनाए उपलब्ध हो। यो अभी तो राजस्थान के अनेक जैन भडार मुहर ब द पडे हैं। अत शोध की वतमान स्थिति मे प्राप्त उक्त गद्य काव्य मूलक रचनाओ का ही विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। अब आदि कालीन हि दी लौकिक (अजैन) गद्यकृतियो पर प्रकाश डाला जा रहा है।

ही प्रारम्भ होती है और १० वी शताब्दी से लेकर १५ वी शताब्दी तक हिन्दी की विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं में अनेक रचनाएँ गद्य काव्य की शैली में लिखी गई है। इन रचनाओं में प्रयुक्त गद्य (जन कवियों द्वारा रचित कुछ ही रचनाओं को छोड कर) अत्यन्त, सरस, सबल तथा पर्याप्त महत्व का है। जनेतर गद्य के अन्तर्गत अद्यावधि जितनी भी रचनाएँ मिली है, उनमें से किसी भी रचना का पाठ जैन रचनाओं के पाठ से कमजोर अथवा शिथिल नहीं है। इस ओर जितनी भी रचनाए मिली हैं, उनमें वर्णन का शिल्प जन कृतियों से भी ठोस प्रतीत होता है अतः इस ओर पर्याप्त शोध की अपेक्षा परिलक्षित होती है। गद्य काव्य की शैली में अद्यावधि जितनी अजन रचनाए उपलब्ध होती हैं, उनका संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जा रहा है। इन रचनाओं में हिन्दी की विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं मालवी — मथिली तथा तथा राजस्थानी—आदि सभी की लौकिक रचनाए हैं।

राउलवेल या रोडा कृत शिलालेख

आदिकालीन हिन्दी गद्य साहित्य में गद्य काव्य की परम्परा को पुष्ट करने वाली अजन रचनाओं में अद्यावधि उपलब्ध सभ रचनाओं में प्राचीन १० वी शताब्दी का यह शिला लेख है। यह शिला लेख हिन्दी साहित्य में गद्य काव्य की परम्परा का श्री गणेश करता है तथा हिन्दी साहित्य में पद्य और गद्य की रचनाओं में सबसे प्राचीनतम है। गद्य काव्य के रूप में इस शिला लेख का गद्य भाग लिया जा सकता है। रचना राउल नायिका के नखशिख के सम्बन्ध में है। इसका गद्य काव्यात्मक प्रवाह से ओतप्रोत है। गद्य काव्य की परम्परा के उद्भव और विकास की सूचक रचनाओं में यही शिलालेख सबसे प्राचीनतम है। अतः हिन्दी साहित्य में गद्य काव्य का प्रारम्भ करने वाला यही शिलालेख कहा जा सकता है। रचना का गद्य प्राचीन राजस्थानी भाषा में है। इस रचना में शब्द सात भाषाओं के हैं जिन पर अपभ्रंश का [illegible] प्रभाव मिलता है जो परम्परा का प्रभाव कहा जा सकता है।

गद्य की प्राचीनता और सम्पन्नता की दृष्टि से आदिकालीन का हिन्दी अजैन रचनाओं को परम्परा के रूप में प्राप्त होने वाला सबसे सम्पन्न यही गद्यांश है, जो बम्बई के प्रिंस आफ वेल्स संग्रहालय के १० वी शताब्दी के एक शिलालेख से लेखक को उपलब्ध हुआ है। यह शिलालेख अद्यावधि प्राप्त होने वाली गद्य और पद्यात्मक रचनाओं में सबसे प्राचीन है। इसकी भाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि यह रचना १० वीं शताब्दी की ही है।

यह शिलालेख राउल नाम की एक नायिका के सौन्दर्य वर्णन का है और वर्णनकार ने विवाह करके आई हुई नायिका के नखशिख का वर्णन किया है। इस शिलालेख के द्वारा उसके लेखक के विषय में कोई भी तथ्य नहीं मिलता।

कवि ने पहले राउल का सौन्दर्य तथा नखशिख वर्णन पद्य में किया है और फिर गद्य में। गद्य का वर्णन भी पद्य के वर्णन से पर्याप्त साम्य रखता है। यद्यपि गद्य की जो १२ वीं शताब्दी में रचनाएँ मिली हैं, उनका गद्य काव्य की दृष्टि से उतना साधारण महत्व है, परन्तु राउल नायिका के नखशिख का वर्णन करने वाले इस शिलालेख का गद्य काव्यात्मक दृष्टि से बहुत ही महत्त्व का है। गद्य की परम्परा में कलात्मक गद्य का श्रीगणेश इसी स्थान से माना जा सकता है। यह स्थान पर्याप्त कलात्मक है। शिलालेख में यह गद्य भाग से यद्यपि कम है परन्तु जितना भी है, वह बहुत ही पुष्ट और सशक्त है। आदिकालीन हिन्दी जैन साहित्य में गद्य काव्य का उदय करने वाली रचना पृथ्वीचन्द्र चरित का वर्णन प्रस्तुत ग्रन्थ में आगे किया जायगा। गद्य काव्य का प्रारम्भ इसी रचना से हुआ है। परन्तु १० वीं शताब्दी के इस अज्ञात शिलालेख के गद्य का परिशीलन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह गद्य १२ वीं शताब्दी में गद्य काव्य की परम्परा का श्रीगणेश करने वाली रचना पृथ्वीचन्द्र चरित से भी लगभग ४०० वर्ष प्राचीन तथा पूर्ण काव्यात्मक है। शिलालेख का गद्य कलात्मक तथा सुकान्त है। गद्य [illegible] भावों से अभिव्यक्त है। गद्य काव्य की परम्परा का [illegible] रूप में शिला [illegible] में मिल जाता है। इस शिलालेख का गद्य ज्योतिरीश्वर के वर्णरत्नाकर के गद्य की भाँति सुन्दर, प्रवाहपूर्ण और सुकान्त है। भाषा गद्य काव्यात्मक तथा भाषा की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। इस कृति का मूल विषय शृंगार का नखशिख का सांगोपांग वर्णन है अतः यह रचना [illegible] की है। अब तक [illegible] शृंगार और नखशिख का सांगोपांग वर्णन करते हुए [illegible], साथ ही शिलालेख में वर्णन की जन परम्पराओं तथा पद्धतियों का परिचय भी कहीं नहीं मिलता। [illegible] इन्हीं [illegible] के आधार पर इस [illegible] को अद्वितीय कहा जा सकता है।

यहाँ तक [illegible] के रूप में [illegible] रचनाओं का [illegible] है यह निश्चित है कि इस शिलालेख का गद्य बहुत [illegible] है। इस शिलालेख का उल्लेख डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी[1]

और श्री हरवंश कोछड़[1] ने अपने ग्रन्थों में किया है। लेखक को यह शिला लेख डा० मोतीचन्द्र संग्रहालयाध्यक्ष प्रिंस ऑफ वेल्स बम्बई के सौजन्य से प्राप्त हुआ। एतदर्थ लेखक उनका हार्दिक आभार प्रदर्शन करता है। शिलालेख के दोनों कोने टूटे हुए हैं पाठ कुछ कट फट भी गया है तथा बीच बीच में से भी पंक्तियाँ भ्रष्ट हो गई हैं। फोटो प्रति (स्टम्पेज) से यह ज्ञात हुआ है कि यह रचना बहुत काव्यात्मक और पर्याप्त महत्व की है। रचना का सम्पादन डा० हरिवल्लभ भायाणी तथा डॉ० माता प्रसाद गुप्त ने किया है। दोनों के पाठ विद्वानों के सामने आ चुके हैं।[2] इनकी प्रामाणिकता का निर्णय पाठक कर सकते हैं।

जहाँ तक इस रचना की काव्यात्मकता का प्रश्न है लेखक के उपमान मौलिक है। शृंगारिक अंश बड़े मधुर और मौलिक उपमाओं के दृश्य प्रस्तुत करते हैं। *वर्णनकार ने उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं की मालाएँ पिरोदी* है। लेखक का वर्णन राउल नामक नायिका के सम्बन्ध में हैं। यह भी सम्भव हो सकता है कि राउल नाम कवि का भी रहा हो परन्तु कवि के रूप में यह नाम अधिक सार्थक नहीं प्रतीत होता और राउल नामक नायिका के रूप में ही अधिक संगत बैठता है।

कवि ने गद्य काव्य के रूप में ही पूरे गद्य को प्रस्तुत किया है। आदि कालीन इन रचनाओं में गद्यात्मक जितनी भी रचनायें उपलब्ध होती हैं उनको देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि तुकान्त रूप में वर्णन करने की इन लेखकों में परम्परा रही थी। उदाहरणार्थ वर्णरत्नाकर जैसी रचनाओं के काव्यात्मक एवं तुकान्त गद्य को देखा जा सकता है। निष्कर्षतः यदि यह कहा जाय कि गद्य के कलात्मक रूप में अद्यावधि जितनी भी कृतियाँ मिली है वे सब तुकान्त रूप में मिलती है, तो अनुचित नहीं है।

इस शिला लेख में कवि ने नायिका राउल का नख शिख वर्णन रात भावों में बड़ी सजगता से किया है। यहाँ उदाहरणार्थ नायिका के केश कलाप और रक्तिम आभा से युक्त भाल आदि के सम्बन्ध में दो उद्धरण दिये जा रहे हैं। वर्णन में कहीं कहीं छन्द कट फट गये हैं पर अलंकारिक वर्णन भाषा की सरलता और प्रसादिकता तथा उपमानों की मौलिकता आदि को इस दृष्टि से देखने से इस गद्य की सम्पन्नता का अनुमान किया जा सकता है। वर्णन का सौन्दर्य देखिए —

---

१ अपभ्रंश साहित्य, डॉ० हरिवंश कोछड़ पृ० ३५, सन १९५.

२ भारतीय साहित्य आगरा तथा राउलवेल मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद

ग्रज के भण्डारो की सम्यक शोध होने पर बहुत सम्भव है कि ४०० वर्ष के इस काल मे गद्य काव्य की परम्परा का पोषण करने वाली और भी कई रचनाएँ उपलब्ध हो।

वर्णरत्नाकर

गद्य काव्य शैली म लिखी अजैन रचनाओ म ठाकुर ज्योतिरीश्वर के वर्णरत्नाकर को नही भुलाया जा सकता। इस अवधि १४ वी शताब्दी की जितनी भी जैन गद्य रचनाए उपलब्ध हुई है, उनमे कोई भी रचना ऐसी नही है कि उनके गद्य को वर्णरत्नाकर के गद्य के समक्ष रखा जा सके। मैथिली मे ठाकुर ज्योतिरीश्वर द्वारा लिखी इस रचना का गद्य बहुत ही सरस, काव्यात्मक तथा प्रवाहपूर्ण है। अत गद्य काव्य की परम्परा म इस रचना का महत्व सदैव बना रहेगा। वस्तुत इस युग म जिस प्रकार मैथिली की यह रचना उपलब्ध है बहुत सम्भव है उसी प्रकार की सुन्दर रचना गद्य के क्षेत्र म हमे अन्य प्रादेशिक विभाषाओ म भी उपलब्ध हो। गद्य का यह विषय पूर्णतया शोध का विषय है। गद्य काव्य अथवा कलात्मक गद्य के रूप में प्राप्त होने वाली इस अजैन रचना का महत्व अग्रांकित कुछ उद्धरणो से सम्भवत आंका जा सकेगा। यह रचना प्रकाशित है और प्रसिद्ध भाषा शास्त्री विद्वान् डा० सुनीति कुमार चटर्जी ने इसका सम्पादन किया है। यह ठाकुर ज्योतिरीश्वर की गद्य रचना है। रचना के वर्णन प्रकारो और शिल्प की प्रौढता को देखते हुए यह सहज ही कहा जा सकता है कि इसके पूर्व भी गद्य की रचनाएँ मिलना बहुत सम्भव हैं। नायिका वर्णन, ऋतुवर्णन, प्रयानक तथा श्मशान आदि बड़े ही प्रौढ बन पड़े हैं। इस प्रकार मैथिली गद्य की प्रौढता अस्वीकृत नही की जा सकती। गद्य के क्षेत्र मे इस रचना का एक ही महत्व है। प्रसिद्ध विद्वान् सुनीतिकुमार चटर्जी भी इस रचना के गद्य की प्रौढता स्वीकार करते हैं। मैथिली गद्य के विकास म योग देने वाली इस रचना के गद्य की सम्पन्नता निर्भ्रांत है। यही नही, गद्य काव्य शैली म प्रणीत इस रचना का महत्व १५वीं शताब्दी म उपलब्ध श्री माणिक्य सुन्दर सूरि विरचित प्रसिद्ध रचना का पृथ्वीचन्द्र चरित्र से किसी भी भाँति कम नही है। अत गद्य का सौष्ठव वर्णन की चित्रात्मकता, भाषा का प्रवाह और प्रामाणिकता का अनुशीलन

---

१ देखिये वर्णरत्नाकर ठाकुर ज्योतिरीश्वर प्रणीत—बंगाल द्वारा मुद्रित संस्करण, सन् १९४० सा० श्री सुनीतिकुमार चटर्जी तथा बाबू मिश्र।

पद्म त्यजल ध्वनि। आकाश अधकार करीजा पउ आदित्यने मते नुकायल अधकार अछ सँ मिलित भउ, तदनन्तर भउ सहसा, धुमका सम्भार गौर सञ्चार नटकेर कोलाहल नक्षत्रक उदगम दीपक उजोत श्रोत्रियाहिक प्राणायाम नवोढाक हृ विरति प्रौढाक हरय पङ्कज (क) पराव भ्रमरक उपशम मथिकक विश्राम सदयोनहिक सरग कौशिकक समाचार, गोमायु बाल युवतिहिक उत्कण्ठा युवजनक अभिलाष भोगीजनक द्वितीय भाजनक उद्यम, गामायुक शब्द मळोवतिक सम्पूर्णता प्रभृति स यथा देयु।

इसी प्रकार लक्षम न वर्षा अधकार च द्रमा, मेघ, बस त शरद आदि के वर्णन मौलिक उपमान चुन चुन कर दिये हैं, ऋतुओं के इन वर्णनों के साथ साथ कला, रत्न महादान, वस्त्र, ज्योतिष अभिषेक, धूतवर्णन, कुट्टनी कामावस्था आखेट रथ वन सरोवर, वर्णनों के विविध चित्र खींचे है। इस गद्य की भाषा मैथिली है, जिसकी काव्यात्मकता और भाषा त्म सबलता स्पष्टव्य है। शुद्ध चयन सरस सुन्दर और पर्याप्त प्रभावशाली हैं। रचना का विभाजन लेखक ने कल्लोल शब्द से किया है और प्रत्येक वर्णन के साथ उसका समाप्ति सूचक सूत्र लिखा है।

मैथिली भाषा की इस रचना के समक्ष रखी जाने वाली काव्यात्मक गद्य की अद्यावधि जो ज रचनायें उपलब्ध है उनम सबसे महत्वपूर्ण रचना पृथ्वीचन्द्र चरित है। जिसका गद्य वर्णरत्नाकर की भाँति सशक्त है। अल कारिक—सुषमा उपमानों की माला तथा उत्प्रेक्षाओं की छटा देखकर कोई भी व्यक्ति पृथ्वीचन्द्र चरित की काव्यात्मकता का लोहा मान सकता है। वस्तुत ये दोनों रचनाएं समान रूप से गद्य काव्य की सुषमा म योग प्रदान करती हैं।

कान्हड दे प्रबन्ध

गद्य काव्य शैली में लिखी ... की कोटि की रचना कान्हड दे प्रबन्ध मिलती है। रचना की हस्तलिखित प्रति राजस्थान पुरातत्व मंदिर जयपुर में सुरक्षित है। कान्हड दे प्रबन्ध के रचयिता कवि पद्मनाभ हैं। यह पूरा ग्रन्थ प्रबन्ध प्राचीन राजस्थानी में लिखा एक सरस महाकाव्य है, जिस पर हम पूर्व पृष्ठों म विचार कर चुके हैं। पूरा ग्रन्थ यद्यपि पद्य म ही लिखा है, पर बीच बीच म गद्य काव्य शैली म भी लिखा गया है।

१ कान्हड दे प्रबन्ध—राजस्थान पुरातत्व मंदिर जोधपुर द्वारा प्रकाशित

चउवीसर नूता सूआ। शत भूमिका सहस्र भूमिका सभा नी रचा।

(२) महाराजधिराज श्री का हड द सभा पूरी बइठउ लइ। सिंहासनि पाउ परठिउ छइ। मघवना उलर बाघ्या छइ। परीयछ ढसी छइ। मेतकीना गध गहन गहीया छ"। सोरमना सोड साचरिय छइ। सभा माहि सरी मल्हाणा छइ। जाइ बेली वालउ पाडलना परिमल पचवण पुष्पजातिना प्रकर पाथारिया छइ। गुल्लालना गध गहगहीया छइ। पहीया कपूर पाए चपाइ छइ। घोडा यही आलइ घालीया छइ। हाथियानी सारसी आगलि कानि पडिउ काइ नथी सभलाइ। पच शब्द यचित्र वाजइ छइ। गल्या पीतल रताजणी तणा पखावज धोकार करइ छइ। नत्यकी पात्र नत्य करइ। ततवितत घन शुषिर पचवण वाजित्र वाजइ छइ। पचवण छत्र धरिया छइ चामर व्यिजना बिहु पखि हुइ छइ। अमात्य प्रधान सामत मडलीक मुकुट वद्ध श्रीगरणवइ गरणा पर्माधिकरणा मसाहणी छावरी बारहीया पुरुष वइठा छइ।[१]

इस प्रकार इस महाका य म प्रयुक्त इन गद्यात्मक उद्धरणो द्वारा रचना के गद्य भाग की सम्पन्नता का अनुमान लगाया जा सकता है। का हड दे प्रब ध पद्मनाभ की एक प्रौढ रचना है जिसम प्रयुक्त इन स्थलो म भी गद्य की भाँति अपूव प्रवाह तथा सरसता है।

उक्त उद्धरणो द्वारा आदिकालीन हि दी जन रचनाओ मे प्रयुक्त गद्य साहित्य क विकास का तुलनात्मक दृष्टि स अध्ययन किया जा सकता है।

अचलदास खीची री वचनिका

आदिकाल की जनेतर गद्य रचनाओ म अचलदास खीची री वचनिका एक महत्वपूण कृति है। यह रचना वचनिका शली म चारण कवि शिवदास द्वारा लिखी गई है। रचना पद्य और गद्य दोनो रूपो म लिखी हुई है। पूरी कृति एक उत्कृष्ट वीर काव्य है, जो आदिकालीन चारण शली म गद्य काव्य की सरस वीर गाथात्मक सुषमा प्रस्तुत करती है। कृति का गद्य पर्याप्त प्रवाह पूण है। वचनिका शली गद्य की का यात्मक शैली होती है और अचल दास की यह वचनिका प्राचीन राजस्थानी के गद्य क सौदय को वाणी दन

[१] वही पृ० १५६ १५७

वाली अनूठी कृति है। जिसका कथावस्तु ऐतिहासिक है। रचना की कथावस्तु एवं काव्य सौन्दर्य पक्षों पर विस्तार से विचार इसी अध्याय के पूर्व पृष्ठों में किया जा चुका है। यहाँ इसके गद्य भाग का ही मूल्यांकन प्रस्तुत किया जायगा। अचलदास खीची री वचनिका में ठीक उसी प्रकार का गद्य भाग मिलता है, जैसे पद्मनाभ का कृत कान्हड़दे प्रबन्ध महाकाव्य में बीच-बीच में गद्य भाग मिलते हैं। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि कदाचित रचना में पद्य और गद्य शैलियों में वस्तु वर्णन का क्रमिक वर्णन करने की यह प्रवृत्ति उस काल में वर्णन की एक विशिष्ट शैली ही रही होगी।

अचलदास खीची री वचनिका का गद्य अंश प्रायः अनुप्रास विशेषतः आदि प्रासों से अलंकृत किया गया है। प्राचीन राजस्थानी के प्राचीन जैन अजैन कवियों द्वारा प्रणीत बात और वचनिका शैली का यह साहित्य इतना अधिक समृद्ध है कि इस पर कई प्रबन्ध लिखे जा सकते हैं। ये कृतियाँ बात, ख्यात और वचनिका नाम से हजारों की संख्या में उपलब्ध होती हैं, तथा अप्रकाशित हैं। राजस्थानी साहित्य की यही तीनों बात, ख्यात और वचनिका काव्य की गद्य शैलियाँ हैं जिनमें इस विशाल साहित्य का सृजन किया गया है।

अचलदास री वचनिका में गद्य और काव्य दोनों रूपों में प्रयोग

---

१ अचलदास खीची री वचनिका री भाँति 'अचलदास खीची री वात' कृति भी मिलती है। इसका विवरण "राजस्थान में हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज भाग १" में भी मिलता है। श्री डॉ० मोतीलाल मेनारिया ने भी अपने ग्रन्थ "राजस्थानी भाषा और साहित्य" पृ० १०० पर इसका उल्लेख किया है। रचना की कथावस्तु लगभग यही है। एक दो उद्धरण इस प्रकार है —

(अ) अचलदास गढ गागरउणि [illegible] उत्तर दक्षिण पूरब पश्चिम [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

(ब) [illegible]

महत्वपूर्ण है। कवि ने इस वीर पूजाकाव्य को जिस प्रकार काव्य म सजोया है। ठीक उसी प्रकार इसका कथावस्तु को अत्यन्त स्पृहणीय ढग से गद्य बात म भी लिखा ह। पूरी रचना की कथा वस्तु म लेखक ने गद्य भाग म केवल मात्र युद्ध और सज्जावणन ही किया है। जौहर वणन काव्य म किया है।

माडू के सुलतान ने गागरोण (कोटा राज्य के अन्तगत) पर चढाइ कर दी। अचलदास एव उनके अनेक सहयोगी उपयासक युद्ध म हजारों

मुहरत दिया। गढि ढोवा किया। तीन लाख भड आया इमा मीरी आँख मूह पकडजिसा। करै घात बोलै पारसी बगतर तवा झिरने जाणो आरसी। कवाणा कुआ जिभ कुरवरिया, बौलाख मेहाजिम औसरिया। काली निहाव गोला वुहाव। गढ सिखर उडी कामरा राजीव तुडी। सूरा अक्षरग जीध चौ जग गइ हिमत भुरज गगाहिउ चतुरगणो वकाचगा चाहउ। आडा अचल ताणि आठि माल पनेरे सइस जोध पौचाला। सोह सग्राम का समरा अणी का भमरा, गारढि का गाडा फोजा का लाडा। चावरत्नी का विंद, नारा का नरीद। चौईस आखडी चालण सुतौ राव ताल्हण। महाराज मागियो सो पायो। वाचा बधो सुरताण पातसाह आयो। एव जो खती धरम ऐ क्तिारथ कीजै लका समाण गढि गागुरण लीजे। मीर मुगल साके आण घमघमी उठायो गढि प्रमाण मोरचो वणायो धारा पनडा उजडा वयडा पमाम तेल ले हाम पड्या इग्यारे हजार नर खलहाण हिदु मुसलमाण। राव ताल्हण हूँ गाढ चैरचे लडे तो सुरा सोहडा समवडै। जो हू गढ पोलिया मरु तो च्यारजुगा लग उवरू। उवरै सो उवरी करै सो मरो गढ पवै आधारो, रावताल्हण पधारो।

[उक्त गद्याश में तुकान्त प्रौढ प्रासात्मक गद्य की छटा दिखाई दे रही है। वाक्य छोटे ओर सरस हैं। कम से कम शब्दो म अधिक से अधिक अभिव्यजना का सभार है। रचना माधुर्य से पूर्ण है तथा वर्णन शैली प्रासात्मक एव प्रासादिक है।

उक्त उद्धरणो से रचना के शिल्प का अनुमान लगाया जा सकता है]

मुसलमानों का सामना करके वीरगति को प्राप्त हुए और उनकी स्त्रियों ने जौहर कुण्ड की धधकती ज्वाला में प्रवेश कर वीरोचित गति को प्राप्त किया। राजा हम्मीरदेव चौहान की उक्त गाथा [illegible] प्रचलित का [illegible] था [illegible] और [illegible] है। [illegible] और [illegible] दोनों [illegible] में समान नहीं है। [illegible] और [illegible] दोनों [illegible] में [illegible] थी [illegible] को यह [illegible] इसलिए और भी अधिक [illegible] बन पड़ा है, [illegible] अपने [illegible] के साथ युद्ध करते रहे [illegible] अपने [illegible] की वीरांगनियों [illegible] तथा [illegible] प्रकार [illegible] के युद्ध के लिए प्रेरित करते रहे थे। अतः इस [illegible] का [illegible] रूप [illegible] शैली [illegible] है। [illegible] का प्रवाह [illegible] सरल और [illegible] है। [illegible] नहीं है। [illegible] एक [illegible] है। [illegible] और [illegible] किया है [illegible] का [illegible] होता है। [illegible] में [illegible] सकता है।

दोना पक्षों की सैन्य का तुलनात्मक वर्णन देखकर दोनों दलों की शक्ति की परिभाषा प्राप्त कर लीजिए । कवि ने सुल्तान की सेना का वर्णन पहले और अचलदास की सेना में लडनेवाले सहयोगी शासक राजा नरसिंह दास तथा विभिन्न राव राजाओं का वर्णन फिर किया है दोनों का तुलनात्मक एवं विचारात्मक स्वरूप वर्णन देखिए —

॥ अथवात ॥

बादशाह का सैन्य वर्णन

(१) इसा परत्यौ लख दालम गोरी राना बाण लखमा लवा, रोचकर बनि । तरते बाणू लखमा लवारा कटक बधे । त कटकबध रउभार भार भपार मगरवातन गम्बर । तइ कटक ब्रा माहि तउ कहि कहि दिखालउ । महाधर तउ वउग । मीयां उसमा खान फने मान गजनी खान उमरखान है बति खान खान तउ मुगीत सारिखा (१८ १५)

(२) देसतउ नउण कवण सतिया नमियाड जुगा मायात आसरिहू गउरि वाविन नीलइरिइछेर तउ राइमेणि राणी गण पउली घट उलीव राणी तिलार सिलार पुर लगइका कटर बध मेंक वेस तउ मांडव धार उमीण सीह उर बरोलू हुसगीवाद लगइ का कटक बध । इसी एक ते पातसाह का कटक बद, दस देस का । लम्ब खड का नगर-नगर का खान मीर उमरा चतुरग दल चडि चाल्या । पातसाह आपणा पी पलो छाड्या ॥ (२२) ॥

(३) अरर पातिसाह हुआ ागिला आगिलेरा अर भल भलेरा-स्या तउ चउरासी दुगलीया या त्रिहाई पाडइ । यो तउ सुरताण दूसरउ अलाउद्दीन जिणि चवरासी गढ दुग लीया एक ही दिहाडइ ॥ २४ ॥

हिन्दू राजाओ का वर्णन

(१) हिंदू राजा कउण कउण । सकलही एकब्रदी सकलकला सपूरण राजा नरसंघदास सारिखा । ते नरसघ दास रा कटक बध चालता सातरि आगिनइ दलि पाणी पाछिलइ दलि कादम तइ कादम कइ गइ खेह उडती जाइ । दूसरो विक्रमाइत (१६)

अथवात

(२) ते राजा हरसघ दास सारिखा बत्तीस सइम साहण दिणि सेति महिइ चाल्योउ । मदोन मत हस्ती महिइ चाल्योउ । आपण जाइ सभ चाल्योउ समदि जाइ लाड उपचाल्यो । कनक राइमद गलित पनि मेल्ह्या त राजा नरसंघदास सारिखा । त राजा नरसघदास का कुबर तउ चादजी

जिवाणी जउ साभलउ रहइ अणी पाणी । आज तउ सोम खानन याहइ दे नही निलक चुपरितउ महिल तु नही, सीह उरिर टलू नही। हठ मउ राव हमीरि आधाम्यो (२३)

अचलेश्वर के ऐश्वय का वणन करने मे कवि निकुल नही अघाना । दूर दूर के प्रन्शा म उसका यश प्रसारित ह । उसकी तुलना मे कोई दूसरा राजा टिकता ही नही । अचलेस की भाँति तो अचलेस ही है । ऐसे अचलेश्वर को धयवाद है जिसने माडू के बादशाह से भयकर लोहा लिया । वणन की सरलता और प्रवाह उल्लेखनीय है । तालक की अलकारिकता चित्रण को और अधिक सशक्त बना देती है ।

घनि घनि हो राना अचलेसर थारउ जायो । जिणि पातसाह सउ वाउउ लीयो । तणी पातसाह आया । ससात्तरि सत छाड नही नवमाडइ नही हीण न भाजइ । पागार स घिम न हाइ तर ते राजा अचलेसर सारिखा अचल ने अचलेस ही होई । तालस बरतउ किसउ ऊतर दक्षण पूरब पछिम कउ मउ किवाड । आइ या अजइ माल अहकारि रावण दसरथ धरि तीसरउ सीघणा । छत्र नरसर छयाणवै पाखड कउ आधार वासव चकरवति । घनि घनि हो राजा अचलेसर थारउ जीयो जिणि पातस न सउ वाउलीयो (२७ २८)

बादशाह का दल अचलेश्वर का सेना पर टूट पडा । प्रलय मच गया । दिशाएँ डोलन लगी । अम्बर म धूली गद छा गई सूय के दशन भी दुलभ हो गए । न हाथियो का पार न घोडों का । वणन म उत्साह और प्रवाह देखिए —

इगा एक तै पातसाह गा कटक चध अचलसवर ऊपरि छूटा । वाट धारवड ईंघण खूगा । दह का पाणी तूटा । परबता सिरि पथ लागा, दुझाट घट भागा । सूर मूझ न्ही मेह आगा । हैवर गैवर पाइल मुहवि न पारा वार । गोरी राव गिर आस तउ मउ मण गजणहार ससात पातसाह का कटक बध हाइ तुम्ही नमाि ।

अथविरिदावत

वारे माहि रिड साहि रियाउ बलिया सहि कधि कुदात सबलसाहि मान मरदान निजा माहि थापना तरिज । सग्राम माहि जग हयरिण जानता माहि जइन यन तुरिगाण दूसरो अलावदीन जिमै पकि आरभि पारभि आइ टिकी छ ा रति रति पउति पउति हस्त की गजघटा । तो ऊपरि मात स त मे तोष ।

(५) तउ तउ काइर पुरिस तू है तो यो ही वड उमिस। थारइ कीयो पाछो पावउ मलगह न चालइ। पाल्हण सी भलासना लोका का कह्या करणा। चार सौंमल्या आसू पूछि अन्माना लीयो। विजइ वध बागडी की की नाई सत्त ही, प्रिथिमी प्रटिपि ज्यो ज्यो गढलीजउ हमारइ वइर सुरिताण गोरी राजा सउ कीजो। भाल्हण सी पुहविहि रह यो अनि समय्या सरगि। तिणि वेला हो या भरी राइ राइ रोवण लगि (८८ ६०)

युद्ध में वीरगति पाने पर रानियाँ क्या अपना आत्म समर्पण म्लेच्छों के हाथ करेंगी? क्षत्रिय बालाओं के लिए यह कल्पना भी अस्वाभाविक एवं असम्भव थी। अत जौहर होगा और उनका मृत्यु से आलिंगन हो यही इस युद्ध का सही उत्तर होगा।

अत चिन्ता किस बात की। रणथभोर के महाराज हम्मीर के घर पर भी तो क्षत्रिय बालाओं ने जौहर कर अपनी लाज और कुल की मर्यादा की रक्षा की थी। अत जौहर ही राजपूत रमणियो का शृंगार है। वर्णन की उत्साहमयी उक्तियाँ देखिए —

मानवी लोक हारे बावनी हो तैंतीस कोडि देवता सहित सिरजणहार रयो तुम्हारे कौतिग देखण हार। हा तो छो चि त। वसत तम्हे काइ मान उपाण मन माहि अहित। इवे तम्हे यो करउज्यो जोगइ जोगाइन वइ घरि जउहर हुवा तिलकु सुपरि गहिलउत वइ घरि जौहर हुवा। सीह उरिरोलू क घरि जउहर हुवा। काल्हि क दिहाड़ै रिणथभउरि राजा हमीर कइ घरि जउहर हुवा। तिणू जउहरा जिका वात ऊणी हुई हुवै त्या म्हे पूरी करि दिखालउ। पूरो हुई छुवै त्वा पुनरपि आहुडि उजालव। हो तउ छाउ चिंता वसभु तिणी कारणइ छ उदु चितु। तम्हें कांई न मानउ आपण मन महि अहित। इण बालि राजा अचलेसवर कउ राज लोक हस्यो। हे माइ मरण चालोसु कुरसामउ। आई भी पूछउ—नइ इवै चिंता छ, त्या कउण छ।

राणा अचलदास की जौहर करने की बताई गई उक्त रीति की क्रियान्वित किया गया। भयकर युद्ध म भी राजपूतो के वेमरो अचलदास वीरगति को प्राप्त हुए। रानियों ने जौहर के कुड म कूद कर अपने आत्म सम्मान की रक्षा की। पाल्हण सी ने मरते भी समस्त अ त पुर म शोक छा गया। वर्णन की सरसता देखिए —

'मुत महर नीमरउ न दीसउ नीकउ। चांद हतउ गज पटान फूट। पांमा पातल तउ घाइ मारी घोरउ कह्या राणा। मोकलसी पासि गयो थो।

रहौ व य नो कहौ हो रह्यो । र आग्नं मारवाड़ पाटण्डो । अतिवो र [illegible] रही मोन्त ऊपरे कहौ पातरणो परोळागो वराद्र । तठ राजा प्रमानन्द पठे भाई हो गयरो रहा स्वारो । ना रे गुर राजा अपनेद्रा नो रु मान हो गयरो नई हुवारो । पाहुणो रै परोळागे प रन्धाल अवर मोर उनाल । दाद दादुर रु बार्ज मारकर भाव को बोता अवर को बनेता । पुन मा नड पाईस पाणिराम मारग को गारपू । गयन हो परिवार हेत लि मतार पाहुण मी परोळागो परार मठा स्वार ॥ पाहुणगो रै बन नड गुवन गीवो जद । बीज तड गु बीज बोवा जद । पालो पटणो रहालि जद । बोध उपरनो जांति जद ॥ (८६ ८८)

ओर इस प्रकार भाव म नवि मुड रा गमाहार बोहर म आवर करता है । नदि ने मत म जो र ना वनार त रूप रूप में ही प्रस्तुत किया है । [illegible] द्वारा रचना की [illegible], आलंकारिकता, [illegible] सौन्दर्य [illegible] दृष्टि होता है । इसी तरह, की अनेक राग [illegible] और [illegible] मुनिजी राजस्थान म [illegible] म [illegible] होती है । इस की [illegible] र अमित [illegible] [illegible] रूप का [illegible] कि [illegible] है ।

निष्कर्ष

५

अन्य विविध विषयक गद्य साहित्य

आदिकालीन जैन और अजैन गद्य रचनाओं के साथ साथ हिन्दी में गद्य साहित्य सम्बन्धी उक्त रचनाओं के अतिरिक्त इतर विषयों की रचनाएं भी उपलब्ध होती हैं। यद्यपि इन रचनाओं की भाषा इतनी अधिक सशक्त और प्रवाहपूर्ण नहीं है फिर भी तुलनात्मक दृष्टि से विवेचन करने पर गद्य साहित्य का तत्कालीन वैविध्य स्पष्ट हो जाता है। विषय की दृष्टि से इन रचनाओं में पर्याप्त वैभिन्य है। कोई बात चीत में है, तो कोई वचनिका शैली में, कुछ चारण शैली में हैं, तो कुछ जैन शैली में। इनकी शैली में जिस प्रकार का अन्तर परिलक्षित होता है ठीक वैसे ही इनके वर्ण्य विषय में भी है। कुछ रचनाएं गणित की मिलती हैं तो कुछ ज्योतिष शास्त्र की, कुछ अर्थ शास्त्र की हैं तो कुछ नीति तथा राजनीति की। इस प्रकार विविध वस्तु विषयक अनेक रचनाएँ उपलब्ध होती हैं। अभी तक अजमेर नागोर, मेरठ कमीन सहारनपुर, दिल्ली, मुजफ्फर नगर, आदि स्थानों के जैन भंडारों की सम्यक शोध नहीं हुई है अतः शोध होने पर आशा की जाती है कि इनमें अन्यान्य विषयों पर लिखी तत्कालीन अनेक गद्य रचनाएं उपलब्ध हों।

बालावबोध शैली में लिखी गई, इस काल में मिलने वाली कुछ गणित की रचनाओं की भाषा का यहाँ परिचय दिया जायगा। गणित के अतिरिक्त पुराण वार्ता नाम आदि सम्बन्धी गद्य ग्रंथ मिले हैं। इन ग्रंथों की वस्तु व पद्धति में वैज्ञानिकता कितनी है यह कहना तो बहुत कठिन है परन्तु इस गद्य को सिर्फ इस दृष्टि से वैज्ञानिक गद्य कहा जा सकता है कि इसका वर्ण्य विषय एक निश्चित विज्ञान से सम्बन्ध रखता है।

इस प्रकार की इस काल में जो रचनाएँ मिलती हैं, उनमें प्रमुख निम्नांकित हैं। इनका सम्बन्ध विशेष गणित विज्ञान से है —

(१) गणित सार[1]

(२) गणित पचविंशिका बालावबोध[2]

गणितसार की मूल रचना संस्कृत में हुई। [illegible] है कि [illegible] सं० १५८६ में [illegible] (पाटन) में [illegible] था। फिर राजस्थानी में इस पर टीका की गई। टीकाकार [illegible] है। प्रस्तुत रचना में गणित के कुछ सिद्धान्तों के आधार पर कुछ नियमों का परिचय दिया गया है। साथ ही [illegible] प्रश्नों और [illegible] के उदाहरण तथा व्याख्याओं का भी महत्वपूर्ण विश्लेषण है। उदाहरण देखिए —

> [illegible]

इसी प्रकार एक उदाहरण गणित पचविंशिका बालावबोध का दिया जा सकता है। यह रचना सं० १८०३ की है। मूल प्रति बीकानेर [illegible] में है। रचनाकार ने इनके [illegible] की टीका प्रस्तुत की है साथ ही साथ बीच में [illegible] है। इसमें [illegible] वर्गों, [illegible] तथा [illegible] विविध प्रकार की गणित विज्ञान की पद्धतियों का परिचय दिया गया है —

> [illegible]

असुर कुमार माही वि इद्र केहा एक बीनु बलेंद्र। नाग कुमार माही वि इद्र, वहा धरणेंद्र, वाजू भूतानद। सुवर्ण कुमार मा हा वि इंद्र केहा, वेणु देव थ णु दालो। विद्युत कुमार माही विद्र कहा हारिक त हरिस्सहर।

इन विविध विषयक गद्य रचनाओं से प्राचीन हिंदी गद्य साहित्य के विकास क्रम के सोपान निर्धारित किय जा सकते हैं। इन रचनाओ म पद्य की ही भांति वविध्य मिलता ह। इस प्रकार उक्त विवेचन म आदि कालीन हिंदी जैन साहित्य की उपलब्ध गद्य रचनाओं के अभ्युदय काल की लगभग सभी धाराओ का आलोचनात्मक परिचय दिया गया गया ह तथा तुलनात्मक विवेचन करने का भी आंशिक प्रयास किया ह। अब सक्षेप मे १४ वीं तथा शताब्दी की इस गद्य रचनाओ की प्रवृत्तियो तथा भाषा का परिचय दिया जा रहा है। इस विवरण म छ दा, वर्त्त क्रिया आदि के विविध रूपों की एक मोटी रूपरेखा स्पष्ट की जा रही है। यह अध्ययन भाषा विज्ञान के ध्वनि, रूप तथा व्युत्पत्ति के सिद्धा तो के आधार पर नही ह। इससे सिफ इन रचनाओ म प्रयुक्त विविध शब्दों का ही विवेचन होगा। इन कृतियो की भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन तो भाषा विज्ञान के शोध स्नातकों के लिए प्रबंध का विषय है।

अभ्युदय काल की गद्य रचनाओ की मुख्य प्रवृत्तियां और भाषा

१५ वीं शताब्दी की गद्य रचनाओ पर यह कहा जा सकता है कि गद्य के अनेक रूप इन कृतियो म सुरक्षित हैं। टीका टिप्पणी की परम्परा तो सुरभित है ही, गद्य म सु दर कथाओ और प्रबंधों का भी प्रचलन प्रारभ हो गया था। वस्तुत इस विकास को तीन रूपा म देखा सकता है —

(१) गद्य कथा

(२) गद्य प्रबंध

(३) टीका, अनुवाद, बालावबोध व व्याकरण आदि।

गद्य कथाओं पर पूर्व पृष्ठो म विचार किया जा चुका है। इन कथाओ म जन भाषा की सरसता है आलकारिक कृत्रिमता नही। गावों मे जैसे आज जो सरस कथाएं कही जाती हैं उन्हीं की भांति य कथाएं सरल और सरस हैं। कथाएँ संख्या म अनेक हैं। इन रचनाओं का देखते हुए यह कहा जा सकता है कि प्राचीन राजस्थानी या पुरानी हिंदी के इस काल म गद्य के प्रौढत्व क दर्शन होने है। इन प्रकार की अनेक कथाओं क उदाहरण पहले दिए जा चुक

करीउ, धरोउ, गणीउ ये भूतकालिक कृदन्त के प्राचीन रूप हैं। गणितसार की भाँति अनेक औक्तिक ग्रंथ भी मिलते हैं। इन ग्रंथों में संस्कृत व्याकरण को पुरानी हिन्दी के माध्यम से स्पष्ट किया है। संग्रामसिंह की प्रसिद्ध रचना बालशिक्षा इसी प्रकार की औक्तिक रचना है। आचार्य सोमप्रभ सूरि की भी एक औक्तिक संज्ञक रचना मिली है। भाषा के लिए उसका उद्धरण यहाँ दिया जा रहा है। श्री सी० डी० दलाल ने इसको इस प्रकार उद्धृत किया है —

> जेउ करइ, तउ करइ, सइ इत्यादि हउ करउ लिउ दिउ इत्यादि तथा करावइ लिवडावइ दिवरावइ यथा लभाडइ, लभयति, सपादयति उतारइ उत्तारयति हउ कीजउ तीण कीजइ यथा-छेदति तइ मइ हुइ अइ सुइ अइ वइसइ यथा-सहि आवश्यकु पलिउ जेह सवेहि राजि जाणीइ तथा वरतउ इत्यादि तथा गुरि अणुजाणिउ चेलु व्याकरणु पढत १

इसके उद्धरण प्रयुक्त कुछ शब्दों व प्रत्ययों का भाषा वैज्ञानिक विश्लेषण इस प्रकार किया जा सकता है —

प्रत्यय —

प्रथमा विभक्ति	— उ प्रत्यय —	आवश्यकु-
द्वितीया विभक्ति	— उ प्रत्यय —	व्याकरणु
तृतीय—	इ	राजि गुरि
		एहि सवेहि-

कुछ सर्वनाम देखिए—जेऊ (मैं) तीण (तेण)—तइ (ते) मइ (म)
क्रिया वर्तमान काल
(१) लिउ दिउ, करइ, हुई, वइसइ आदि।
(२) कीजउ, जाणइइ आदि
(३) दिवरावइ, लभाडइ, उताग्इ
वर्तमान कृदंत -- लेतउ देतउ
भूत कृदन्त --- जाणु जाणिउ

इन उद्धरणों में उ की प्रवृत्ति कम हो गई और उसका स्थान प्राचीन राजस्थानी की इस हि ने ले लिया है।

अपभ्रंशेतर काल की इन्हीं आदिकालीन गद्य रचनाओं के प्रत्ययों और विभिन्न शब्द रूपों को समझने में तिलक कवि कृत इसी शताब्दी की एक रचना उक्ति संग्रह है। जिसकी सूचना श्री दलाल जी ने दी है। इसमें कवि ने

बहुधा प्राचीन राजस्थानी के शब्दों का ही प्रयोग किया है। एक उदाहरण देखिए —

देवदत्ति मइ पाणिउ पावइ पाणियउ गतु मारग।

इस उदाहरण में देवदत्त करइ पाणि, मारइ, आदि शब्दों के साथ साथ पढ़यइ करिउ, कम्मइ छहि, करउ छहि आदि रूप भी मिलते हैं। इन शब्दों के रूप इस प्रकार हैं —

वर्तमान काल — करइ (कर्ता)

पढ़ीयइ — (कर्म)

भूत कृदन्त—करिउ

प्रत्यय—उ का प्रयोग प्रथमा में यथा कमउ, उपाध्याउ,

इ का प्रयोग सप्तमी कइनइ, पउनि।

इन परिवर्तनों को मुग्धावबोध औक्तिक ग्रन्थ में और अधिक स्पष्टता से देखा जा सकता है। इस ग्रन्थ का लेखक कुलमण्डन गणि है। यह ग्रन्थ व्याकरण की रचना है। इस ग्रन्थ के विभिन्न शब्दों द्वारा तत्कालीन गद्य भाषा का सम्यक् परिचय मिल सकता है। इसका रचनाकाल १४५० के आसपास का है। कुछ उदाहरण देखिए —

कर्त्ता आगलि ततीया कम आगलि प्रथमा त्रिया आगलि आत्मने पद तणा नव वचन हुइ।

(३) अनइ जिहां वाकुही उक्ति माहि कम न हुइ ते भावि उक्ति कहीयइ (भावे)

इसी प्रकार कुछ कारकों के उद्धरण स्पष्ट दृष्टव्य हैं —

(१) ज कीजइ लीजइ पढीइ गुणीय इत्यादि बोलिवइ, मुक्ति क्रिया करी उक्ति माहि ज वस्तु कर्त्ता व्यापीइ त कम्म तिहा द्वितीया। चेत्र् वटुकरइ।

(२) जेहनइ कारणि क्रिया कर्त्ता कम्म हुइ। अनइ जेह रहइ दान दीजइ, कोप कीजइ तिहा सम्प्रदानि चतुर्थी। विवेकिउ मोक्षनइ कारणि खपइ।

(३) जिहां देखिकानि जेह नइ विषइ इत्यादि इ कार नइ बोलिवइ जे कर्त्तानिउ अथवा कमनउ आधार हुई त अधिकरण। तिहा सप्तमी चेत्र् ग्रामि वसइ। किही वनइ ग्रामि।

इसी प्रकार अ य कारकों के भी उदाहरण देखे जा स ते हैं —

कुलमडन के इस ग्र थ म अनेक विशेषणों और अव्ययों की एक लम्बी सी सूची दी हु कुछ अव्यय देखिए —

आगलि, पाछलि, जिम जिम तिम तम, तणउ, किसउ, जिसउ, तिसउ अनेमउ, इसउ, सरीखउ, जेतलउ तेतलउ, एतलउ केतलउ जतना तेतला, केतला, पहिलउ पाछिलउ आगिलउ छेहिलउ माहिलउ, पुविलउ आदि इसी प्रकार के कई श द गले जा सकते हैं। उकार इनमे कई बार आया है पर तु ऐस श द कम ही हैं।

इन्हीं शब्दों के भाषा वैज्ञानिक अध्ययन का क्रिया सं० १४६६ म गुणारत्न सूरि द्वारा विरचित क्रियारत्न समुच्चय नामक रचना से की जा सकती है। इस कृति के निम्नांकित कुछ उदाहरणों द्वारा कर्त्ता कम, भावे वर्तमान, भूत, भविष्यत् काल म प्रयुक्त तत्कालीन विविध श दों का परिचय मिल सकता है। कुछ उदाहरण देखिए —

वर्तमान काल (कर्त्ता) —

१ लिखइ लिखइ जागइ करइ लिइ
२ तू कर, लिय दिय।
३ हू करउ, दिउं, लिउं

कर्मणि —

१ आपउ, मोचउ, छोपउ
२ आणइ, करइउ, लेतउ
३ खेउ गामि गिउ
४ म बोधु, म नाथु म दाघु आदि

विध्यिनिग —

१ करिउ, सजे, दउ, आदि।

आज्ञा —

१ काजउ, मावउ करउ, लिउ, दिउ हुउ आदि।

भविष्यत्‌काल —

आवसि, गावसि, खावसि।

क्रिया पद रहित —

१ मिथउ, लिखउ, नउ अमुक हयन।

भविष्यकाल —

१ करिसइ, मरिसइ, गमिइ करिसिउ।

इन रूपों में भाषा प्राचीन राजस्थानी या जूनी गुजराती का विकास स्पष्टतः [illegible] देखा जा सकता है। हूतू के प्रयोग प्राचीन है। करउं, रावउ म उ का प्रयोग तथा अ का प्रयोग भेदों में पृथक्त्व का सूचक है। विभक्तियों में हिनादा का उद्धार आज भी है। सप्तमी का ए भी मिलता है। परन्तु साथ साथ इ का मिलती है। यों तृतीया विभक्ति में इ का प्रयोग प्रायः मिल जाता है।[1] इसी प्रकार तरुणप्रभ सूरि के पडावश्यक बालावबोध और रत्नमदनगणि के प्रौढ़ गद्य द्वारा यह सहज ही अनुमान लग जा सकता है कि इन गद्य कथाओं में लेखकों की अनूठ [illegible] दिखी है। इन कथाओं के उदाहरणों में प्रथमा द्वितीया का उद्धार [illegible] शुद्ध हुआ मिलता है। इस सुन्दर कथात्मक गद्य का एक उदाहरण देखें —

[illegible] साहिब, बनराज पाट माहरा बइठाविउ। राजा सुरियश्री कि[illegible] पूछइ—तुम्हे कि दूरा सरिता ज दखु छु कनइ एवडउ [illegible] आविइ काइ। पुत्र मुख कहिया मागिओ—राजन! अ

1 पत्तन जैन भंडार ग्रन्थ सूची, पृ० २००

ससग नु विणप नही तु अम्हे वहु सगा भाई।—इसिउ सूडानू वचन साभली राजा हर्षिओ।[1]

इस उद्धरण स भाषा ज य कुछ मोटी मोटी बातो का उल्लेख इस प्रकार किया जा सकता है।

१ अ उ के बदल उ कार दीर्घ हो गया। (ऊँ) यथा—अम्हाहू

२ अ उ अ आ—सूडओ

३ कही कही केवल उ ही मिलता है।

४ छूँ प्रयोग छइ छउ क रूप म हुआ है, जो सहायक क्रिया का काय करता है। प्राचीन राजस्थानी मे सहायक क्रियापद की यह बडी प्रमुख विशेषता ह। वास्तव म यह छ १५ वी शताब्दी के बाद ही विकसित हुआ होगा, पर श्री मुंशी का मत भिन्न है।[2]

जो भी हो, यह छे आज भी जन प्रचलित है। अत यह स्वीकार किया जा सकता है कि स० १४५० के पश्चात ही छइ या छ का चलना प्रारम्भ हुआ। क्योंकि स० १४५६ म सोमसुन्दर सूरि ने इसका खूब प्रयोग किया है, जिनमें छइ नइ, हुइ आदि के प्रयोग द्रष्टव्य हैं।

इस प्रकार सस्कृत प्राकृत आदि स प्रारम्भ होने वाले इस कथा गद्य साहित्य को सबसे बडा मोड पृथ्वीच द्र के वाग्विलास नामक रचना ने दिया जिसका विवेचन किया जा चुका है। इस रचना की आडबर रहितता, काव्यात्मकता सरसता, प्रवाहात्मकता तथा समासबहुल स्थिति तथा पदो की प्रासादिकता के लिए निम्नाकित उद्धरण दिया जा रहा है, जिसस इसकी भाषा की सामथ्य का परिचय मिलेगा और गद्य काव्य की अनुप्रासात्मकता का भी।

इह चतुदश महा स्वप्न तणउ साभलउ अजुउ वचन अतिविस्तर। राणी प्रथम दीठउ गजेन्द्र। किसिउ गजन्द्र चतुदन्त, विनयवत, सप्ताग

---

१ प्रा० गु० गद्य सदर्भ श्री मुनिजिनविजय पृ० ९० ९५

२ V about 1400 I P V S 1456 (छइ) Brings to be used as an auxilary Verb Gujrati language & litrature, Page (815 16) by K M Munshi

प्रतिविम्बित, गजेन्द्र मुनि अधिष्ठित, विशाल कुम्भ स्थल, विलोलकर्णपल्लव उद्दण्ड शुण्ड, वीर वरावतंस मण्डल मण्डित मनोज मूर्त, भ्रमर गुंजन मधुकूल परिकरण मधुर वाद प्रशान्ति मद्दल जड़ नयन प्रताप प्रधान एरावण गज समान महावन, पवन आस पद, आदि, गजि‍तास्य जड़ गमी गति प्रतापी अब सिंह दीठउ हुन्तो।

विशुद्ध भाह—बलवंत पांडुर, अनुपम प्रभाकर, गहन दन्त युक्तमास मान, वानून नखा भास्वर जिह्वा जिह्वित दृढ अलोक प्रवाल, निर्मोल करनाल शोभित स्कन्ध वृषभाकार शरीरचय, प्रवर पीवर प्रकोष्ठ, बमल दल दण्डाय लोचन पाइ विरचित वरन, पद्मसम तनु मुग्ध पुच्छ छटा पूर्वी आस्फालनउ पाणपाष्णि भूमि वाजि नीराजनउ वृषाग्र गुम्फ समान विशाल जिह्वा भेद, लोल मणि तन्तु शोभ पदम अलंकृत, नवम अलंकित भावोद्ध एक सिंह दीठउ माइ।

इस प्रकार इस कृति में विभिन्न विषयों पर स्थानाधार में अच्छा बहुमत दिखाई है। निर्देश इसकी भाषा की प्रधान शब्दावली का विशिष्ट स्वरूप लगता है। जैसे

(१) अन्तः विभक्ति में प्रयुक्त उ प्रत्यय उड़ गया और उसके स्थान पर ए उ को प्रयुक्त हुआ है। उदाहरणार्थ दातु दासा मउ भी भवोदधि भवधर्मो आदि।

(२) अ उ ऊ का प्रयोग मिलता है यथा वायु म नेतु आदि

(३) क्रियापद में ए (अ°) प्रत्यय प्रयुक्त मिले हैं। परः प्रियंकर न प्रत्यय अ इ इ ए आदि रूपों में मिलते हैं।

(४) प्रत्यय मध्य प्रत्यय नहीं मिलता यथा—देखउ अन्वय, आदि

(५) कहीं कहीं अरबी फारसी शब्दों का भी प्रयोग मिलता, यथा—सुल्तान, मालिम मामालत आदि।

(६) इन गुरु रचना भाषा के रूपों की दृष्टि से एक प्रकार से, शास्त्रों पर एक अपार एक कारक भावक रचना की भी। इसमें भी अन्य भेद कर, प्रवाह किया है। शास्त्रों के उदाहरण व परिचय हैं इसके अच्छी प्रकार तुला शास्त्र में की है। यह रचना सं० १४८३ का उदाहरण है।

---

१ प्रा० गु० मा० सं० पृ० ९१०

२ गु० सा० परिषद् का पांचवां साहित्य विभाग में श्री डॉ० हजारी का मत पृ० ३१ १८

यथा—

१ जे करइ स कर्त्ता

२ जे कीजइ स कम

३ जिणइ करी क्रिया कीजइ त करण

४ जेह देवातणइ इच्छा वह रूचइ काइ जँ धरीइ माह त कारक सम्प्रदान।

५ जे हेतु अपाय विश्लेषु हुइ जे हेतु आदान ग्रहण हुइ त कारक अपादानु

६ जह कहइ जेह माझि जेह तणउ जेह तणी जेह सरइ जे कहिइ इत्यादि सम्ब ध।

७ गामि पाहि खलइ खेत्रि पवति माहि बाहिरइ इत्यादि आधार।

इस प्रकार इन्हीं म सातो विभक्तियाँ लखक न स्पष्ट की हैं। भाषा पर्याप्त सरल है।

गद्य की इन रचनाओं का अध्ययन प्रस्तुत करने पर अभ्युदय काल की रचनाओं की सम्प नता स्पष्ट परिलक्षित होती है। विभिन्न भडारो की उपलब्ध प्रकाशित अप्रकाशित सामग्री के आधार पर लेखक ने आदि कालीन हिन्दी गद्य रचनाओ के इतिहास पर जो प्रकाश डाला है, उसम कई रचनाएँ म आ सकी हों। साथ ही इन रचनाओ का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन आंशिक रूप से भी नहीं किया गया ह। मोटे रूप मं इन रचनाओ के तथा अपभ्रंशेतर काल के, प्राचीन राजस्थानी या जूनी गजराती के शब्द रूपो के पारस्परिक सम्ब ध को समझने की दृष्टि स ही इन शब्दो का परिचय कराया गया है। वास्तव मे इन रचनाओं की भाषा अपने आप म अलग स शोध का विषय है।

दिल्ली, सहारनपुर, नागोर तथा अजमेर के भण्डारों से आदिकालीन हिन्दी गद्य साहित्य की और भी कई रचनाएँ मिलने की आशा है। श्री मुनि जिनविजयजी ने भी इन रचनाओ के अतिरिक्त गद्य की कई रचनाए और मिलने की सूचना दी है जिनका अध्ययन इस कृति म नही दिया जा सका है। वस्तुत अद्यावधि जितना भी उपलब्ध गद्य साहित्य है, उसी क आधार पर गद्य का यह विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। प्राप्त रचनाओ के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आदिकालीन गद्य क्षत्र म अब भी शोध करने की पूरी-पूरी आवश्यकता प्रतीत होती ह।

आखि र काटा तीखा ऊनना तरना त वानि जीभ उज (?)—
तूसइ ।९७।
तइसउ अयिआइ पाविउ वाम्व वउ जगहा भाइ ररिमा अइसउ
वहस्पति ग्नानउ झूझइ ।९८। ।३३। आँखिरि र तु रउ नेनलु दोनउ
क्इसउ ।।९९।
जणु चाखुहु करइ भायइ विमउ—जिसउ ।१००।
पूनवहि करउ चादु पाडिउ हरिण पासन्ह घालिउ ।
दुई कपाल जिसा किआ ।१०१।
ते देखतह सवह तरणाह ।
पाविवेकरा व्दु सइ धमधम पउहि हिआ ।१०२।
घनवासही कानही वा—वह करउ सूटउ वालु ।१०३।
कें कें कतउ न खपिग्रउ कहिं जगी आंयि न मातु ।१०४।
तेन्ह र पइहिया धडिव ।३४। न जिमा भावथि ।१०५।
जणु पूनिवहि पूनवहि करा चाद कोउ इ तहि ।
करउ सुहावउ यानु सुणण म क फडिउ आया नावथि ।१०६।
तेहि करइ तलि लम्बउ पहन उठइ[१] म क त्रि सोह लायो ।१०७।
ज वाम्वा कइ प ।३६। (व) आगाह जमा (ज) पल्लनह तें तूमिउ
विनचो ।१०८।
समुदान्ह ज मुन करो मोम स जन्ह राइ पन्न । (अ[२] ?) गुहुरइ
त उपमानु करहु ।१०९।
वधि आपणा अग्रइ म वूडा वाणा नइ (?) करा वरिउ महा
अवहूरहु ।११०।
।३७। एकावलि (मत्र ?) इ मन्न वाथी मइ र इसो भाडइ ।१११।
जणु मुह चादु उलगणह[३] नखत वान सतानीम —— रा आई अइसउ
नावइ ।११२।
थण र पन्नुला ऊचा वाटुना पाणा मोनाह वरा मगल वलस जिसा
भा (२) ।३८। वहिं ।११३।
आनु कि काम्व न्वेह कराह परन्ह वारि आ (२) डु तास सोह
पावहिं ।११४।
तिवनिहि झाणि राम राइ स के (?) सा घारइ ।११५।
ज सोन्हि करइ पासन्ह तुह आयह जूपनन्ह निवाडउ करइ ।११६।

---

१ ओटइ । २ पाइहर । ३ ओलगणह ।

तर माटणु मान ।३०। उ मु (?) माणिदु मानाहु करउ एक जि हार ।११७।

म साह दगनह अइमउ आवइ अणुमाण्उ ज।—म—उ हुअउ एहु ममार ।११८।

म पुण पवहा नें शयणा पावन पइन्त्रिआ साना—ग्गा चूडा ।११९।

म देगि ।४०। तुम्हाग ज वन्त मउ आवहि कूना ।१२०।

तें र तइमा याइ वान्त पगिरा पान्न ज भावुली मइ र हान (?) मो (?) ह (?) कवि वन्न ।१२१।

अर राम्व—न्नइ मनाइ वियउ म ण्व तुम्न नगी थाती।
वउ इमउ नि (वाण)[१] हा वन्द ।१२२।

पइहलाह निरा पहहिआह वाइन्द रहू ज माह म
गि पउनु वनु पाम्वइ ।१२३।

आ—वा—आ—गविवि अर मउन्हा गान्नाग गावन
जा जमु मावन ।१२४।

तें पुगु— —टा गर आशनि ।४१। — —र नान्नि गरा माह की
पाम्बइ ।१२५।

जमायाह राम्व—गुमन (?) आगवानु अन्ना आवइ ।१२।

पाग्गि र रतुरन—जिआ ।१२७।

ज नारनि नार्शिनि ग्रउ निवामु आणिउ अ——इ——(हजार)
।१२८।

——पहुगाइ कदना ।४३। न—मु गरा न—(?) ।१२९।

त इ र गवहि वाज गरा जगाहि अवन्रा ।१३०।

पार्गनि र वन्ड ज गारा तनि गिउ (?) (रिउ) वेनु न
गावला मनि र गाटना (ग) इ बरउ ।१३१।

आ—मा———प (?) ह (?) न म साम।
धर (?) ।४४। (उर) ।१३२।

— —उ——घाव त इ पर साया ।१३३।

जहिं आवति रनि अन्नान्न हिअन अनि गुन गया ।१३४।

गुरइ म (?)——न (?) तुन्नि मरिउज वारिहि (?) म जुम (द) ।१३५।

——आ ।४५।———नु——द वान
जा वनु वन्न मन्नु मुनन ।१३६।

एह इसो गुवेस जहा आविउ पइाह ।१३७।
सो घरु रा (२) उलु वाघइ ।१३८।
अउरु भणउ की न (?) मट्ठ ता (?)मु— रुउ[1](?) ।४६।—।१३९।
——— ——— ———।१४०।
रोडें राउल—वेल मगा ।२। णो ।२। ।१४१।
आठ[2] (?) ह (?)[3] मासह जइसा जाणो ।१४२।
एउ निरु——— —ह ।१४३।
("भारतीय साहित्य" वर्ष ६ अंक ४ से केवल गद्य भाग साभार उद्धृत)

---

१ रुचइ । २ पुणु । ३ तहाँ ।

२

आराधना

[सं० १३३० मा लखेला ताडपत्र मांथी]

नानाचारि पुस्तक पुस्तिका संपुट संपुटिका टीपणा कवली उतरी ठवणी पाग दोरा प्रभति नानोपकरण अवज्ञा, अकालि पठन अतिचार विपरित कथनु उत्सूत्रप्ररूपणु अश्रद्धान प्रमतित्व आलोयइ । दर्शनाचारि देवद्रव्यु भगितु उपेक्षितु प्रज्ञाहीनत्वु जिनभुवन आसातना अधोपति चैत्यपूजा गुरुनिंदा द्रव्यविनाशभउ मसगु बिंबआसातना स्थापनाचार्यआसातना शंका आकांक्षा विचिकित्सा मिथ्या दृष्टि प्रशंसा मिथ्यादृष्टिपरिचउ ए पांच अतिचार आलोयउ । चारित्राचारि प्राणातिपात मृषावाद अदत्तादान मैथुन परिग्रह ए पांच अणुव्रत दिग्विरति भोगोपभोगविरति अनर्थदंडविरति ए तिन्नी गुणव्रत । सामायिकु देसावकासिकु पोसधु अतिथिसंविभागु ए च्यारि सिक्षाव्रत, ईत्तणइ विषयु जु काइ अतिचारु ... आसेविय‍उ सु हु आलोयइ । तपाचारि अनशन ऊनोदरिता वृत्तिसंक्षेपु रसत्यागु कायक्लेशु सलीनता षड्विध बाह्यतपतणाइ विषइ प्रायश्चित्तु विनउ वैयावृत्यु स्वाध्यायु (सु १) कायोत्सर्ग षड्विधअ-भ्यंतरतपताइ विषइ जु अनाचारु सु हु आलोयइ । वीर्याचारि सतइ बलि सतइ वीरिजि सम्यक्त्वप्रतिपत्ति करहु अरिहंतु देवता सुसाधुगुरु जिनप्रणीत धम्मु सम्यक्त्वदंडकु ऊचरहु सागार प्रत्याख्यानु ऊचरहु चऊहु सरणि पइसरहु। परमेश्वर अरहंत सरणि सकलकर्म निर्मुक्त सिद्ध सरणि संसार-परिवार समुत्तर-णयान पात्र महासत्त्वसाधु सरणि सकलपापपटलकवलनखला केवलिप्ररूपितु धम्मु सरणि सिद्ध सघ गण केवलि श्रुत आचार्य उपाध्याय सवसाधु प्रतिणी श्रावक श्राविका इह ज काइ आसातना कीधी हुती ताह मिच्छा मि दुक्कड । पुढविकाइ जीव आउकाइ जीव तेउकाइ जीव वाउकाइ जीव वणस्सइकाइजीव बेइन्द्रि तेइन्द्रि चउरिंद्रिय जलचर थलचर खचर जा जंतु ताह मिच्छा मि दुक्कड । पनर कर्मभूमि जि मनुष्य त्रीस अकर्मभूमि जि मनुष्य मोहि मिच्छामि

दुक्कड । छपन अनरद्वीपतणा मनुष्य नीह मिच्छामि दुक्कड । सात नरकतणा नारकि दशविध भवनपति अष्टविध व्यंतर पंचविध ज्योतिष्क द्विविध वैमानिक देवा हिं बहुना । दृष्ट-अदृष्ट ज्ञात अज्ञात-श्रुत अश्रुत स्वजन परजन मित्र शत्रु प्रत्यक्षि परोक्षि ज कइ जीव चतुर्गति मांहि ऊपना चतुर्गतिरी संसारि भ्रमता मइ हूमिया वंचिया साहिया मारावियां हसिया निंदिया विनासिया खामिया पाडिया चूकिया अवि भवान्तरि भवसंति भवसंस्थित भवसंचि भवकोटि मनि वचनि कायनीह सवहइ मिच्छा मि दुक्कड । अढार पापस्थान वोसिरावइ इहु सत्य प्राणातिपातु मननमानु मनइ माया मवव माया सनू लाभू प्रभु द्वेषु कलह अभ्याख्यातु रति अरति पशुय मिथ्यात्व दम्भ शल्यु परपरिवादु अढार पापस्थान त्रिविधहि मनि वचनि काइ करणि करावणि अनुमति परिहरउ । अतीतु निंदउ वर्तमानु संवरउ अनागतु पच्चक्खउ । पंचपरमेष्ठिनमस्कारु जिनशासनि सारु चतुर्दशपूर्व समुद्धारु संपादितसकलकल्याण समारू विहित दुरितापहारु क्षुद्रोपद्रवपर्वतवज्रप्रहारु लीलादलितसंसारु सु तुम्हि अनुसरहु जिणि कारणि चतुर्दशपूर्वधर चतुर्दशपूर्वसमउधिउ ध्यानु परित्यजिउ पंचपरमेष्ठि नमस्कारु स्मरहि, तउ तुम्हि विशेषि स्मरवउ अनइ परमेश्वरि तीर्थंकरदेवि इसउ भणियउ अच्छइ अनइ संसारतणउ प्रतिभउ भवकम्मिउ अनइ ऋद्धि नमस्कार इहलोकि परलोकि संपादियइ ॥ आराधना समाप्तानि ॥

यदक्षर परिभ्रष्ट मात्राहीन च यद्भवेत ।

क्षन्तव्य तद्बुध सर्वमस्य न स्खलत मन ॥

सं० १३३० वर्षे आश्विनसुदि ५ गुरावद्यह आशापल्लयाम् ॥

३

बालशिक्षामाना अवतरणो

[कर्ता – सग्राम सिंह वि० स० १३३६]

(सज्ञा प्रक्रममां)

स्वरभेदा १४ समान वर्णा १० सवर्णा १० ह्रस्व ५ दीर्घ नामीआ स्वरो १२ सध्यक्षर ४, व्यंजना ३३ वर्ण ४ पंचदशक अघोष १३ घोषवत २० ।

लिंगु ३ पुंलिंगु स्त्रीलिंगु नपुंसकलिंगु भर्ता पुंलिंगु भला स्त्रीलिंगु भलुनपुंसकलिंगु ।

(स्यादिप्रक्रममा)

सि एकवचनु औ द्विवचनु जस् बहुवचन ।

(कारकप्रक्रमर्मा)

अथ प्रयोग विभक्तिप्रतिमा—करई दियई लियइ इत्यादि वर्तमाना ॥ १ ॥

कार्जई दीजई लीजई इत्यादि वर्तमाने कर्मणि वर्तमानाया आत्मनेपदम् ।

करिज राज, दजे इत्यादि पञ्चदशवचन सप्तमी ॥ २ ॥

करि गई लई इत्यादि अनुमति (नो) पंचमी ॥ ३ ॥

कारउ लीजउ दीजउ इत्यादि पञ्चमी

लीधउ आघउं कारउ इत्यादि पगला ... ॥ ४ ५ ६ ॥

... ... ।

... ... अद्यतनी ... ।

... (...) ... ... ।

... ... इत्यादि ... ।

जई करत नई लेत जई देत, इत्यादौ क्रियानिपत्ति ।

जई कीजत, लीजत, दीजत इत्यादौ कर्मणि क्रियानिपतेरात्मनेपद ।

करिसिई, लस (मि) ई दसिई इत्यादौ नहा करई, नही
लियई नही दियई इत्यादौ भविष्यती ॥

कीजिसिई लाजिसिई, दिजिसिई इत्यादौ नही काजई नही लीजई इत्यादौ च कर्मणि भविष्यत्यात्मनेपदम् । कालि करिसई इत्यादौ श्वस्तनी ।

शिशु जिणिसई वय दायु (सउ) जीविसई इत्यादौ आशीयुक्ते भविष्यति काल ।

अथ कृत्प्रत्ययप्राप्तिमाह

करतउ, लेतउ देतउ इत्यादौ कर्तरि वर्तमान शतृशानचौ ।

कीजतउ लीजतउ दीजतउ इत्यादौ कर्मण्यशानचु ।

करणाहरू लणाहरू दणाहरू इत्यादौ वर्तमान तृणचौ ।

कीधउ दीधउ लाधउ इत्यादौ अतीत निष्ठा क्तक्तवतौ च ।

करीउ लेउ देउ इत्यादौ क्त्वा ।

करिवा लेवा देवा इत्यादौ तुम् ।

करी जाणु पत्री सकउ करिवउ लेवउ देवउ इत्यादौ कर्मणि
तव्यानीयौ ।

करणाहरू लेणाहरू इत्यादौ भविष्यति काले तुमन् ।

अथ विशेषप्रत्ययप्राप्तिमाह —

करावई करावितउ करावेसई करावतउ करावी कराविवा इत्यादौ इनतान प्रत्यया । (उक्तिप्रकम पष्ठ)

———

४

नवकार व्याख्यानम्

(संवत् १३५८ मां लखायला पुस्तक मांथी)

नमो अरिहंताणं ॥१॥ माहरउ नमस्कार अरिहंत हउ। किसा जि अरिहंत, रागद्वेषरूपिआ अरिवयरि जेहि हणिया, अथवा चउसट्ठि इंद्रसंबंधिनी पूजा महिमा अरिहइ जि उत्पन्न दिव्य विमल केवलज्ञान चउत्रीस अतिशयि समन्वित अष्ट महाप्रातिहार्यशोभायमान महाविदेहि क्षेत्रि विहरमान तीह अरिहंत भगवंत माहरउ नमस्कार हउ ॥१॥

नमो सिद्धाणं ॥२॥ माहरउ नमस्कार हउ। किसा जि सिद्ध दुष्टाष्ट कर्मक्षय करिउ, जि मोक्षि गया। आठ कर्म किसा भणियइ। ज्ञानावरणीउ १, दर्शनावरणीउ २, वेदनीउ ३, मोहनीउ ४ आयु ५ नामु ६, गोत्रु ७, अंतराउ ८ इह आठ कर्मक्षयउ करिउ जी सिद्धि गया। किसी ज सिद्धि, लोकतणाइ आग्रविभागि पंचतालीस लक्षयोजन प्रमाणि जिसउ उत्तानु छत्रु तिसइ आकारि ज सिद्धि सिला अमल परिनिर्मल जरामरण जु अजरामर स्थानु, तेह ऊपरि योजन सर्वाधिक चउवीसइमइ य विभागी जि सिद्ध अनंत गुणनीत नि छिद्रमनियइ तीहं सिद्ध माहरउ नमस्कार हउ ॥२॥

नमो आयरियाणं ॥३॥ माहरउ नमस्कार आचार्य हुउ। किसा जि आचार्य पंचविधु आचारु जि परिपालइं ति आचार्य भणियइ। किसउ पंचविधु आचारु। ज्ञानाचारु, दर्शनाचारु चारित्राचारु तपाचारु, वीर्याचारु, एउ पंचविधु आचारु जि परिपालइ ति आचार्य भणियइ। तीह आचार्य माहरउ नमस्कारु हउ ॥३॥

नमो उवज्झायाणं ॥४॥ माहरउ नमस्कार उपाध्याय हुउ। किसा जि उपाध्याय द्वादशांगी जि पढइ पढावइ। किसी ज द्वादशांगी आचारांगु १, सूत्रकृडु २ ठाणांगु ३, समवाउ ४, विवाहपन्नत्ति ५, ज्ञाताधर्मकथा ६ उपा-